



बौर सेवा मन्दिर  
दिल्ली



२३८

क्रम संख्या

काल नं.

प्रण

३६०

प्राप्ति



ज्ञानपीठ मूर्तिदेवी जैन ग्रन्थमाला [ संस्कृत ग्रन्थाङ्क ६ ]

महाकवि धनञ्जयविरचिता

# नाममाला

अमरकीर्तिविरचितभाष्योपेता

अनेकार्थनिघण्टुः एकाक्षरीकोशथ



सम्पादक

प० शम्भुनाथ त्रिपाठी व्याकरणाचार्य, माननीर्थ

## भारतीय ज्ञानपीठ काशी

प्रथम आवृत्ति  
१००० प्रति

चैत्र, वीरनि० स० २४७६  
वि० सं० २००७  
अप्रैल १९५०

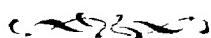
{ मूल्य  
साढे तीन रुपये

# भारतीय ज्ञानपीठ काशी

स्व० पुण्यश्लोका माता श्री मूर्तिदेवी की पवित्र स्मृति मे  
तन्मुपुत्र मेठ शान्तिप्रसाद जी द्वाग  
संस्थापित

## ज्ञानपीठ मूर्तिदेवी जैन ग्रन्थमाला

उम ग्रन्थमाला म प्राकृत मस्कृत अपभ्रंश हिन्दी कल्प तामिल आदि प्राचीन भाषाओं म  
उपलब्ध आगमिक दायनिक पांगणिक मार्तिन्यक और निर्वाचक आदि विविध विषयों  
जनमाहिन्य का अनुमन्धानपूर्ण सम्पादन, उमका मत और यथासम्भव अनवाद  
आदि क साथ प्रकाशन होगा। जन भवारो की मन्त्रिया यितालख-  
मग्रह विद्याट विद्वानों क अध्ययनगृन्थ और लोकाहितकारी  
जन मार्तिन्य गृन्थ भी उमी गृन्थमाला मे प्रकाशित होगे।



ग्रन्थमाला सम्पादक और नियामक (संस्कृत विभाग)  
प्रो० महेन्द्रकुमार जैन, न्यायाचार्य, जैन-प्राचीनन्यायतार्थ, आदि  
बौद्धदर्शनाध्यापक संस्कृत महाविद्यालय  
हिन्दू विश्वविद्यालय काशी

## संस्कृत ग्रन्थाङ्क ६

प्रकाशक—

अयोध्याप्रमाद गोयलीय

मन्त्री, भारतीय ज्ञानपीठ काशी,

दुर्गाकुण्ड रोड, बनारस सिटी

मुद्रक—पृष्ठीनाथ भार्गव, भार्गव भूषण प्रेस, गायत्राट, काशी।

स्थापनावद  
फाल्गुन कृष्णा ९  
वीर नि० स० २४७०

{ सर्वाधिकार सुरक्षित

{ विक्रम म० २०००  
१८ फरवरी १९४४

नाममाला



स्व० मुनिंदेवी, मातेश्वरी सेठ शान्तिप्रसाद जैन



**JNANA-PITHA MOORTI DEVIJAIN GRANTHAMALA**

SANSKRIT GRANTHA No 6

# **NAMAMALA**

BY

**MAHAKAVI DHANANJAYA**

*With the*

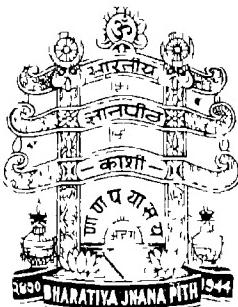
## **BHASHYA**

OF

**AMARAKIRTI**

AND

The Anekartha mabhantu and Ekakshari Kosha



EDITED WITH NOTES

*By*

**PUSSHAMBHU NATHA TRIPATHI**

*Vigakaranacharya Supta Tuatha*

Published by

**BHARATIYA JNANA-PITHA KASHI**

*First Edition*  
1000 Copies

CHAITRA VIRASAMVAT 2156  
VIGRAMA SAMVAT 2007  
APRIL 1950

*Price*  
Rs 3.8

# BHARATIYA JNANAPITHA KASHI

*Founded by*

**SETH SHANTI PRASAD JAIN**

*In memory of his late benevolent mother*

**SHRI MOORTI DEVI**

**JNANA-PITHA MOORTI DEVI JAIN GRANTHAMALA**

In this Granthamala critically edited, Jain agamic, Philosophical, Pauranic literary, historical and other original texts available in Prakrit, Sanskrit Apabhransha, Hindi, Kannada, Tamil etc will be published in their respective languages with their translations in modern languages

*AND*

Catalogues of Jain Bhandaras, inscriptions, studies  
of competent scholars and Jain literature of  
popular interest will also be published

---

**GENERAL EDITOR OF THE SANSKRIT SECTION**

**Prof MAHENDRA KUMAR JAIN**

*NY DY ICHI TRY I, JAIN PRACHINI NYAYI TIRTHI Etc*

**Professor of Bauddha Darshana, Sanskrit Mahavidyalaya**

*Banaras Hindu University*

---

**SANSKRIT GRANTHA No. 6**

---

*Publisher*

**AYODHYA PRASAD GOYALIYA**

*SECY*

**BHARATIYA JNANAPITHA KASHI**

DURGAKUND ROAD, BANARAS CITY

*Founded in*  
Falguni Krishna 9, }  
Vir Sam 2470 }  
*All Rights Reserved* }  
} Vikram Samvat 2000  
} 18th Feb 1944

## FOREWORD

The Bharatiya Jnanapitha, Banaras, founded by Shri Shantiprasad Jain to perpetuate the memory of his mother Murtidevi, has undertaken an ambitious plan of scholarly publications dealing with all aspects of Ancient Indian Culture with a very broad outlook and vision, and has already issued a few works in various languages such as Sanskrit, Prakrit, Pali etc. The undertaking has secured a learned scholar of proved ability in Pandit Mahendra Kumar, Nyayacharya, of the Sanskrit Mahavidyalaya of the Banaras Hindu University as a General Editor. The Jnanapitha has already published a few works and has a number of others in active preparation.

The present volume contains two small works of the famous lexicographer Dhananjaya. The first is called NAMAMALA, a collection of synonyms, while the other is called ANEKARTHA—NAMAMALA, recording words with plurality of senses. The first work contains just 200 stanzas, while the other is smaller still. The most important feature of the first work is that it publishes for the first time the Bhashyas of AMARAKIRTI, who gives etymological explanations of each and every word in the work, and adds a few more synonymous words from his own observation. His Bhashyas follows the same methods as are used by Ksurasvamin in his famous commentary on AMARAKOSA. The entire work is very carefully edited with appropriate references to authorities by Pandit Shambhunath Tripathi, a Saptatirtha and also a Vyakaranacharya of repute. On reading his foot-notes, I often felt that Pandit Tripathi excels the Bhashyakara both in ingenuity and accuracy, nay, I would go further and say that his etymological explanations are happier still. I am sure the scholars will admire his work in the foot-notes.

The volume is further equipped with several indexes. They include naturally the word-indexes of both the works edited, but there are in addition index recording additional words from Amarakirti's Bhasya, a list of Yaugika words, a list of works and authors cited and a list of quotations cited in the work, all this being done by Pandit Mahadeva Chitravedi, Vyakaranacharya. In fact the editorial part of the volume is as thorough as is humanly possible, and I have nothing but high admiration for the ability of Pandit Mahendra Kumar, the General Editor, in securing such a team of scholars to produce this volume.

Banaras Hindu University  
6th September 1949



P L V A I D Y A, M A , D Litt,  
Mayurbhanj Professor and Head of The  
Department of Sanskrit & Pali.

## प्राकृकथन

(हिंदी अनुवाद)

अपनी पूज्य माता मूर्तिदेवीजी की स्मृति के लिए साहुशान्तिप्रसाद जी जैन द्वारा संस्थापित भारतीय ज्ञानयोग बनारस ने विद्वत्तापूर्ण प्रकाशनों की एक उत्साहवर्धक योजना हाथ में ली है। प्राचीन भारतीय संस्कृत के विशाल दृष्टि व कल्पना वाले सभी अगों का प्रकाशन इस योजना के अन्तर्गत हैं तथा अब तक इस सम्पर्क से संस्कृत, प्राकृत, पाली, आदि विभिन्न भाषाओं के कर्तिपय ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके हैं। इस योजना के सम्पादन के लिए काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के संस्कृत महाविद्यालय के सुयोग्य विद्वान् प० महेन्द्रकुमार न्यायाचार्य, प्रधान सम्पादक के रूप में प्राप्त हैं। ज्ञानपीठ से अब तक कई एक ग्रन्थ प्रकाशित हुए हैं और कई एक प्रकाशन के लिए तैयार हैं।

वर्तमान ग्रन्थ में प्रसिद्ध कोशकार धनञ्जय के दो कृतियाँ सम्मिलित हैं। पहली नाममाला कहलाती है जिसमें पर्यायवाची शब्दों का संथह है और दूसरी अनेकार्थ नाममाला, जिसमें अनेक अर्थ-बोधक शब्दों का संग्रह है। पहली कृति में २०० श्लोक हैं जब कि दूसरी कृति उसमें काफी छोटी है। प्रथम कृति का सम्पूर्ण में उत्त्लेखनीय विज्ञेषता यह है कि इस पर निखा गया अमरकोटि का भाष्य पहले पहले प्रकाश में आ रहा है। अमरकोटि ने नाममाला के प्रत्येक शब्दों की व्युत्पत्ति देकर स्पष्टीकरण किया है आर अपनी दृष्टि में आए कुछ और पर्यायवाची शब्दों को शामिल कर दिया है। उनके भाष्य की अद्वितीयता अमरकोश की प्रसिद्धिटीका में क्षीरस्वामी ने अपनायी है।

सम्पूर्ण कृति का सम्पादन स्थाननामा पण्डित शम्भुनाथ त्रिपाठी व्याकरणाचार्य सप्ततीर्थ ने बड़ी सावधानी से तथा प्रभाणों का उपयुक्त उद्धरण देते हुए किया है। उनकी टिप्पणियों का अध्ययन करने से, मुझे अनेक बार प्रतीत हुआ है कि पण्डित त्रिपाठी—युवित और शुद्धि दोनों में कहीं-कहीं भाष्यकार को भी मात कर गये हैं, इतना ही नहीं, उनके व्युत्पत्ति संबन्धी स्पष्टीकरण और भी अच्छे हैं। मुझे विश्वास है कि विद्वान् लोग टिप्पणी में त्रिपाठी जी के प्रयत्न को प्रशंसा करेंगे।

ग्रन्थ में अनेक अनुक्रमणिका लगा दी गई हैं। उनमें सम्पादित दोनों कृतियों की शब्द सूची का सर्वमिलित होना तो स्वाभाविक ही है परन्तु इसके अतिरिक्त अमरकोटि के भाष्य के अनिवित शब्दों की सूची, प्रोग्रामिक शब्दों की सूची, उद्धृत ग्रन्थ और ग्रन्थकर्ताओं की सूची तथा ग्रन्थ में उद्धृत वाक्यों की सूची भी सर्वमिलित की गई है। यह सब पण्डित महादेव जी चतुर्वेदी व्याकरणाचार्यने किया है। सचमुच म ग्रन्थ का सम्पादकीय भाग उतना पूर्ण बना दिया गया है जितना मानवी शक्ति में सम्भव था। और इस सब के लिए मेरे प्रधान सम्पादक पण्डित महेन्द्रकुमार न्यायाचार्य की योग्यता की संरक्षणा करता है जिन्होंने ऐसे ग्रन्थ के प्रकाशन में इस प्रकार की विद्वन्मण्डली को एकत्रित किया है।

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय  
६ सितम्बर, १९४९

पी० एल० वेद  
एम० ए० डॉ० लिट०  
मदररभज प्रोफेसर तथा  
अध्यक्ष, संस्कृत पाली विभाग।

## प्रस्तावना

"यद्बद्रहृणि निष्णात परत्रद्यात्रिगच्छति"—ब्रह्मविनु०

शब्दग्रन्थ में पारगत व्यक्ति परब्रह्म की प्राप्ति कर सकता है। यह सिद्धान्त इस बात को सूचना देता है कि साधक को पहले शब्दशक्ति और उसकी मर्यादा तथा भाव का ज्ञान आवश्यक है। यदि उसे शब्द के वाच्यार्थ भावार्थ और तात्पर्यार्थ की प्रक्रिया का बोध नहीं है तो वह भटक सकता है। वस्तुत शब्द भावों के टोने का एक लगड़ा बहन है। जब तक सकेतप्रहण न हो तब तक उसको कोई उपयोगिता ही नहीं है। एक ही शब्द सकेतभेद से भिन्न अर्थों का वाचक होता है। इसीलिए दर्शनशास्त्रों में एक पक्ष यह भी उपलब्ध होता है कि शब्द केवल वक्ता को विवक्षा को सूचित करते हैं, पदार्थ के वाचक नहीं हैं। 'धृ' शब्द का सकेत वक्ता ने जिस रूप में जिस श्रोता को ग्रहण करा दिया है उसी अभिप्राय का द्वातन वह शब्द उस श्रोता को करा देगा। शब्द विद्यमान अर्थ को भी कहता है और अविद्यमान को। एक खरविषाण भी शब्द है जिसका अखड़ वाच्य पदार्थ इस सार में नहीं है और घट शब्द भी है जिसका वाच्य घड़ा मौजूद है। अन शब्द के मम्बन्ध में यह निश्चय करना कि—यह शब्द अर्थवाची है और यह अनर्थवाची-टेक्सी खीर है। फिर भी शब्दिकों ने यह प्रयत्न किया है शब्द के सार्थकत्व और अनर्थकत्व का विवेक हो जाय।

उसका मुख्य उपाय है शक्तिप्रह या सकेतप्रहण। जिस अर्थ में जिस शब्द का सकेतप्रहण होता है वह उस अर्थ का वाचक हो जाता है। यह सकेत कब किसने ग्रहण कराया इसका निर्णय कर्त्तन है। देश्वर को सकेत ग्रहण कराने के लिए घमोटना श्रद्धा की वरतु है। उसका इतना ही अर्थ है कि वृद्धपरम्परा से शब्द सकेत का ग्रहण बराबर होता आया है और वह अनादि है। उसमें विशेष हेर फेर होकर भी सामान्यतया सकेत की परम्परा अनादि है। जब से यह जीव है तभी से शब्दसकेत है। इस सकेतप्रहण के उपाय निम्न लिखित हैं—

"शक्तिप्रह व्याकरणोपमानकोशानवाक्याद् व्यवहारनन्तः ।

वाक्यम्य शोपाद् विवृत्वदिनि मानिष्यन् मिद्धपदम्य वृद्ग ॥"

अर्थात्—व्याकरण, उपमान, कोश, आप्तवाक्य, व्यवहार, वाक्यशोष, विवरण और प्रसिद्ध शब्दके सान्निध्य से सकेत प्रहण होता है। इनमें व्याकरण से यौगिक शब्दों का व्युत्पत्ति द्वारा सकेत प्रहण हो भी जाय पर रुढ़ और योगरूढ़ शब्दों का सकेत प्रहण व्याकरण से नहीं हो सकता। अन्तत कोश ही एक ऐसा उपाय वचता है जिसमें सभी प्रकार के शब्दों का सकेत-प्रहण हो जाता है।

कोश अर्थात् खजाना या भडार। व्याकरण से मिद्ध या वृद्धपरम्परा से प्रसिद्ध केसे भी यौगिक रुढ़ या योगरूढ़ आदि शब्दों का अनेकार्थ के साथ सप्रह कोश में होता है। भाषा वही समृद्ध और जीवित समझी जाती है जिसका शब्द भडार पर्याप्त हो और जिसमें व्यवहार और परमार्थ के लिए उपयोगी सभी शब्द विद्यमान हो। जिसमें अन्य भाषाओं के या विदेशी शब्दों के पचाने की या उन्हें स्व-स्वरूप करने की सामर्थ्य हो। इस दृष्टि से सकृत भाषा उतनी समृद्ध नहीं बन सकी। इसका कारण यह रहा है कि इस भाषा पर एक वर्ग का प्रभुत्व रहा और उसने इसकी पाचन शक्ति को धर्म अधर्म के कल्पित बन्धन से जकड़ दिया था। उस वर्ग ने उस युग में प्रचलित अपभ्रंश और प्राकृत बोलियों का जो उस समय की जनबोलिया थीं उच्चारण करना पाप घोषित किया था। फिर भी सकृत की जो प्रकृति प्रस्तुत उपर्युक्त अधर्म के योग से शब्दशोत्पादन शक्ति थी

उसीके कारण यह बन्धनबद्ध होकर भी विद्वद्भोग्य अवश्य बनी रही। संस्कृत को लोकभाषा का पद या सबकी छोली होने का सौभाग्य नहीं मिल सका। इस भाषा सम्बन्धी धर्मधर्म विचार ने संस्कृत के कोशागार को भी सीमित कर दिया।

भाषा के एकाधिकारियों ने तो यहा तक कह डाला है कि अपभ्रंश या अन्य लोकभाषा के शब्दों में वाचक शक्ति ही नहीं है। यष्टि का अपभ्रंश लट्ठी या लाठी है। ये लट्ठी या लाठी शब्द में वाचकशक्ति स्वीकार नहीं करना चाहते। इनका कहना है कि वाचकशक्ति तो 'यष्टि' शब्द में ही है। लट्ठी या लाठी शब्द सुनकर जो श्रोता को लाठी पदार्थ का ज्ञान होता है उसकी विधि इस प्रकार है—प्रथम ही श्रोता लाठी शब्द को सुनकर संस्कृत 'यष्टि' शब्द का स्मरण करता है और किर उस 'यष्टि' शब्द से पदार्थबोध होता है। अर्थात् ऐसे श्रोता को जिसने स्वन्न में भी 'यष्टि' शब्द नहीं सुना उसे भी लाठी शब्द से पदार्थ बोध के लिए संस्कृत 'यष्टि' शब्द का स्मरण आवश्यक है।

इस भाषाधारित वर्णप्रभुत्व से संस्कृत भाषा एक विशिष्ट वर्ग की भाषा बन कर रह गई। पा० महाभाष्य के पृष्ठशा आह्वान में लिखा है कि—“तस्माद् ब्राह्मणेन न म्लेच्छन वै, नापभाषित वै, म्लेच्छो ह वा एष अपग्रन्तः”। अर्थात् ब्राह्मण को न तो म्लेच्छ शब्दों का व्यवहार करना चाहिए और न अपभ्रंश कहा ही। अपशब्द म्लेच्छ है। अपशब्द का विवरण भी वहाँ यह दिया है—“गदि तावच्छदोपदेश यित्वे, गौग्नियेन्तस्मिन्नपुर्वपदित्वे गम्यत एतद् गाव्यादयोऽग्नद्वा इति।” अर्थात्—गौ शब्द है और गावी गेया आदि अपशब्द है।

यद्यपि भाषा को संस्कृत रखने के लिए व्याकरण का संस्कार आवश्यक है तभी वह एक अपने निश्चित रूप में रह सकती है, लिंग और वचन का अनुशासन भी इसीलिए आवश्यक होता है, परन्तु उसके उच्चारण में किसी जाति विशेष का या वर्ग विशेष का अधिकार मानने से उसकी व्यापकता तो रक्त ही जाती है। नाटकों में स्त्री, शूद्रों तथा दामों से प्राकृत भाषा का बुलबाया जाना उक्त रुद्धि का ही साक्षी है।

इतना ही नहीं, धर्मक्षेत्र में साधु शब्द अर्थात् संस्कृत शब्द का उच्चारण ही पुण्य माना गया। इसका यह महज परिणाम था कि धर्म का ठेका भी भाषा प्रभुत्व के द्वारा एक वर्ग विशेष को मिला। हुआ भी यही। धर्म का अधिकार और उससे आर्थिक सम्बन्ध एक वर्ग का हो गया।

इस सम्बन्ध में मौनिक क्रान्ति महावर्मण महावीर और बुद्ध ने की। उनने भाषा के इस कर्तपत बन्धन को तोड़ कर जनभाषा में धर्म का उपदेश दिया और स्त्री शूद्र तथा पामर से पामर व्यवितयों के लिए धर्म का क्षेत्र खोला। धर्म के उच्च पद के लिए जाति का कोई बन्धन इनने स्वीकार नहीं किया। इस भाषाक्रान्ति से प्राकृत भाषाओं का विकास हुआ। यह नहीं है कि प्राकृत भाषाओं व्याकरण और लिगानुशासन से मुक्त हो। उनके अपने व्याकरण हैं, अपने नियम हैं, जिनके अनुसार वे पल्लवित युक्तिपूर्ण और फलित होती रही हैं।

महावीर और बुद्ध के काल से लेकर इसा की तीसरी सदी तक प्राकृत भाषाओं को गति मिलती रही। अशोक के शिलालेख प्राकृत भाषा में उपलब्ध होते हैं। शासनादेश प्राकृत भाषा में चलते रहे हैं। पुन संस्कृत युग में इन भाषाओं की गति मन्द पड़ी। इस युग में जैन और बौद्ध आचार्यों ने भी ग्रन्थरचना संस्कृत में ही की। यही कारण है कि दोनों के विपुल साहित्य से संस्कृत का कोशागार भरा हुआ है। वार्षिक क्षेत्र में उथल पुथल तो नागार्जुन विग्रहाग सम्बन्धद्वारा सिद्धासेन अकलक आदि के ग्रन्थों से ही भरी। तात्पर्य यह कि धर्मण परम्परा ने मध्यकाल में संस्कृत भाषा के विकास में भी अपना महत्वपूर्ण योगदान किया।

## प्रस्तुत ग्रन्थ—

नाममाला कोश का एक सुन्दर और व्यवहारोपयोगी आवश्यक शब्दों से समृद्ध ग्रन्थ है। महाकवि धनञ्जय ने २०० श्लोकों में ही संकृत भाषा के प्रमुख शब्दों का चयन कर गागर में सागर भर दिया है। शब्द से शब्दान्तर बनाने की इनकी अपनी निराली पद्धति है। जैसे पृथिवी के नामों के आगे 'धर' शब्द जोड़ देने से पर्वत के नाम, 'मनुष्य' के नामों के आगे 'पति' शब्द जोड़ देने से राजा के नाम, 'वृक्ष' के नामों के आगे 'चर' शब्द जोड़ने पर बन्दर के नामों का बन जाना आदि।

इसपर अमरकीर्ति विरचित भाष्य सर्वप्रथम प्रकाशित किया जा रहा है। इस भाष्य में प्रत्येक शब्द की व्याकरणसिद्ध व्युत्पत्ति सूत्रनिर्वेश पूर्वक बताई गई है। उणावि से सिद्ध हो या अन्य रीति से पर कोई भी शब्द निवृत्पत्ति नहीं रह पाया है। इन व्युत्पत्तियों की प्रामाणिकता के लिए महापुराण, पद्मनन्दि शास्त्र, यशस्तिलक चम्पू, नीतिवाक्यामूल, द्विसन्धानकाव्य, बृहत्प्रतिक्रमण भाष्य, महाभारत, सूक्तिमुक्तावली, शब्दभेद, अनेकार्थधनिमञ्जरी, अमरसिंह भाष्य, आशाधर महभिषेक, नीतिसार, शाक्षत, हैमीनाममाला आदि ग्रन्थों तथा यश कीर्ति, अमरसिंह, आशाधर, इन्द्रनन्दि, क्षीरस्त्वामी, पद्मनन्दि, श्रीभोज, हलायुध आदि ग्रन्थकारों को नाम निर्देशपूर्वक प्रमाणकोटि में उपस्थित किया है। अनेक व्युत्पत्तिया तो अमरकीर्ति की कल्पना के अच्छे उदाहरण हैं। यथा—

"प्रियों क्षुद्रजलवोदय स्पर्शेनि मरुत्" अर्थात् जिसके स्पर्श से क्षुद्र जन्तु मर जाय वह मरुत् है।

"न नन्दति भ्रातृजाया यस्या मत्या सा ननान्दा" जिसकी मौजूदगी में भौजाई खुश न हो वह ननादा—ननद है।

"यज्ञाना पशुकारणलक्षणानामरि यज्ञारि" अर्थात् पशुयज्ञ का विरोधी महादेव हैं। आदि।

इसके साथ ही एक अनेकार्थ निघण्टु भी मुद्रित किया गया है। इसके अन्त में निम्नलिखित पुष्टिका लेख है—“इति महाकविधनञ्जयकृते निघण्टुसमये शन्दसकोर्णे अनेकार्थप्रखण्डो द्वितीय-परिच्छेद ।” इसकी एक मात्र अशुद्धतम प्रति प० जुगलकिशोरजी मुख्तार अधिष्ठाता वीरसेवा-मन्दिर से प्राप्त हुई थी। रचना शैली आदि से यह निश्चय पूर्वक नहीं कहा जा सकता कि यह उन्हीं धनञ्जयकी कृति है, यद्यपि पुष्टिका वाक्य में स्पष्ट रूपसे धनञ्जय का उल्लेख है। इसके साथ ही एक ज्ञानकर्तृक एकाक्षरी कोष का भी मुद्रण किया है। इसकी हस्तलिखित प्रति भा वीर-सेवा-मन्दिर से ही प्राप्त हुई थी।

## प्रस्तुत संस्करण—

अमरकीर्तिकृत भाष्य की एकमात्र अशुद्ध प्रति ऐलक पश्चालाल सरस्वती भवन झालरा-पाटन से प्राप्त हुई थी। इसीके आधार से इसका सम्पादन प० शम्भुनाथजी त्रिपाठी ने किया है। संस्करण में जो अनेक परिशिष्ट हैं वे सब प० महादेवजी चतुर्वेदी व्याकरणाचार्य ने तयार किये हैं। टिप्पणिया प० शम्भुनाथ जी त्रिपाठी ने बड़े परिक्षम से लिखी हैं। मुझे यह लिखते हुए आनन्द होता है कि उनके सर्वतोमुखी अगाध पाण्डित्य का परिचय टिप्पणी में पद पद पर मिलता है।

## ग्रन्थकार

### [ महाकवि धनञ्जय ]

नाममाला के कर्ता महाकवि धनञ्जय हैं। इन्होने स्वयं अपने किसी ग्रन्थ में अपने समय आदि के बारे में निर्देश नहीं किया है। ये गृहस्थ थे। द्विसन्धानकाव्य के अन्तिम इलोक की व्याख्या में उसके टीकाकार ने धनञ्जय के पिता का नाम वसुदेव, माता का नाम श्रीदेवी और गुरु का नाम दशरथ सूचित किया है। इनकी ख्याति 'द्विसन्धानकवि' के नाम से थी। नाममाला के अन्त में पाया जानेवाला यह इलोक स्वयं इसका साक्षी है --

"प्रमाणमकलङ्घस्य पूज्यपादस्य लक्षणम् ।

द्विसन्धानकवे काव्य रत्नत्रयमपश्चिमम् ॥"

अर्थात्-अकलङ्घदेव का प्रमाण शास्त्र, पूज्यपाद का लक्षण-व्याकरण शास्त्र और द्विसन्धानकवि का द्विसन्धानकाव्य ये तीनों अपूर्व रत्नत्रय हैं। यह इलोक नाममाला के भाष्यकार अमरकोटि के सामने था, उनने इसकी ध्यालया भी की है। इसमें इनका उप-नाम 'द्विसन्धानकवि' सूचित किया गया है। ठोक भी है, क्योंकि महाकवि धनञ्जय की सर्वश्रेष्ठ चमत्कारिणी कृति द्विसन्धानकाव्य ही है। वरदिवरज सूरि ने पादर्वनाय चरित के प्रारभ में द्विसन्धान काव्य की प्रशंसा करते हुए लिखा है --

'अनेकभेदसन्धाना खनन्तो हृदये मुहु ।

वाणा धनञ्जयोन्मुक्ता कर्णस्येव प्रिया कथम् ।'

अर्थात् धनञ्जय के द्वारा कहे गए अनेक सन्धान-अर्थभेद वाले और हृदयस्पर्शी वचन कानों को ही प्रिय क्षेत्र लगाए जाने के द्वारा छोड़े जाने वाले अनेक लक्षणों के भेदक मर्मभेदों वाण कण को प्रिय नहीं लगते ?

द्विसन्धान काव्य अपने समय में पर्याप्त प्रसिद्धि प्राप्त कर चुका था। इसका उल्लेख धारा-धीश भोजगञ्ज के समकालीन आचार्य प्रभाचन्द्र ने अपने प्रमेयकमलमार्त्ताड (पृ० ४०२) में किया है।

जल्हण (११वीं सदी) विरचित सूक्ति मुक्तावली में राजशेखर के नाम से धनञ्जय की प्रशंसा में निम्नलिखित पद्य उद्भूत है --

'द्विसन्धाने निपुणता स ता चन धनञ्जय ।

यया जात फल तम्य सता चक्रं धनञ्जय ॥'

इस इलोक में राजशेखर ने धनञ्जय के द्विसन्धानकाव्य का मनोमुग्धकर सरणि से उल्लेख किया है।

धनञ्जय कवि के द्वारा एक विषापहार स्तोत्र भी बनाया गया है। यह अपने प्रसाद ओज और गाम्भीर्य के लिए प्रसिद्ध है। कहते हैं कि यह स्तोत्र कवि ने अपने सर्वदृष्ट पुत्र का विष उतारने के लिए बनाया था।

### समयविचार-

इनके समय निर्णय के लिए निम्नलिखित प्रमाण हैं --

- (१) प्रमेयकमलमार्त्ताड आदि के रचयिता प्रभाचन्द्र (ई० ११वीं सदी) ने इनके द्विसन्धान-काव्य का उल्लेख किया है अत ये ११वीं सदी के बाद के विदान् तो नहीं हैं।

- (२) इसी तरह बादिराज सूरि ( सन् १०३५ ) ने पाश्वनाथ चरित में धनञ्जय और द्विसंधान का निर्देश किया है अत ये ११वीं सदी के बाद के नहीं हैं ।
- (३) जहाण ( १२वीं सदी ) ने राजशेखर के नाम से सूक्ष्मिकावली में जो पट्ट उद्भृत किया है, वह राजशेखर काश्यमीमांसाकार राजशेखर है । इनका उल्लेख सोमदेव (ई० ९६०) के यशस्तिलक चम्पू में पाया जाता है अत राजशेखर का समय ई० १०वीं सदी सुनिश्चित है । राजशेखरके द्वारा प्रशस्ति होने के कारण धनञ्जय का समय १०वीं सदी के बाद क़ नहीं हो सकता ।
- (४) डॉ० हीरालालजी ने षट्हंडागम प्रथम भाग की प्रस्तावना (पृ० ६२) में यह सूचित किया है कि जिनसेन के गुरु वीरसेन स्वामी ने ध्वला टीका (पृ० ३८७) में अनेकार्थ नाममाला का निष्ठलिष्ठि इलोक प्रमाणरूप में उद्भृत किया है --

“हेतावेव प्रकाराच्यै व्यवच्छेदे विपर्यये ।

प्रादुभर्वि ममातौ च इतिशब्द विदुर्बुधा ॥”

यह इलोक अनेकार्थ नाममाला का है । ध्वलाटीका वि० स० ८७३ सन् ८१६ में समाप्त हई थी अत धनञ्जय का समय ९वीं सदी के बाद नहीं हो सकता ।

- (५) धनञ्जय ने अकलक देव का उल्लेख ‘प्रमाणमकलङ्कस्य’ इलोक में किया है । अकलक का समय ई० ७वीं सदी निश्चित है, अत धनञ्जय ७वीं सदी से पूर्व के नहीं हो सकते ।

सस्कृत साहित्य का सक्षिप्त इतिहास के लेखकद्वय ने धनञ्जय का समय ई० १२वा शतक का माय निर्धारित किया है । (पृ० १७४) उनने अपने इस मत की पुष्टि के लिए डॉ० के० बी० पाठक महाशय का यह मत<sup>१</sup> भी उद्भृत किया है कि--“धनञ्जय ने द्विसंधान महाकाश्य की रचना ई० ११२३ और ११४० के मध्य में की है” । पर उपरोक्त प्रमाणों के आधार से धनञ्जय का समय ई० ८ वीं सदी का अन्त और नवीं का पूर्वार्ध सिद्ध होता है । जल्हण की सूक्ष्मिकावली में जो ई० १२वीं सदी की रचना है, राजशेखर के नाम से उद्भृत ‘द्विसंधाने निपुणता’ श्लोक काश्यमीमांसाकार राजशेखर का ही हो सकता है, न कि प्रदंष्टकोश के कर्त्ता राजशेखर का । सस्कृत साहित्य के इतिहास के लेखकद्वय यह० आन्ति कर दीठे हैं, वे स्वयं जल्हण को १२ वीं सदी का विद्वान् लिखकर भी उसमें उद्भृत राजशेखर को १४वीं सदी का जैन राजशेखर बताते हैं ।

अत धनञ्जय का समय उपर्युक्त प्रमाणोंके आधार में ई० ८वीं का उत्तर भाग और नवीं का पूर्व भाग प्रमाणित होता है ।

### भाष्यकार अमरकीर्ति-

महापण्डित अमरकीर्ति ने नाममाला के भाष्य के अन्त में यह पुलिपका वाक्य लिखा है ।--“इति महापण्डितश्रीमद्मरकीर्तिना त्रैविद्येन श्री ऐन्द्रवशोत्पन्नेन शब्दवेदेषां कृताया धनञ्जयनाम-मालाग्रां प्रथमकाण्ड व्याख्यातम्” इससे इतना ही ज्ञात होता है कि अमरकीर्ति ‘त्रैविद्य’ उपाधि से विभूषित थे और वे सेन्द्रवश (सेनवश) में उत्पन्न हुए थे ।

इन्होंने अपने को ‘शब्दवेदा’ उपाधि से अलगकृत किया है ।

मंगल इलोकों में पूज्यपाद अकलङ्क विद्यानन्द और समन्तभाई के साथ ही साथ एक कत्याण-

१ इसी के आधार से कल्पद्रुकोश की प्रस्तावना ( P XXXII ) में श्री गमावतार शर्मा ने भी भी धनञ्जय का समय १२वीं सदी लिखा है ।

कीर्ति को भी नमस्कार किया है। इन्होंने प्रन्थ के बीच में जहा आवश्यकता भी नहीं है वहां भी अपना नाम देने में सकोच नहीं किया है। कई स्थानों पर धनञ्जय के श्लोकों की उत्थानिका में भी “सम्प्रति भन्त्यवर्गं आरभ्यते अमरकोर्तिना” (पृ० १३) आवि लिखा है। जो स्पष्टत, भ्रम उत्पन्न करता है। एक जगह तो धनञ्जय के इस श्लोकाश की व्याख्या करते हुए स्वयं अपना ही नाम लिख दिया है—“वारिधिवर्ष्यंते धनञ्जया। अवनु डवार्नी वारिधिवर्ष्यंते कथ्यते। केन भाष्यकर्त्रा श्रीमद्भरकोर्तिना। स्पष्टतया यहा ‘केन’ का उत्तर ‘धनञ्जयेन’ होना चाहिए था।

अमरकोर्ति नाम के तीन विद्वानों का पता लगता है—

(१) ‘छक्कम्सोवएस’ आदि प्रन्थों के रचयिता अमरकोर्ति<sup>१</sup>। इन्होंने वि० स० १२४७ भादो सुदी १४ के दिन छक्कम्सोवएस प्रथ समाप्त किया था। अर्थात् ये ईसदीय १२ वीं सदी के अन्तिम भाग और तेरहवीं के प्रारम्भ में विद्यमान थे। ये असितगति आचार्य की परम्परा में हुए हैं। इनकी गृह परम्परा यह है:—असितगति, शान्तिषेण, अमरसेन, श्रीषेण, चन्द्रकोर्ति और चन्द्रकीर्ति के शिष्य अमरकोर्ति।

(२) वर्धमान के प्रगृह अमरकोर्ति। इनकी परम्परा इम प्रकार है<sup>२</sup>। . देवेन्द्र विशालकोर्ति, शुभकोर्ति, धर्मभूषण, अमरकोर्ति, . धर्मभूषण वर्धमान। वर्धमान ने शक संवत् १२९५ वैशाख सुदी ३ बुधवार को धर्मभूषण की निषदा बनवाई थी। इस शिलालेख के अनुसार अमरकोर्ति का समय शक १२५० के आसपास सिद्ध होता है। ये ईसदीय १४वीं सदी के विद्वान् थे। इनके इस समय का समर्थन शक १३०७ में उत्कीर्ण विजयनगर के शिलालेख से भी होता है।

(३) दशभक्त्यादि महाशास्त्र के रचयिता वर्धमान के समकालीन, विद्यानन्द के पुत्र विशालकोर्ति के सधर्मा अमरकोर्ति। इनके सम्बन्ध में दशभक्त्यादिशास्त्र में लिखा है,—

“जीयादमरकीत्यविभृत्वारकगिरोमणि ।

विशालकोर्तियोगीन्द्रसधर्मा शास्त्रकोविद ॥

अमरकोर्तमुनिविमलाशय कुसुमचापमदाचलवज्रभृत् ।

जिनमनापहृतारितमाङ्ग यों जयति निर्मलधर्मगुणाथय ॥”

अर्थात्—शास्त्रकोविद विमलाशय का कामजेता निर्मलगुण और धर्म के आश्रय तथा जिनमतके प्रकाशक अमरकोर्ति भट्टारक विशालकोर्ति के सधर्मा थे।

विशालकोर्ति के पिता विद्यानन्द का स्वर्गवास शक १४०३ सन् १४८१ में हुआ था। यह उल्लेख दशभक्त्यादि महाशास्त्र में विद्यमान है<sup>३</sup>। अत उनके पुत्र विशालकोर्ति के सधर्मा अमरकोर्ति का समय करोब सन् १४०० अर्थात् ईसदीय १५ वीं शताब्दी सिद्ध होता है<sup>४</sup>। दशभक्त्यादि शास्त्र का समाप्तिकाल १४०४ शक अर्थात् १४८२ ई० है।

१. देखो डा० हीरालाल का ‘अमरकीर्तिगणि और उनका पट्टकर्मोपदेश’ लेख। जैन मि० भास्कर भाग २ अंक ३।

२. जैन शिलालेख सग्रहका १११वों शिलालेख।

३. प्रशस्तिसग्रह के सम्पादक प० के० भुजबली शास्त्री ने ‘शाके वह्निवराविचचन्द्रकलिते सवत्सरे’ का अर्थ शक १४६३ किया है। जब कि दशभक्त्यादि शास्त्र की समाप्ति सूचक ‘शाके वेदखराविचचन्द्रकलिते’ का अर्थ १४०८ शक किया है। दोनों जगह ख का शून्य लेना चाहिये। यदि दशभक्त्यादि शास्त्र शक १४०४ में समाप्त हुआ है तो उसमें शक १४६३ में हुई विद्यानन्द की मृत्यु की चर्चा कैसे आ सकती है? ४. देखो प्रशस्तिसग्रह, पृ० १२८।

इन तीन अमरकीर्ति में प्रस्तुत ग्रन्थ के रचयिता छक्कम्बोवएस के रचयिता नहीं हो सकते क्योंकि उनका काल वि० १२४७ के आसपास है, जब कि नाममाला के भाष्य (पृ० ६२) में आशाधर के महाभिषेक से उद्धरण दिया है। आशाधर ने अपना अनगारधर्मामृत वि० १३०० में समाप्त किया था। अत ग्रथम अमरकीर्ति इस ग्रन्थ के रचयिता नहीं हो सकते।

इस से यह निष्कर्ष निकलता है कि प्रस्तुत ग्रन्थ के भाष्यकर्ता अमरकीर्ति वि० १३०० अर्थात् ईसवीय १२४३ तेरहवीं सदी के पहिले के विद्वान् तो नहीं है। इन्होंने भाष्य में भोज (११वीं सदी) इन्द्रनन्दि (१०वीं सदी) पद्मनन्दि (१२वीं सदी) सोमप्रभ (१२वीं सदी) हेमचन्द्र (१२-१३वीं सदी) आदि के ग्रन्थों से भी नामोलेख पूर्वक अवतरण लिए हैं। शेष दो अमरकीर्ति पृथक् ध्ययित तो हैं ही। द्वितीय अमरकीर्ति की प्रशंसा में विजयपुर के शिलालेख में निम्नलिखित पद्य मिलते हैं-

“गिव्यस्तस्य गुरोरासीदनर्गलतपोनिधि ।

श्रीमानमरकीर्त्यर्थो देविकाप्रेसर शमी ॥

निजपक्षपुटकवाट घटयित्वानलरोधतो हृदये ।

अविचलितबोधदीप नममरकीर्ति भजे तमोहरणम् ॥”

अर्थात्-अमरकीर्ति महान् तपस्वी शान्त और लम्बी समाधि लगानेवाले योगी थे। इस वर्णन से ज्ञात होता है कि ये अमरकीर्ति शास्त्रकार की अपेक्षा योगी और तपस्वी ही विशेष रूप से थे। नाममाला भाष्य में जिस प्रकार की यशोलालासा टपकती है वह एक योगी और तपस्वी में नहीं हो सकती। अत मेरे विचार से द्वितीय अमरकीर्ति भी प्रस्तुत ग्रन्थ के रचयिता नहीं हैं।

तृतीय अमरकीर्ति के वर्णन में ‘शास्त्रकोविद’ विशेषण उनके पाण्डित्य का निर्देश कर रहा है। अत हमारे प्रकृत ग्रन्थकार दशभक्त्यादि महाशास्त्र के रचयिता वर्धमान के समकालीन, विद्यानन्द के पुत्र विशालकीर्ति के सधर्मा अमरकीर्ति हैं। ये सन् १४५० के आसपास अर्थात् पन्द्रहवीं सदी के विद्वान् थे। इस समय का साधक एक प्रमाण यह भी हो सकता है कि इनने कल्याणकीर्ति को नमस्कार किया है। कल्याणकीर्ति का एक जिनयज्ञफलोदय ग्रन्थ मिलता है।<sup>१</sup> उसको प्रशस्ति से ज्ञात होता है कि ये भट्टारक ललितकीर्ति के शिष्य थे। कल्याणकीर्ति ने जेट सुदो ५ शक सदत् १३५० में जिनयज्ञफलोदय समाप्त किया था। अर्थात् सन् १४२८ में यह ग्रन्थ समाप्त हुआ था। यदि यही कल्याणकीर्ति अमरकीर्ति के द्वारा समून हुए हैं, तो मानना होगा कि अमरकीर्ति पन्द्रहवीं सदी के विद्वान् हैं।

### आभार-

इस ग्रन्थ के सम्पादक प० शम्भुनाथजी त्रिपाठी व्याकरणाचार्य सत्ततीर्थ अनेक शास्त्रों के गमीर विद्वान् हैं। वर्षों तक उनने जैन विद्यालय इन्दौर में साहित्य और व्याकरण का अध्यापन कराया है। वे जैन परम्परा से पूरी तरह परिचित हैं। उनके जैसे अगाध ज्ञानी निरहङ्कारी और विद्याजीवी विद्वान् विरल हैं। उनके तलस्पर्शों गमीर पाण्डित्य का निर्दर्शक यह सत्करण है। ज्ञानपीठ इस ग्रन्थ के सम्पादक के रूप में उन्हें पाकर गौरवान्वित है।

डॉ पी० एल० वैद्य ने इस ग्रन्थ का प्राक्कथन लिखकर हमें उपकृत किया है। प० हर-गोचिन्द्रजी शास्त्री व्याकरणाचार्य ने अनेकार्थ निधण्टु का सम्पादन किया है। प० महादेव चतुर्वेदी ने सम्पादन परिशिष्टनिर्माण और प्रूफ सशोधन में पूरा योग दिया है। प० लज्जनन्दनजी मिश्र व्याकरणाचार्य ने भी प्रेस कापी आदि में पूरा सहयोग दिया है। गुलाबचन्द्रजी व्याकरणाचार्य एम० ए०

<sup>१</sup> देखो प्रशस्ति सप्त्रह पू० १६।

ने प्रावक्यन का हित्यो अनुबाद किया है। पं० जुगलकिशोर जी मुख्तार ने अनेकार्थनिघण्टु और एकाक्षरी कोश की प्रति भेजी। प० श्रीनिवासजी शास्त्री ने भाष्य की प्रति भेज कर अनुग्रहीत किया है।

भारतीय ज्ञानपीठ के स्थापक सेठ शान्तिप्रसाद जी तथा अध्यक्षा सौ० रमा रानी जी की संस्कृतनिष्ठा, उदार दृष्टि, ज्ञानानुराग और सौजन्य इस संस्था के जीवन हैं। अपनी स्व० पुण्यश्लोका माता मूर्तिदेवी के स्मरणार्थ मूर्तिदेवी ग्रन्थमाला के संस्कृत विभाग का यह छठवाँ ग्रन्थ प्रकाशित हो रहा है। इस भद्र दम्पति से ऐसे ही अनेक लोकोदयकारी सांस्कृतिक कार्यों की आशा है।

इस संस्था के कर्मनिष्ठ मन्त्री श्री अयोध्याप्रसाद जी गोयलीय की कार्यदृष्टि, सत्प्रेरणा और प्रयत्न से इस संस्था का इस रूप में सञ्चालन हो रहा है। मेरे इन सब का आभार मानता हूँ।

'भारतीय ज्ञानपीठ काशो,  
पौष शुक्ल १५  
वीर स० २४७६  
३११५०

—महेन्द्र कुमार जेन  
ग्रन्थमाला सम्पादक

## प्रकाशन-व्यय

४००)	कागज २० रोम २२×२९/३२ पोण्ड	५८५।।।) कार्यालय व्यवस्था प्रूफ सशोधन आदि
९७५)	छपाई पृष्ठ १९६ दर ५०) प्रति फार्म	४२६।।।) सम्पादन
२००)	जिल्द बैंधाई	५००) भेट आलोचना, विज्ञापन आदि
६०)	कबर छपाई	७८७।।।) कमीशन
४०)	कबर कागज	

कुल लागत ३९३४।।।)

१००० प्रति छपी। लागत एक प्रति ३।।।=)

मूल्य ३।।।)

---

# सभाष्या नाममाला

अनेकार्थनिघण्टुः एकात्मरी कोशश्च

---



# महाकविधनङ्गप्रणीतीं नाममाला अमरकीर्तिविरचितभाष्योपेता

---

श्रीपूज्यपादमकलङ्घनन्तब्रोध विद्यादिननिदनमिन च समन्तभद्रम् ।  
कल्याणकीर्तिमल प्रणिपत्य वीर भाष्य करोमि परम बुद्धिसिद्धं ॥ १ ॥

सरस्वत्या, प्रसादेन रच्यते अमरकीर्तिना ।

भाष्यं धनञ्जयस्येद बालाना धीविवृद्धये ॥ २ ॥

यद्यपि धनञ्जयो ( येनो ) क्तो भावो वक्तु न शक्यते ।

तथाऽप्यह प्रवक्ष्यामि वादेव्याश्र प्रसादत ॥ ३ ॥

पूर्वचार्यकृता प्राप्य व्युत्पत्तिस्पदिष्यते ।

क्वापि क्वापि स्वबुद्धयाऽपि ज्ञम्यतामत्र मे तुष्टैः ॥ ४ ॥

५

शिष्ठासमाचार ( ध्याचार ) परिपालनाथ नमस्कारसमुद्गतधर्मद्वारेण निर्विघ्नशास्त्रसमाप्त्यर्थे

च धनञ्जयब्रुवः इष्टाधिकृतदेवतानमस्कारार्थ श्लोकमाह—

१०

तन्मामि परं ज्योतिरवाङ्मनसगोचरम् ।

उन्मूलयत्यविद्यां यद् विद्यामुन्मीलयत्यपि ॥ १ ॥

तत्परं ज्योतिः—

“एनमो<sup>१</sup> अरहताण एनमो सिद्धार्थं एनमो आइरियाण । एनमो उवज्ञकायाणं एनमो लोए सञ्चसा-  
हूण ॥” ईदगिवधम् । नमामि नमस्करोमि । किंविशिष्ठम् ॥ अवाङ्मनसगोचरम् वाक् च वाणी मनस<sup>२</sup> १५  
च चित्त वाङ्मनसे तयोर्वाङ्मनसयोर्न गोचर न प्रत्यक्षीभूतम् अवाङ्मनसगोचरम् अलच्यत्वरूपत्वात् ।  
तथा चोक्त शब्दभेदे—

“नभन्तु<sup>३</sup> नभसा सार्थं मनस मनसाऽपि च । तमसेन तमः प्रोक्तं तपन्तु तपसा सह ॥”

तथा च पदानन्दिशास्त्रे—

“४स्वानुभूत्यै भवेद् गम्य रम्य यज्ञात्मवेदिनाम् । जाने तत्परं ज्योतिरवाङ्मनसगोचरम् ॥” २०

१ एतत्पञ्चनमस्कारात्मकमन्त्रप्रतिपाद्यमहस्तिदाचार्योपाध्यायसर्वसाधुरूपमत्र ज्योतिः । २ नभ तु  
नभसा सार्थमित्यादिशब्दभेदोक्तप्रमाणतोऽकारान्तोऽपि मनसशब्दः साधु । ३ साम्प्रत निर्णयसागरयन्त्रा  
लयमुद्रिते शब्दभेदप्रकाशग्रन्थे एतत्पद्य किञ्चिदन्यथोपलब्धम् । तदित्यम्—

कुमुद कुमुदा चापि योगिस्याद् योगिता सह । तमसा प्रोक्त रजसाऽपि रजः स्मृतम् ॥ ३४ ॥  
अत्र कालप्रकर्षाद्यविपि मनसशब्दः प्रभ्रष्टस्थथापि तदानीन्तनमूलपुस्तके तत्त्वैवासीदिति धृष्टम् ।

यत् अविद्यां पापविद्याम् चादुकारसूत्रम्, वैद्यकसूत्रम्, चित्रकर्मादिसूत्रम्, वृत्यसूत्रम्, गन्धर्व-सूत्रम्, पटहसूत्रम्, आगदसूत्रम्, योद्धसूत्रम् मद्यसूत्रम्, वृत्यसूत्रम्, राजनीतिसूत्रम्, चतुरङ्गसूत्रंच । गज-तुरगपुरुषस्त्रीलूक्रगोखड़गदाद्वजनाना [ च विद्या पापविद्या ] कथते ताम् उन्मूलयति मूलादुच्छेदयति ।

यत्<sup>१</sup> विद्यामपि उन्मीलयति स्थापयतीत्यर्थ ।

५ द्वयं द्वितयमुभयं यमलं युगलं युगम् ।

युगम् द्वन्द्वं यमं द्वैतं पादयोः पातु जैनयोः ॥२॥

दश युगमे । द्वां अवयवौ यस्य तद् द्वयम्, “द्वित्रिभ्यामयद् वा<sup>२</sup>” द्वितयम् द्वौ अवयवौ यस्य तद् द्वितयम् । उमयम् उभौ अवयवौ यस्य “द्वित्रिभ्यामयद्” इत्यनुवर्तमाने “उभाभ्या नित्यम<sup>३</sup>” इत्ययट् न तु तयट् । यमलं यम लातीति यमलम् । युगलं युग लातीति युगलम् । युगडं युगडक च । युगं १० युज्यते धर्मवृत्त्या युगम् । समाश्रयव्यन्य युगम् । युगम् युनक्ति द्विर्तयेन युज्यते शिलायते युगम् । “युजिरुचितिजा धर्मक्” । इन्द्रम् द्वौ द्वावित्यर्थं द्वन्द्वम् । यन्छत्युपरमत्येकत्वात् यमम् । द्वाभ्यामित द्वीतम्, द्वीतमेव द्वैतम् । पातु खतु ।

ऋषिर्षुनिर्यतिर्भिक्षुस्तापसः संशितो व्रती ।

तपस्वी संयमी योगी वर्णी मायुश्च पातु वः ॥३॥

१५ २४ द्वादश मुनौ । ऋषति कालत्रय जानातीति क्राष्टः । “रिषिशुचिगृनाभ्युपधात्किः” । तथा च यशस्तिलके<sup>४</sup>—

“रेपणात्क्लेशाराशीनामृषिमाहुमेनीषिण ।”

यतिः यो देहमात्राराम सम्यविद्यानौलाभेन तृष्णामरितरणाय योगाय शुक्लध्यानधर्मध्यानाय यतते स यतिः<sup>५</sup> । तथा च यशस्तिलके —

२० २५ “यः पापपाशनाशाय यतते स यतिर्भवेत् ।”

मुनि, तपःप्रभावात् सर्वेन्यते मुनि । “मन्यतेः किरत उच्च<sup>६</sup> ।” तथा च—

“१३मान्यत्वादापविद्याना महद्विः कीर्त्यते मुनिः ।”

भिक्षु भिक्षते इत्येवशीलो भिक्षु । ‘सजन्ताशसिमिक्षामु<sup>७</sup> ।’ तापसः, तपो विद्यते यम्य स तापत । “अणु<sup>८</sup> च ।” तप सहस्राभ्या न केवलमस्त्यर्थं विनीनौ अणु च, वृद्धि । संश्रितः सशायते स्म सशितः । “१४श्यतेत्रते नित्यम् ।” व्यवस्थितविमापया शो तनुकरणे इत्यस्य व्रतेऽयं नित्यमिकारी भवति, विकल्पो नास्ति । व्रती, “हिसाइनृत्मेयाऽब्रह्मपरिग्रहेभ्यो विरतिर्बन्तम् ।” व्रत विग्रहेऽस्य व्रती । तपस्वी “अनशनावसौदैर्यवृत्तिपरिसख्यानरसपरित्यागविकृशशयगामनकायक्लेशा बाह्य तपः ।” “प्रायश्चित्तविनयवैयावृत्यस्वाध्यायव्युत्सर्गध्यानान्युत्तरम् ।” तपश्च विद्यते यस्येति तपस्वी । सयमी, सयमन सयमः इन्द्रियप्राणलक्षण । सयमो विद्यते यस्यति सयमी । योगी, \* युजिर्<sup>९</sup>

१. यत् इत्यस्य पूर्वम् ‘तथा’ इति पद योज्यम् । २. है० श०३।।१५१ । ३. एतसूत्र है० श०० नोपलब्धम् । परतु द्वित्रिभ्यामयद्वा इत्यनुवर्तमाने उभाभ्या नित्यमिति दीक्षेनवचनात्तस्यमेवैतत्प्रमिति निश्चियते । ४. कालबाचक्युपग्रहतयेव बुत्तिः, प्रकृतायेव तु युग लातीत्येव । ५. का० उ० १।५७ इति धमक् प्रत्ययः कुत्व च । ६. गृनाभ्युपधात्किः का० उ० ३।१५ इति किप्र० । ७. यशस्तिः आ० च. क० ४४ । ८. यती प्रयत्ने । इः सर्वधारुम्य का० उ० ३।१४ इप्र० । ९. यश० आ० ८ कल्प ४४ । १०. का० उ० ४० ४।३ इति किप्र० । मनु श्रवणोधने । ११. यश० आ० ८ कल्प ४४ । १२. का० स०० ४।४ । १३. पा० स०० १।२।१०३ । १४. श्यतेरित्व व्रते नित्यमिति पातञ्जलभाष्यम् ७।४।८१ । १५. त० स०० ७।१ । १६ त० स०० । १७ त० स०० । १८. \*एवच्चहिताशस्थाने युजिर् योगे रुधादौ परस्मैपदो युज् समाधौ वा दिवादौ आत्मनेपदो इत्येवम्पाठः सुगमः ।

योगे, युज समाधौ पर० युज् समाधौ वा० दि० । आत्म० युज् रुधादौ । पर० युज समाधौ वा दि० । आत्म० \* युनक्ति युज्यते वा इत्येवंशील योगी । युजभजेत्यादिना । चिनिण् । वर्णो, वर्णो ब्रह्मचर्यमस्त्यस्य वर्णो । साधुः, शिष्याणा दीक्षादिदानाध्यापनपराह्नमूख सकलकर्मोन्मूलनसमयो भोज्ञमार्गज्ञुष्टानपरो य. स साधु । सिद्धि साध्यति साध्ययिष्यति वा साधुः ।

“स व्याख्याति न शास्त्रं न ददाति दीक्षादिकं च शिष्याणाम् ।  
कर्मोन्मूलनशक्तो [ धर्म ] ध्यानः स चात्र साधुर्ज्ञेयः ॥”  
“कृवापाजिमीत्वदिसाध्यशूद्यग्निचरिचटिष्य उण्” । चो युष्मान् पातु रक्तु ।

दीक्षितं मौण्ड्यं शिष्यं च तमन्तेवासिनं विदुः ।

चत्वारं शिष्ये । [दीक्षितम्] दीक्षा सजाताऽयेति । ३तारकितादिदर्शनात्सजातेऽर्थं इतच् । मौण्ड्यम् मुण्डे मस्तके भव वपनादिकं मौण्ड्यम् । शिष्यम्, शिष्यते व्युत्पादते गुरुणा शिष्यः । १० “वृत्त्वाजुपीण्णशासुस्तुगुहा क्यव्” । गुरोरन्ते वस्त्यन्तेवासी तम । विदु, कथयन्ति ।

कृतान्ताऽगमसिद्धान्ताः

त्रयं सिद्धान्ते । लोकाना सन्देहस्य कृत, अन्तो विनाशो येन म् कृतान्तः । आगच्छतीत्यागमः, आगमनमागमो वा । सिद्धान्तो [ सिद्धोऽन्तो ] निधयो यस्य स सिद्धान्तः, समयोऽपि । सर्वे पुति ।

ग्रन्थः शास्त्रमतः परम् ॥ ४ ॥

१५

ग्रन्थातिः रचयतीति ग्रन्थः । शास्त्रं शास्त्रम् ।

भूमिर्भूः पृथिवी पृथिवी गह्यरी मेदिनी मही ।  
धरा वसुमती धात्री क्षमा विश्वम्भराऽवनिः ॥ ५ ॥  
वसुधा धरणी क्षोणी क्षमा धरित्री क्षितिश्च कुः ।  
कुम्भनीलोर्वर्ग चोर्वी जगती गोर्वसुन्धरा ॥ ६ ॥

२०

सपविशतिर्भूमौ । भवति सर्वमत्र भूमिः । “ऊर्मिभूमिरस्य १” भवत्यस्मात्सर्वं भूः । रेफान्तञ्चाव्ययम् । प्रथते पृथिवी पृथिवी च । गुह्यतीति॒ गह्यरो । रुद्धरीति॒ पाठ । न्याये मेश्वति॒ स्त्रिव्यति॒ मधुकैत्यमेदोर्योगद् वा मेदिनी । मध्यते मही । मह पूजायाम् । धरत्यगान् धरा । वस्त्यस्या वसुमती । धराति॒ सण्डलाति॒ सेपजायै॑ वैद्यो यामिति॒ धात्री । “कर्मणि॑ षेट पून् ।” केचिद्धरातेरपीच्छन्ति॒ क्षमणं क्षमा । “पाऽनुबन्धमिदादिभ्यस्त्वद्” । १ विश्व विमर्ति॒ विश्वम्भरा । “नाम्नि॑ तृष्णुजिधारि॒ तपिर्दमसहा सजायाम् २” खप्रत्ययः । भूतानवति॒ श्रवनिः । लियामीः । २३ “ऋत्सृष्ट्रव्यश्यविवृति॒ ग्रहिष्योऽनि॑ ।” अनि॒ प्रत्ययः । वसु धधातीति॒ वसु या । धरति॒ पर्वतानिति॒ धरणि॑ । “वृत्रोऽनि॑ ।” क्षोणि॑ क्षुपम् क्षोणि॑ । क्षियामी । क्षोणी । “दु क्षुरु कु शब्दे” । क्षमते भार क्षमा क्षमा च । धरति॒ सर्वं धरित्री । क्षयति॒ क्षय प्राप्नोति॒ प्रलयकाले॑ क्षितिः । कायर्ति॒ कूयते वा कुः । कुम्भो गत्नोत्पत्तिग्रीपो॑ इत्यस्या॑ कुम्भनी॑ । एति॑ जन॑ इमाम् इला । “इग्मुराकपिलिकादिदर्शनालत्वम् ।” ३० “शृष्टादय” —

१. युजभजसुजदिष्टद्युहुहाङ्कीडत्यजामुरुधाङ्यमाङ्माङ्यसरज्ञाङ्याट् हना च इति॑ पृण् का० स० ४४४२२१ २. का० उ० १११३ ३. तदस्य सजात तारकादेरितच् इति॑ का० स० ४० स० ५०८ ४. मोण्ड्यमस्यात्तोत्यपि विग्रहै॑ निवेश्यम् । अर्शं आदिम्योऽच् । ५ का० स० ४२२३ ६. ग्रथयते रचयते इति॑ कर्मणि॑ विग्रहै॑ योग्यः । ७ का० उ० ३१३२ इति॑ भवतेर्मिप्र० कित्व च । ८ गह्यतीति॑ गह्यरी रुद्धरी इत्वर्प पाठ इति॑ युक्तम् । ९ का० स० ४४६० इति॑ पून् । १० वस्तुतस्तु॑ क्षमते॑ इति॑ क्षमा, पचादित्वादच्, दाप् । ११ का० स० ४५८२ १२. का० स० ४३४४ १३ का० उ० २१४३ १४ का० उ० २१४३ ऋत्सृष्ट्रव्यज्ञ॑ इत्यादसूत्रम् । १५. का० उ० २११७ ।

“शूद्रोभवज्ञपिभद्रगांरमेरीरा:” एते रक्षयत्यान्ता निपत्यन्ते । क्लेशमुर्वति हिनस्ति फलेन उर्चरा । उर्वी । उर्वी युर्वी दुर्वी धुर्वी हिसार्था । सर्वमूर्वति व्यानोति उर्वि । छियामी । उर्वी । राजान्तर गच्छति जगति । छियामोः जगती । पूजा गच्छति गौः । छीनूः । गमेडोः । “‘गोरु धुटि’ हृत्यैवम् । धृष्ट धारणे । धृः । धरति धरते । इत् । अस्य वृद्धिः । धारि जातम् । वसु वस्त्रौ वा धारयति वसुन्धरा । नाम्नि  
५ तद्भू०<sup>२</sup> खप्रत्यय । करितस्या०<sup>३</sup> कारितलोपः । अभिधानात् हस्तः । “हस्त्वा रुपोर्मोऽन्तः ।” “छिया” मादा ।” भूतधात्री, रत्नगर्भा, विपुला, सागराम्बरा, रत्नवर्ती, रसा, अचला, अनन्ता, डथाम्— काश्यपी, गोत्रा, स्थिरा, सर्वसहा ।

तत्पर्यायधः शैलस्तत्पर्यायपतिर्न पः ।

तत्पर्यायरुहो वृक्षः शब्दमन्यं च योजयेत् ॥ ७ ॥

१० योजयेत् योटयेत् अन्यं शब्दं च । तत्पर्यायधरः शैल । भूमिधर, भूधर, पृथिवीधरः पृथिवीधर, गहरीधर, मेदिनीधर, महीधरः, धराधरः, बसुमतीधर, धात्रीधरः, विश्वभराधरः, अवनीधरः, बसुधाधरः, धरणीधर, क्षोणीधर, द्वामधर, धरित्रीधरः, ज्ञितधरः, कुधरः, कुभिमनीधरः, इलाधरः, उर्वाराधरः, उर्वधरः, जगतीधरः, गोधरः, बसुन्धराधरः । समविशति नामानि शैलस्य ज्ञेयानि । तत्पर्यायपत्तिनृप ।  
१५ भूमिपतिः, भूपति, पृथिवीपतिः, पृथ्वीपति, गहरीपति, मेदिनीपति., महीपति, धरापति, बसुमतीपति, धात्रीपति, क्षमापति, विश्वभरापति, अवनीपति बसुधापति, धरणीपति, द्वामपति, धरित्रीपति, जितपति, कुनिति, कुभिमनीपति., इलापति, उर्वारपति, उर्वधपति, जगतीपति, गोपति, बसुन्धरापति । समविशति नामानि नृपस्येति ज्ञातव्यानि । तत्पर्यायरूपे वृक्षः । भूमिरूपः, भूरुह, पृथिवीरूप, पृथ्वीरूप, गहरीरूपः, मैदानीरूप, महीरूप, धरारूपः, बसुमतीरूप, धात्रीरूप, क्षमारूपः, विश्वभरारूपः, अवनीरूपः, बसुधारूपः, धरणीरूपः, क्षोणीरूप, द्वामरूप, धरित्रीरूप, ज्ञितरूप, कुरुरूप, कुभिमनीरूप, इलारूप, उर्वारारूप, उर्वधरूप, जगतीरूप, गोरूप, बसुन्धरारूप । समविशतिपर्यायनामानि वृक्षस्येति ज्ञातव्यानि ।

दरीभृदचलः श्रुङ्गी पर्वतः मानुमान् गिरिः ।

नगः शिलोच्योऽद्रिश्च शिखरी त्रिकुन्मस्तु ॥ ८ ॥

द्वादश पर्वते । दर्दी विभूतिं दरीभृत् । स्वस्थानात् न चलति अचल । शुद्धमस्यास्तीति  
श्रद्धी । पर्वाणि सन्त्यस्य पर्वते । “पर्वमरुया त ॥” सानुरस्त्यस्य सानुग्रामन् । जलं गिरतीति गिरिः ।  
“गृनाम्युपधात्कि ॥” न गच्छतीति नग । “डोऽमज्ञायामपि ॥” नाम्युपदे गमेद्दौं भवति । शिला  
उच्चीयन्तेऽत्र, शिलोद्यथ । खम् आकाशम् अतीति अद्रि । “भूर्वदिभ्य कि ॥” शिखरमस्त्यस्य  
शिखरो । त्रिक पृष्ठाघर स्फुन्नाति विस्तारयतीति त्रिककुत् । वर्णविकारत्वाद् भकारस्य १० तकार ।  
स्तम्भु ॥ स्तुमुस्कम्भुस्कम्भुकुञ्ज्य शुश्रेन्ति वक्षद्यमत्राम्य धातों प्रयोग ॥” भियन्ते क्षुद्रजन्तवोऽस्य  
स्पर्शेन्ति मरुत् । “१२ भुव्रेति ॥” शैल, क्षितिपर, गोत्र, आहार्य, कुप्र., ग्रावा ।

प्रस्थं पाश्वं तटं सानुभेष्टोपत्यका तटी ।

नितम्बमन्तो दन्तश्च तद्वानपि गिरिः स्मृतः ॥ ६ ॥

१ का० स० २। २।३। २ नामि तृभूतिज्ञारितपिदमिसहा सजायाम् इति पूर्णे का० स० ४। ३।४। ३ कारितस्यानामिड्विकरणे इति पूर्णम् का० स० ३।६।४। ४ का० स० ४।१।२। ५ का० स० २।४।४। ६ पर्वमस्तस्त श०च० स० ४।१।७। ७ का० उ० ३।१।३। ८ का० स० ४।३।४। ९ का० उ० ३।१।६। १० वर्णविनाशेन सकारस्य लोपोऽपि वीद्य। ११ श०च० २।१।६। त्रीणि कुद्यानि शृङ्गाण्यस्येति विप्रहो दुन्यत्र। त्रिकुटपर्वते पा० स० ५। ४।१।६ इत्यकारलोप। १२ का० उ० १।३।

पर्वतमेखलाया दश । प्रस्थीयते जनेनात्र प्रस्थम् । “<sup>१</sup> नामिनस्थश्च” क । उभयम् । पाति रक्षति जनान् पाहवर्म् । तद्यति उच्छ्रुत्य गच्छुति तद्भू । त्रिषु लिङ्गे षु । सनोतीति सानु । <sup>२</sup> कृवापा-जिमीन्वदिसाध्यस्त्रियगणिजनिचरिचटिन्य उण् ॥” “शण दाने” अस्य धातो प्रयोग । मेहनस्य ख तस्य मा-लातीति निरुक्ति । मिनोति प्रक्षिप्ति कामिचित्तानिति वा मेखला । उपत्यका उप समीपे भवा उप-त्यका । “<sup>३</sup> उपाधिग्या त्यक्त्वासन्नारुदयोः ॥” तद्यमस्यास्ति तटी । क्रीडार्थं जनस्ताभ्यतीति<sup>४</sup> नितम्बः । अमतीत्यन्तः । ““मृगवाहस्यमिदमिलूपूर्म्यस्त ॥” एवत्प्रत्ययो भवति । दम्यतेऽन (म) द्यतेऽनेन दन्तः । ““मृगवाहस्यमिदमिलूपूर्म्यस्त ॥” तप्रत्यय । तद्वानपि गिरिः स्मृतः । प्रस्थवान्, पाश्ववान्, तद्वान्, सानुमान्, मेखलावान्, उपत्यकावान्, तटीमान्, नितम्बवान्, अन्तवान्, दन्तवान् ।

५

गजाधिपः पतिः स्वामी नाथः परिवृढः प्रभुः ।

ईश्वरे विभुगीशानो भर्तेन्द्र इन ईशिता ॥१०॥

१०

चतुर्दश राज्ञि । न्यायमार्गेण राजते इति राजा । “<sup>५</sup> वृष्टित्तिराजिविन्प्रदिवियुत्य” कनिः । “को यष्ट्वद्मावार्थं । एव्य कनि प्रत्ययो भवति । अधिग्ये ऐश्वर्ये पाति रक्षतीति आधिप । तथा च उपसर्गवृत्तौ-अधिवशीकरणाधिप्रानाध्ययनेश्वर्यस्मरणाधिकेषु ॥” पात्यवति पति । “पातेर्डति । श्रसाङ्ग-डति-त्ययो भवति । ‘अमु गतौ’ सुपूर्वं । शोभनमनीति स्वामी । ‘सावर्मेस्ति’ दीर्घश्च ।” सावुपदे अमेर्धार्तोरिन् प्रत्ययो भवति । नाथयति गिपु नाथः । “तृहि तृहि वृद्धो” । हो वृह । अत एव वृहः । “परिपूर्वांत् परिवृहति परिवर्वहति स्म वा परिवृढः ।” “<sup>६</sup> गत्यर्थां” इति क । “<sup>७</sup> परिवृद्धहठो प्रभुवलवतं” ५ एतौ प्रभुवलवतोर्थयोर्यथासख्य निषायेते । परिपूर्वम् वृहेरिडभावो नलोपस्च । वहनुहोः प्रकृत्यन्तर-योरपीत्यन्ते । ये तु ग्रन्थान्तरयोरिच्छान्ति, तेषामन्ते “तृहि तृहि वृहि वृद्धो” इति पाठान्तर वर्तते । तेन पाठान्तरे इवस्य वा “तृहः वृह” इति निपातः । तत्र वर्वहति स्म दर्हति स्म इति वाक्य क्रियते । प्रभवतीति प्रभुः । “<sup>८</sup> भुवो इविशप्रेषु च” । “<sup>९</sup> डानुवन्धू” उकारलोपः । “<sup>१०</sup> ईश ऐश्वर्ये” इष्टे इत्येवशील ईश्वर । “<sup>११</sup> कशिपिसभातीशस्याप्रमदा च च” । एषा वरो भवति तन्त्रीलादिषु । विभवतीति विभु । दुप्रत्ययः । ईष्टे शक्नोति सृष्टिस्थितिप्रलयान् कर्तुम् ईशानः । आश्रितजनान् विभर्ति पोपयति भर्ता । इन्द्रिति परमैश्वर्यसुकृतो भवतीति इन्द्रः । “<sup>१२</sup> स्फायित्तिविविशकिदिपिक्षुदिस्मदिमन्दिचन्द्रनुन्दीनिद्यो रक्” एतीति इनः । “<sup>१३</sup> इराजिकृपिम्यो नक्” ईष्टे ईशिता ।

२०

अनोकहस्तरः शास्त्री विटपी फलिनो नगः ।

२५

द्रुमोऽड्ग्रिपः फलेश्वाही पादपोऽगो वनस्पतिः ॥११॥

द्रादश वृक्षे । अनसः शक्तस्य अक गति हन्तीति अनोकहः । “<sup>१४</sup> अंशोकहप्रत्ययेन वा अनोकहः । तरन्त्यनेनातप तरुः ।” “<sup>१५</sup> भ्रमृतत्त्वं प्रित्सरितनिमस्त्रिशीड्य उ ।” शास्त्राः सन्यस्य शास्त्री । विटपो विस्तारो-

१ का० स० ४३। ५। वतुतस्तु नामिन स्थञ्चति कद्रत्ययस्य कर्तृरि विधानादत्र घन्तये कर्विधान-मिति क । २ का० ३० ११ । ३. पा० स० ४२। ३४ इति त्यक्तन् प्रत्ययपूर्वं च । ४. क्रीडार्थं जनैस्त-म्यते काड्यते इति कर्मणि विग्रही न्याय । ५ का० ३० ४२७ । ६ का० ३० २१३ । ७ उ० वृ० ११ । ८ का० ३० ३५२ इति पातेर्डतिप्र० टिलोपस्च । ९ का० ३० ६६८। पाणिनीयैस्तु स्वामिनैश्वर्ये पा० स० ५२। १२६ इति त्वशब्दादामिनप्रत्ययेन साधितः । स्वंश्वर्यमस्यास्तीति विग्रहः । १०. गत्यर्थाकर्मकश्ल-षशीड्यथासवसज्जनरहजीर्यतिष्यश्च इति पूर्णं का० स० ४१६। ४४। ११. का० स० ४१६। १२ का० स० ४१४। १३. डानुवं-वेऽन्त्यस्वरादेलोप इति पूर्णं का० स० ४१६। ४२। १५. का० स० ४१४। १६ का० ३० २१५। १७ अन प्राणे । अनिति श्वामोऽङ्गवास करोतीति । अन धातोरोकहप्रत्यय औणादिक इत्यपेक्षिताशः । १८. का० ३० १५ ।

- ५ वनस्य पति वनस्पतिः । “पारस्करादित्वात्सुट् । महीरुहौ, कुट्, शाल, पलाशी, हुँ, वृक्षः, कुजः, विष्ट्रं, अग्नश्चपि ।

तत्पर्यायचरो ज्ञेयो हरिवलिमुखः कपिः ।  
वानरः सुवगस्त्वं गोलाडगूलोऽथ मर्कटः ॥१२॥

१० एकोनविशति नामानि हरौ। अनोहाहचर, तस्चरः, शाखिचर, विटिचर, फलनन्चरः, नगचरः, दुमचरः, श्रद्धप्रिवचरः फलेप्राहिचर पादपचर अगचर, वनस्पतिचरः। इत्यादिद्वादशनामानि मर्कटस्य ज्ञेयानि। हरतीति हरिः। “ह सर्वधारुभ्य”। वलयो मुखेऽस्य वलिमुखः। कम्पते वायुना शरीरे कपिः। “अहिकम्प्योर्न लोपथ”। आया कि प्रत्ययो भवति नलोपथ। वन वनति सम्भवते वानरः नरोऽपि। लवेन उफालेन गच्छति लतवगः। “डोऽमज्जायामपि” च। गा भूमि लङ्घतांति गोलाङ्गु लम् गोनाङ्गु नम यामा गोलाङ्गु उणादित्वात् “लगे दर्धिंश्र”। “मुद्र प्राण-यागे”। प्रियते मर्कट।  
१५ जटा “मकटो” एतावटप्रत्ययान्तो निपात्यते। वनौका। लवद्वम्। कीश। शाखा गः।

विपिनं गहनं कक्षमरण्य कानन वनम् ।  
कान्तारमटवी दुर्गम्

नव वने । वेष्यते कम्यते भयेनात्र विपिनम् । ५ “वेपितुहोहस्वऽन्त” इतीनच् । उणादौ  
उत्थयते । ‘१३३जिनाइजिनेरिणविपिनतुहिनमहिनानि ।’ एतानि इनप्रथयान्तानि निपात्यन्ते । ६गायते  
२० मुगादिर्मिग्हणम् । उभयम् । कषति वर्घति कक्षम् । अर्घते गायते श्वापदै अररथम् । प्रतिभ्रायन्ति अत्र  
वा अग्रण्यम् । ७“अत्तेरन्य” अस्मादन्य प्रययो भवति । उभयम् । कन्यते गम्यतेऽमिन् काननम् । ।  
वन्यते सेव्यते घनम् । कान्तम् जलान्तम् गच्छति इच्छन्ति वा कान्तारम् । अट्टन्यस्थापटवि । लियामीः ।  
अटवी । दुखेन महता काटेन गम्यते दुर्गम् । नानार्थे । सत्रम्, हव्यम्, दावम्, अरण्यानी, फलम्  
(१४ अफलम्) ।

१. पात० भाष्य० ५२।१२२ । २ का०स० ४।३।८७ इति गमेऽः । ३. का०स० ६।२।४७  
अनेन ग्रहेणिन् । एव सति वृद्धयमावात् फलेप्रहिति रूप सम्भवति । तत्रामिधानादीर्घं इति टीकाकारः ।  
तथामिधायकवचनामायात्कोपान्तरेषु फलेप्रहीति दीर्घरहितस्वैर दर्शनाच्च फलेप्राहीति रूप चिन्त्यम् ।  
४ नेदश किमपि सूत्र कातन्त्रे । नगोऽप्राणिनि वा इति है० शा० स० ३।२।१२७ । ५ पास्कग्रभूतीनि  
च सज्जायाम् पा० स० ६।१।५७ । ६ अत्र अ० चि० ४।१८० ग्रमाणम् । तटुक्म-इक्षोडग शिखरो  
च शाखिफलदावद्विर्हिद्मो जीर्णोद्विटीपी कुटः त्रितिश्छः कारस्करो विष्टरः । नन्द्यावर्तकरालिकौ तरुवरु  
पर्णी पुलाक्यहिप सालानोकहण्ड्यपदनगा रूक्षागमां पुष्पदः ॥ इति । ७ का० उ० ४।४। ८ का०  
स० ४।३।४७ । ९ खर्जिक्षमिपिञ्चादिभ्य ऊरीलां का० उ० ३।६० इन्यूलप्र० उणादित्वाल्लगे दीर्घश्चेति  
दुर्गवृत्ति । १०. का० उ० ३।५८ । ११ पा० उ० २।५५ । १२ का० उ० २।२२ । इतीनप्रत्यय वपेर-  
कारेकारश्च । १३. गाहू विलोडने । बहुलमन्त्रापीति युच् । कृच्छ्रगहनयोरिति निर्देशाद्यस्त्वः ।  
१४ का०उ० ३।२। १५ कानयति दीपयति स्मरादि । कनी दीप्तौ । युच् । कम् जलम् अनन जीवनमस्य  
वेति विप्रहोप्यव्य । १६ फलपुष्परहिते वन्ध्य-अवकेशि अफल शब्दाः कल्पदुकोशो दृष्टाः । तटुक्म-  
“नन्द्यार्थात्कलपर्योऽवकेशि वन्ध्य इत्यपि । फलपृष्ठे विरहित एते वन्ध्यादयस्त्रिय ॥

## तच्चरं स्पाद् वनेचरः ॥१३॥

चरशब्देन युक्ते शब्दस्य नव नामानि । विपिनचरः, गहनचर, कक्षचर, अरण्यचरः, कान-  
नचर, वनचर, कान्तारचर, अटवीचर, दुर्गचर ।

पुलिन्द शवरो दस्युनिपादो व्याघ्रलुधकौ ।

धानुष्कोऽथ किरातश्च सोऽरण्यानीचरः स्मृतः ॥१४॥

पोलति भ्रमति महत्व याति गच्छति पुलिन्दः । पुलीन्दश्च । शवति<sup>१</sup> निर्दयत्व गच्छतीति  
शवरः । तालव्यः । शवति अरण्य शवर । दस्यति अन्यमपक्षिणीति दस्युः । <sup>२</sup> “जनिमनिदसिन्यो यु”  
एभ्यो यु प्रत्ययो भवति । निर्षेदति पापकर्मात्र निपाद । निषदश्च । वा<sup>३</sup> ज्वलादिनीभुवो णः । “व्यध  
ताडने” व्यध विध्यतीति व्याधः । “दिहैलिहिश्लिपिविध्यतीणश्याता च”<sup>४</sup> एवा णो भवति ।  
लुभ्यते गृह्यते मासे लुधधः । स्वार्थं कः लुधधकः । धानुषा<sup>५</sup> सह वत्तने इति धानुषः । किराति शरान्<sup>६</sup>  
किरातः । अरण्यश्च अरण्यानी (तत्र) चरतीति अरण्यानीचर । इन्द्रवहणमवर्षकृमृडहिमयमारण्यव-  
यवनमातुलाचार्यणामानुकूडश्च । अरण्यानीति ।

वार्वारि कं पयोऽम्भोऽम्बु पाथोऽर्णः सलिलं जलम् ।

मरं वनं कुशं नीरं तोयं जीवनमविष्पम् ॥१५॥

श्रष्टादश पार्वीय । वार्यति तृष्णामिदम् वारि, तृणोति वा वारि । <sup>१</sup> शृवसिवपिगजिवैनिन-  
भेरिज्<sup>२</sup> । “य हत्र प्रत्ययो भवति । ऋकार इज्वदभावार्थ । गन्तम् वार् । क्षीक्षीति । वाम्यते इत्यते  
कम्, कायतीति (वा) । “कायते टैतिडमौ” प्रत्ययौ भवत । पीयते पयते वा पयः । “पीड् पाने”<sup>३</sup>  
“सर्वं धानु-योऽसुन् ।” अमति गच्छति स्वादुत्व सन्तम् अम्भम्<sup>४</sup> । “अग्रम गत्तो”<sup>५</sup> “अग्रमेऽमोऽन्ततच्च । अकार  
उन्नचारणार्थः । “अवि शब्दे” “अम्भु” इति सौंचो वा “सेवायाम्”<sup>६</sup> अम्भ्यते तृष्णातैरित्यस्तु । “अच्छिं-  
कमिव्यामुः । आम्याम् प्रत्ययो भवति । पीयते पाति वा पाथ । “रमिकासिकुपिषात्वर्चिरचिसि-<sup>७</sup>  
चिगु-यस्थकः”<sup>८</sup> एवम्यकू प्रत्ययो भवति । को यग्नवद् भावार्थः । ऋणोत्यर्ण । गम्यते “स्वानपानार्थैः  
मान्तम् अण्णस् । सरति गच्छति सलिलम् । उणादौ “पच सेचने”<sup>९</sup> “धान्वादः पः सः”<sup>१०</sup> “सचते”<sup>११</sup>  
इति सलिलम् । “सचेलिलश्च चत्य लुक्”<sup>१२</sup> । सचेलिलः प्रत्ययो भवति चत्य लुकु च । जडति नीच  
गच्छति जलम् । जड च । शृणाति हिनस्ति तृष्णाम् इति शारम्<sup>१३</sup> । वन्यते सेवते एतत वनम् । कोशते  
कुशम् । प्राणिनेष्ठा तुद्धि नयतीति नीरम्<sup>१४</sup> । मीयते हिनस्ति तृष्णा मीरम् च । तुद्धति तृष्णाम् तोयम्<sup>१५</sup> “तु”<sup>१६</sup>  
सोत्र आवरणार्थो वा । जीवतेऽनेन जीवनम् । जीवनीयम् च । आनुवन्ति समुद्रमित्यापः । आनोतेः क्विप्  
प्रत्ययो भवति । हस्तवश्च । अप्स्त्रिया बहर्य । क्वचिदेकत्वम् । कलीवत्वम् । अपशब्दौ बहुवचनान्तः ।

१ शव गतो न्वादि । बादुलकादर । २ का० उ० ४११ । ३ का० स० ४२४५५ ।  
४ का० स० ४२४५८ । ५ धनु प्रहरणमस्येति व्युत्पन्निर्युक्ता । प्रहरणमिरण् । ६ किरातीति  
किरः । कु विक्षेपे । कप्रत्यय । अततीत्यत । अत सातत्यगमने । पचाश्चन् । किरच्चासावतश्चेति किरात  
इति पूर्णश्चुत्पत्तिः । ७. महादरण्यमरण्यानी तत्र चरतीति विग्रहो युक्तः । ८ इद पाणिनीय ११।८० अत्र  
यमेन्वधिकः पाठः । ९ का० उ० ४५ । १० का० उ० ५४० । ११ का० उ० ४५६ । १२ का० उ० ४६६ ।  
अमति स्वादुत्व गच्छतीति शेषः । रामाश्रमम्भु अमिशवदे इत्यतोऽसुन् प्रत्ययमाह । १३ का० उ० ५३५ ।  
१४ का० उ० २।१० । १५ अर्यते इत्यस्य पर्यायो गम्यते । यतोऽरण्णस् शब्दो नस्प्रत्ययान्तः । ऋगतो ।  
१६ का० स० ३।१२४ । १७ सलति गच्छति निम्नमिति विग्रहे सल् गतौ इत्यस्मात् सलिलत्यनि०  
इत्यादि १।५४७० सूत्रेण साधितोऽन्यत्र । १८ का० उ० ६।३९ ।

“अपश्च”<sup>१</sup> इति घुटि दीर्घः । आपः । अघुट्स्वरत्वात् शसादेन दीर्घः । अपः । “अपः भेदः”<sup>२</sup> इति विभक्तिभे पत्य दः । अद्विदः । अदृश्यः । अपाम् । अप्सु । <sup>३</sup> वर्गदिः शपसेषु द्वितीयो वा । अप्सु । अप्सु । आमन्त्रणे—हे आपः । वेवेष्टि देह शैत्येन ब्याप्तोतीती चिष्ठम् । उभयम् । घनरसः, पुष्करम्, मेघपुष्पम्, पानीयम्, उदकम्, कीरम्, सुवनम्, दकम्, कमलम्, कीलालम्, अनृतम्, कबन्धम्, सर्वतोमुखम्, ५ आनर्त इति नानार्थे ।

**तत्पर्यायचक्रो मत्स्यस्तत्पर्यायप्रदो घनः ।**

**तत्पर्यायोद्भवं पद्मं तत्पर्यायधिरम्बुधिः ॥ १६ ॥**

तस्य पर्यायस्तपर्यायः, तत्पर चरशब्दे प्रयुज्यमाने मत्स्यनामानि भवन्ति । वार्चर, वारिचरः, कृचरः, पयश्चरः, अभ्यश्चरः, अम्बुचरः, पाथश्चरः, अर्णश्चरः, सलिलचरः, जलचरः, शरचरः, वनचरः, १० कुशचरः, नीरचरः, तोयचरः, जीवनचरः, अप्चरः, विषचरः । प्रदयोगे वारिपर्यायशब्दाम्बे घनस्य नामानि भवन्ति । वार्प्रदः, वारिप्रदः, कम्प्रदः, पयःप्रद, अम्भःप्रदः, अम्बुप्रदः, पाथःप्रदः, अर्णःप्रदः, सलिल प्रद, जलप्रदः, शरप्रदः, कुशप्रद, नीरप्रदः, तोयप्रदः, जीवनप्रदः, अप्रदः, विषप्रदः । इत्यादीनि घननामानि । तत्पर्यायोद्भव पद्माम् । वारिपर्यायशब्दाम्बे उद्भवप्रयुज्ये उद्भवशब्दप्रयोगे कमलनामानि भवन्ति । वारुद्भवम्, वार्युद्भवम्, कमुद्भवम्, पयुद्भवम्, अम्भुद्भवम्, अम्बुद्भवम्, पाथुद्भवम् अर्णुद्भवम् १५ सलिलोद्भवम्, जलोद्भवम्, शरोद्भवम्, वनोद्भवम्, कुशोद्भवम्, नीरोद्भवम् तोयोद्भवम्, जीवनोद्भवम् अवुद्भवम् विषोद्भवम् । तत्पर्यायधिरम्बुधिः । वा शब्दा ( शब्दपर्याया ) म्बे धिप्रयुज्ये धिशब्दप्रयोगे अम्बुधिनामानि ज्ञेयान्म । वार्षिं, वारिधि, कन्वि, पयोधि, अम्भोधि, अम्बुधि, पाथोधि, अर्णोधि, सलिलधि, जलधि, शरधि, वनधि, कुशधि, नीरधि, तोयधि, जीवनधि, अविधि, विषधि ।

**पृथुगोमा पदक्षीणो यादो वैमारिणो झाषः ।**

**विसारी शफरी मीनः पाठीनो (३) निमिपस्तिमिः ॥ १७ ॥**

२०

एकादश मत्स्ये । पृथूनि विस्तीर्णानि रोमाण्यस्य पृथुरोमा । पृथुक्षीणि स्पर्शन-रसन-धारण-चक्षु-श्रोत्र-मनासि यत्य स. पदक्षीणः । याति गच्छुति जले, याद । विसरति “ग्रहादेर्णिन्”<sup>४</sup> विसारी मन्त्य इति । स्वार्थेऽणु । वैमारिण । क्षपति जन्मून् दिनस्ति भव । “सु गतौ” । सु गृ ऋ गतौ वा” । सृ विषुर्वा<sup>५</sup> विमरति विमसर्ति वा इत्येवशील, विसारी । “विप्रित्यामाद सत्तेर्णिन् प्रत्यय । अस्यो० २५ ( स्य ) वृद्धि । विमारिन् इति जाते सि । “इनहरु [ पूर्ववत् ] ( पूर्षार्थणा शौ च )” । शक्ति शफरः । शफा ( न् ) व्रायन्ते ( राति ) शीघ्रगत्वाच्छफरी । मीनते हिम्यतेऽन्योऽन्यत, मीनः । अद्विष्टव्यात् पाठयति भद्यत्वेन पाठयते वा पाठीनः । निमिषति परस्पर हिनस्ति हन्तीति वा “निमिष” । “नाम्युपध ( धार् ) पृकृगृजा क.” । तिम्यति जलेनाद्रो भवति तिमि । मत्स्यः, अण्डजः, शकली, विसार, जलचर, शल्की ।

३०

**घनाघनो घनो मेघो जीमृतोऽभ्रं बलाहकः ।**

**पर्जन्यो मिहिगे नग्राद्**

१ का० सू० २।२।१९ । २ का० सू० २।३।४३ । ३ का० सू० य० सू० २५७ ।  
४ का० सू० ४।२।५० इति णिन् प्र० । ५ पा० सू० ३।२।७६ उत्त्रतिम्यामाडि सर्तैरुपसंख्यानम्  
इति काशिकावृत्ति । ६ का० सू० २।२।२१ । ७ निमेपरहितत्वान्मीनानाम् । कोषान्तरेषु तेषामनिमिपसज्ञा-  
दर्शनान्वच अत्राप्यनिमिष इत्येव छेदो युक्त । ८ तु निमिष इति । तदुक्तम्-‘विसार शकली शल्की  
शवरोऽनिमिषस्तिमि’ अ० चिं ४।१।१० । ९ का० सू० ४।२।५।१ ।

नव मेघे । हन हिसागत्योः । इन्तीति धनाधनः । “अच् ‘धनाधन’ इति सूत्रेण धनाधन इति निपातः । अथवा “२चिकिलदचक्नसचराचरचलाचलपतापतवदावदधनाधनपादूपया वा” इति नामभूता सज्जा रुद्धाः । तत्र किलदे “३नाम्युपधात्” कः । कन्सिचरिचलिपतिवदिहिनिपाटयतिभ्योऽच्चप्रत्ययो द्विर्वचननिपातनं चेति । वाशब्दात् किलदः कन्सः, चरः, चलः, पतः, वदः, धनः, पटः, इत्यपि भवति । हन्यते बायुना धन । “४मूर्तौ धनिदच्च ।” अल् । मेहति सिङ्गति भूमिपति भेष । ५ “आच्य “चाम् (हिन्द्यश्च) ” अच् । नमिनो गुण । “५न्यद् कु.६” इन्येवमादीना चजोः कगौ भवत । हश्च (हिन्द्य च) धो भवति । जीवनस्य जलस्य मूत् पुटवन्ध इति निरुक्त्या जीमूत् । जीवन्यनेन भूतानि वा जीमूत् । जीव प्राणने । अब्रन्यप्यो राति वा आब्रम् । अब्र गत्यर्थ । न भ्रश्यति तपो यस्मादित्येके । आगोति मर्वा दिशो वा अब्र कलीवे । ७बलाकादिभिर्हीयते बलाहक । वारिवाहको वा । प्रवर्षति जलं पर्जन्य । उणादौ “पृजी सम्पके” पृड्ने पृणक्ति वा पर्जन्य । “८पर्जन्यपुष्ये” १० इति अन्यप्रत्ययान्तो निपातये । मेहति सिङ्गति विश्व मिहिर । महिर मुहिरश्च । न भ्राजते न शोभते न भ्राद् । “किवन्नाजिपृथुर्विभासाम्” एषा किवन् भवति । अद्व., स्तनयिनु, पयोधर, धाराधर, धूमयोनि, तडित्वान्, वारिद, अमुभूत्, मुदिर; बलमुच् ।

शम्पा सौदामि (म) नी तडित् ॥१८॥

### आकालिकी क्षणसूचिर्विद्युत्

१५

पट् शग्नायाम् । शाम्यति शीघ्र शम्पा । शम्पा च । शम्पित्रति वा शम्पा । सुदाम्ना अद्रिणा एकदिक् सौदामि (म) नी । १०तेनेकदिगित्यर्थ् । शोभनस्य दाम्नो वन्धनरजोरिय सटशी सौदामि (म) नी । सौदाम्नी च । ताडयति तडित् । ताडयतेर्णिलुक् । ताडयति मेष ताडयतेऽसौ वेति तडित् । तान्तम् । आकलयति स्तोककाल रोचते वा आकालिकी । ११“आद् सर्यादाऽभिविध्यो ।” क्षणे क्षणे रोचते शालते क्षणसूचिः । विद्योतते विद्युत् । चपला, क्षणिका, शतहदा, हादिनी, अचिराणुः, २० ऐरावती, चत्रला, चटुला, दिश्या ।

तत्पतिरम्बुदः ।

विद्युत्क्षुब्दाये पतिशब्दे प्रयुज्यमाने आम्बुदनामानि भवन्ति । शम्पापति, सौदामनीपति, तडितपति, आकालिकीपति, क्षणसूचिपति, विद्युत्पति, निर्धारतपति, अशनिपतिः, वत्रपति, उल्कापति, इत्यादिमेघनामानि स्युः । २५

निर्धारतमशनिर्वज्रमुल्काशब्दं च योजयेत् ॥१९॥

चत्वारो वत्रे । निर्हन्यतेऽनेनेति निर्धारतम् । पर्वतादीनश्नाति, अशनिः । “१२श्वन्सुधृत्र॒अ॒म्य-

१ हन्तेर्वन्व च का० वार्तिकम् । अच् धनाधन इत्याकारक वचन न क्वचिदुपलब्धम् । शा० सू० ४।१५५ धनाधन पादूपटम् इति । २ इट तु नोपलब्धम् । चरिच्छिपतिवदीना वा द्वित्वमन्याक् चाम्यासस्य वक्तव्यम् इति कात्या० वा० । ३ का० सू० ४।२।५१ । ४ का० सू० ४।५।५० इति हन्तेरलप्त्र० धनिरादेशस्च । ५ का० सू० ४।२।४८ । ६ न्यद्वक्वादीनाम् इति का० सू० ४।६।५७ इति हस्य घ । ७ बलाकाभिर्हीयते । ओहाद् गतां । कर्मणि क्वन् । अथवा बलेन हीयते आहायते वा क्वन् इति रामाश्रम । पृतोदरादित्वाद् वारिवाहकशब्दस्य बलाहक इति निपातश्च । ८ का०उ० ३।८।६ का० सू० ४।६।५७ । १० तेन प्रोक्षित्यत्तेनेत्यधिकारे “एकदिक्” इति जै० सू० ३।३।८। ११ समानकालावाग्रन्तौ यस्या इति विग्रहे आकालिकडायन्तवचने इति पा० सूत्रेण समानकालशब्दस्याकाल आदेश इकट् प्रत्यये द्वित्वान्डीपि आकालिकीति मूलोक्तमपि साधु । १२ का० ३।०।४३ ।

श्यविवृतिप्रिभ्योऽनिः ।” एभ्योऽनिः प्रत्ययो भवति । “दु उ स्फूर्जा वज्रनिधोषे” स्फूर्जतीति वज्रम् । शूद्रादयः<sup>२</sup>—“शूद्रोग्रवज्रविप्रभद्रगौरभेरीराः” एते रक् प्रत्ययान्ता निपात्यन्ते । पर्वतेष्वपि वज्रति वज्रम् । उषति च्छलति उल्का । उल् इति सोत्रोऽय धातुर्बुर्वा ।

### परिष्टकर्दमः पङ्कः

५ त्रय. कर्दमे । परि समन्ताद् भाराकान्तः सीदति गन्तु न शक्नोतीति परिष्टत् । “३स्तसू द्विषट्-हुहुयजविदभिच्छ्वजिनीराजामुपसर्गे” एषामुपसर्गे तुपतर्गेऽपि नाम्युपधात्स्वप् । कृणोति चेष्टा हिनस्तीति कर्दमः । “४पृथिचरिकदिन्योऽम्” । पञ्चयते विस्तार्यते वर्षकालेन पङ्कः । उभयम् । उणादौ ‘पन च’ पनायते पन्यते वा पङ्कः । ‘पसिपनिभ्या कः’<sup>३</sup> आन्या कः प्रत्ययो भवति । तथा चामरसिह—

“५निपद्वरस्तु जम्बालः पङ्कोऽस्मी शादकर्दमौ ।”

१० निपद्वर, जम्बाल., शाद, इच्चिकिल, चिकित्सशानेकार्थे ।

### तज्जम्

तस्मात् जम् उद्भवम् पङ्कजम्, कर्दमजम्, परिष्टजम्, इत्यादीनि कमलनामानि भवन्ति ।

### तामरसं विदु ।

कमलं नलिनं पद्मं सरोजं सरसीरुहम् ॥ २० ॥

१५ खरदण्डं कोकनदं पुण्डरीकं महोत्पलम् ।

दश कमलनामानि भवन्ति । ताम्यति जन काद्यति तामरसम् । अमरसिहभाष्ये—“ताम प्रकर्पां रसोऽस्य तामरसम् । तमः प्रकर्पाऽथस्तारतम्यवत् ।” केन मस्तकन मल्यते धर्यते कमलम् । श्रिया वासादर्थ काम्यते वा । ‘पटिकमिशुशिकुशिःयः कलः ।’ एम्य कल. प्रत्ययो भवति । कमल च । नला. सन्त्यस्य नलिनम् । नलिनि आकर्पति श्रिय वा नलिनम् । ‘पुलिनलितलिमलिद्रुहिन्य किन’<sup>४</sup> । नल च । पद्यते पाति लक्ष्मीरत्र पश्चम् । “९ अर्तिप्रदुम्बुद्धिशीपदभायालुम्यो म ।” उभयम् । सरसि तडागे जातम् सरोजम् । सरस्या रोहति प्रादुर्वर्ति सरसीरुहम् । १० खरञ्च तदण्डञ्च खरदण्डम् । कोकाश्चकवाका नदन्त्यत्र कोकनदम् । क्लीबे । [ रक्त ] कुमुदम्<sup>५</sup> । रक्तकमलञ्च । विशेषणम् [ कुमुदकमलविशेषे ] । पुणति माङ्गल्यात्वात्पुण्डरीकम् । मट ( मुट ) प्रमदीने स्थाने । पुण्डरित्येके । पुण्डति पुण्डरीकम् । भाष्यकर्तृमन पुण शोभे । पुणति जल्पति २५ शोभा पुण्डरीकः<sup>६</sup> । “अनुनासिकान्ताद्वातोर्द्वं प्रत्ययो भवति । महञ्च तदुत्पल च महोत्पलम् । तथा च हुलायुधः—“पुण्डरीकं सिताम्बुजम्”

१ स्फूर्जतीति विग्रहे स्फूर्जधातो वजादेशो रक्प्रत्ययश्च निपात्य । वज गतौ । वजतीति विग्रहे केवल रक् । २ का० उ० २।१७ । ३ का० स० ४।३।७४ । ४ का० उणादौ एतत्सत्र नास्ति । पा० उ० स० ४।८४ कलिकर्योर्म इप्यमप्र० । ५. का० उ० ५।३० । रामाश्रमस्तु पच्चि विस्तारे कर्मणि हलश्चेति घञ् इत्याह । ६ अमर० १।१०।० । ७ दी० भा० १।१।४०।८ का० उ० ६।१ । ८. का० उ० ६।६ । ९. का० उ० १।५।३ । ११ खरो दण्डो यन्येति विग्रहो न्यायः । १२ अथ कोकनद रक्तकुमुदे रक्तपक्जे इति मेदिनी तदिशेषे प्रमाणम् । १३-पर्फरीकादयश्च पा० उ० ४।२० इति मुढधातो रीकन-प्रत्ययान्तं पुण्डरीकशब्दो निपात्यते । रामाश्रमस्तु पुडिधातोरीकन-प्रत्ययमाह । भाष्यकर्तृमते पुण धातोरीकप्रत्ययो डान्तागमश्चेत्युभय विशेषम् । केवल इप्रत्ययस्तु न युक्तः । १४ हलायुधः ३।५८ ।

**इन्दीवरं चारविन्दं शतपत्रं च पुष्करम् ॥२१॥**

**स्यादुत्पलं कुवलयम्**

सत् नीलोत्पले । इन्दति शोभैश्वर्यं प्राज्ञोति इन्दीवरम् । अरान् राजी विन्दति इति अरविन्दम् । विदूलै लाभे, विद् अग्णूर्वः । अरान् विन्दतीति अरविन्दः । “कर्मणि च विद्” शप्रत्ययो भवति । इति परसूत्रम् । स्वमने—अन्यत्रापि चेति [ कर्मण्यण्<sup>१</sup> ] अण् बाधक । “साहिताति-वेशुदेजिचेतिधारिपारिलिपि(पिण्डिविन्दा त्वनुपर्सों” एषामनुपर्सों शो भवति । चक्रत्याऽवयव अरविन्दम् । पिण्डी (पुण्डरीक) कमलेऽयं तु (अपि) अरविन्दम् । राजविशेषस्तु अरविन्दः । केचित्कलमलेऽपि पु स्त्व मन्यन्ते । शत पत्राण्यस्य शतपत्रम् । क्लीबे । शोभा पौष्ययति पुष्यति वा पुष्करम् । शोभामुत्कर्षेण पलति गच्छतीत्युत्पलम् । कौ बलते प्राणिति कुवलयम् । कुक्षितो बहिर्वलयं पत्रवैष्टनमस्येति श्रीभीजः ।

५

१०

विशेषमाह—

**अथ नीलाम्बुजन्म च ।**

**इन्दीवरं च नीलेऽस्मिन् सिते कुमुदकैरवे ॥२२॥**

नीलाम्बुजन्म । इन्दतीन्दीवरम्<sup>३</sup> । कुवलय [दलनीलेति] सामान्यस्य [नीले] विशेषवृत्ति । अस्मिन् सिते । राजौ विकास करोति चन्द्रेण काम्यते वा कौ मोटते वा कुमुदम् । दान्तञ्च । के उदके जले रौति केरबो हस्, तस्येद प्रिय कैरवम् । क्लीबे ।

१५

**तदूती**

तस्य कमलस्य पर्याये ‘उती’ इति प्रयुक्त्यमाने कमलिनीनामानि भवन्ति । तामरसवती, कमलवती, नलिनवती, पद्मवती, सरोजवती, सरसीहवती, कोकनदवती, पुण्डरीकवती, महोत्पलवती, अरविन्दवती, शतपत्रवती ।

२०

**विसिनी ज्ञेया**

दिनविकासिन्यामेक<sup>४</sup> । विसमस्त्वम्या विसिनी । नलिनी । पुटकिनी । मृणालिनी । व्रततीर्वन्लरी लता ।

**वल्लीनामानि योज्यानि—**

चतुर्वं (चत्वारो व) लृर्याम् । वृणोतीति व्रतती । प्रकृष्टा ततिरस्या व्रतती<sup>५</sup>, व्रततिश्च । जपादित्वाद्वत्वम् । वल्लते वल्लरी । लाति ललति चित्त वा लता<sup>६</sup> । बहुते वेष्टते वल्ली । वल्लादीः । बल्लिगिदन्तोऽुपि । छियामी । वल्ली । व्रातश्च । वीरक् (ध्), गुलिमनी, प्रतानिनी, शारिवा<sup>८</sup>, किर्मी च । वृक्षशाखायामपि ।

१ का० सू० ४।३।१ । २ का० सू० ४।३।५। ३. इन्दतीतीन्दी. लक्ष्मी । सर्वधातुभ्य इन उ० सू० ४।१।१७ इतीन् । कृदिकारादत्तिन इति डीष् च । तस्यावरमिष्टम् इति व्युत्पत्यन्तरमपूर्वम् । ४ एक, विसोनीशद् इत्यर्थः । ५ अत्र चत्वारो वल्लर्यामिति युक्तम् । ६ प्रतनोतीति व्रतति । तन् धातो क्तिच् । तौ च सजायामिति क्तिच् । पृष्ठोदरादित्वात्पस्य व इत्यन्त्र । ७ लति॑ सौत्रो धातुर्वेष्टनाथों लततीति लता । पचायच् इत्यन्त्र । ८ सारिवाशब्दोऽनन्तमूलनामकौषधिविशेषवाचक । किर्मि छो भ्यर्णपुर्णा स्यादपि मालापलाशयोरिति-विश्वलोचनप्रमाणत किर्मिशब्दः । किर्मीशब्दो स्वर्णपूत्री-माला-पलाशवाचक । वृक्षशाखायां लताया वा उभावप्यप्रसिद्धौ । अतोऽत्रेदमेव प्रमाणम्

वारिघिर्वर्णतेऽधुना ॥२३॥

अधुना इदानीं वारिघिर्वर्णते कथ्यते । केन १ भाष्यकर्ता मुनिश्रीमदमरकीर्तिना ।  
साम्राज्य समुद्रनामानि प्रारम्भन्ते—

स्रोतस्विनी धुनी सिन्धुः सूवन्ती निम्नगाऽपगा ।

५ नदी नदो द्विरेफश्च सरिन्नामा तरङ्गिणी ॥२४॥

एकादश नद्याम् । स्रोतः प्रवाहोऽस्यस्या स्रोतस्विनो । धुनोति कम्पते धुनिः<sup>१</sup> । छियामी<sup>२</sup> ।  
धुनी । स्यन्दति जले चलति सिन्धुः । त्रिषु । “स्यन्दे<sup>३</sup> सम्प्रसारण धश्च ।” तटेभ्यो जल स्वति स्ववन्ती ।  
निम्न गच्छति निम्नगा । आ समन्तादाप्नोति अद्भिरगति वा आपगा<sup>४</sup> । आपेन वा गच्छति आपगा ।  
नदत्यव्यक्त शब्द करोति नदी । नदति नदः । “अच्<sup>५</sup> पचादियश्च” अच् । द्वोरेको तटो यस्य द्विरेफः ।  
१० सरति समुद्र गच्छति सरिति । तान्तम् । तरङ्गा सन्त्यस्या तरङ्गिणी । तटिनी, नर्मरिणी, कूलङ्कणा,  
शेवलिनी, सरस्वती, समुद्रान्ता, हादिनी, स्रोत, कर्पु<sup>६</sup>, कुल्या, हीपवती, रोधोवक्ता ।

तत्पतिश्च भवत्यविधिः,

तस्या धुन्या. पतिर्भुनीपतिरित्यादिसमुद्रनामानि भवन्ति । स्रोतस्विनीपतिः, धुनीपति, सिन्धु-  
पतिः, सूवन्तीपति, निम्नगापति, आपगापतिः, नदीपति, नदपति, द्विरेफपति: सरितपति, तरङ्गिणीपति: ।

१५

पारावारोऽमृतोद्भवः ।

अपारवारकूपारौ रत्नमीनाऽभिधाऽकरः ॥२५॥

समुद्रो वारिराशिश्च सरस्वान् सागरोऽर्णवः ।

नव समुद्रे । पारमावृणोति पारावार । अन्तस्योद्भव अमृतोद्भव । अपार वार् जल  
यत्राद्दूरो अपारवा । न कु पृणोति मर्यादापालनाद्कूपारः । इलायुषे—“न कु पृयिवी पिपर्त्ति व्या-  
२० प्नोतीति अकूपारः”<sup>७</sup> । अकूवागोऽुपि । रत्नमीनशब्दयोरग्रे आकरे प्रयुज्यमाने समुद्रनामानि भवन्ति ।  
रत्नाकर, पृथुरोमाकर, पड़कीणाकर, यादाकर, वेमारिणाकर, कपाकरः विसार्थाकर, शफाकर,  
मीनाकरः, पार्टीनाकरः, निमिषाकर, तिष्याकर । ‘उन्दी क्लेदनं’ सम्पूर्व । समन्तादुन्त्यस्मादिति  
समुद्र<sup>८</sup> । ‘स्फायितिच्चवाच्चशक्तिप्रिक्षुदिरुदिमदिमन्दिच्चन्द्र्युदीन्द्र्यो रक्’<sup>९</sup> “अनिदनुवन्वानाम-  
गुणेऽनुपङ्क.”<sup>१०</sup> । तथा च इलायुषे<sup>११</sup>—“मुदन्ति मिश्रीभवन्ति भौमाऽन्तरीक्षनादेयजलान्यत्र समुद्रः”<sup>१२</sup>  
२५ अपरसिंह<sup>१३</sup>—“समुनत्ति समुदः”<sup>१४</sup> । वारिणा जलाना राशिर्विशिष्ठः । सरासि जलप्रसारणानि  
सन्त्यस्य सरस्वान् । सागरस्यापत्य सागर, सगरतनयै खात्वात् । अणासि सन्त्यस्य अर्णव ।

१ धुनोति कम्पयति वेतसादीन् । धुत्र् कम्पयते । किप् । पृयोदरादित्वाचुक् । नान्तवान्डीप् धुनी  
इति रामाश्रमः । २ का० उ० १७ । ३ अद्भिरगतोति विग्रहेऽप पकारस्य जट्वाभावोऽकारस्य  
दीर्घत्वं च पृयोदरादित्वेन निपातात्साध्यम् । ४ का० स० ४२।४८ । ५ अत्र कर्मरिति दीर्घोकारान्तपाठो  
युक्त । तदुक्तम्—कर्पूरनदी करीपाग्न्योरिति शाश्वत ६७२ । ६ यादस् शब्दस्य सकारान्तवाद् याद आकर  
इत्येव न त यादाकर । ७ समन्तादुन्ति आद्रीकरोति भूभागमेतावानेव विग्रह । अत्रास्मादित्यपा-  
दानार्थीकोक्तो नपेक्षणीय । समीचीना मुद्रा जलचरविशेषा यस्मिन् सह मुद्रया मर्यादया वर्तते वेति  
व्युत्पत्त्यन्तरगमयूक्तम् । ८ का० उ० २।१४ । ९ का० स० ३।६।१ । १० सुद ससर्गे चुरादि सम्पूर्व ।  
कथादावदन्ते तत्पाठाच्चुरादिशिञ्चो वैकल्पिकत्वान्मुदन्तीत्यपि पक्षे । समो मकारलोप पृयोदरादित्वात्तत्र  
बोध्य । ११. क्षी० भा० १६।१ ।

तथा च क्षीरस्वामिभाष्ये—“अणोऽस्यास्त्यर्णवः । ‘आर्णसो लोपश्च’ इति वः सलोपश्च ।”  
उदधि, उदन्वान्, तोयनिधिः, जलरशिं वीचिमाली, शशध्वजः । तदभेशा सात-लबणोदः, क्षीरोदः,  
सुरोदः, इन्द्र खादूद, दधुदः, पृतोदः ।

### सीमोपकण्ठ तीरञ्च पार रोधोऽवघिस्तटम् ॥२६॥

सप्त समीपे । पिश् बन्धने । सिनोति बधातीति सीमा । “३घर्मसोमाग्रीष्माऽधमा:” ५  
एते मक्षप्रत्ययान्ता निपात्यन्ते । कण्ठस्य समीपे उपकरणम् । तरन्त्यमान्तीरम् । तरति प्लवते  
इव के तीरं वा । “पिपर्ति वृणोति जलेनेति पारम् । पार्यते समाप्यतेऽस्मिन्निति वा । रुद्धि  
जल वैगेन रोधस् । सान्तम् । उभयम् । अवधानम् अवधिः । “५उपसर्गं दं किं” । तदथते आहन्य-  
तेऽम्भसा तटम् । त्रिषु । तटः । तटी । इन्द्रियो वा । तटि । स्त्रियामी, तटी । कूलम्, कच्छ,  
प्रपात, तीरम् । १०

### भङ्गस्तगङ्गः कल्लोलो वीचिस्त्कलिकाऽवलिः । पाली वेला तटोच्छ्वासौ विभ्रमोऽयगुदन्वत् ॥२७॥

“एकादश तरङ्गे । भज्यते जले स्वयमेव भङ्गः । तरति प्लवते तरङ्गः । “७त्रुपतिभ्यामङ्गः”  
आभ्यामङ्गप्रत्ययो भवति । “कल्पत्यन्तेनेन नव कल्लोलः । कुलित लोडति कल्लोल इन्येक ।  
याति (वयति) गच्छति वीचि । स्त्रियामी, वीची । वृद्धिसुल्कर्णेण कलयति उत्कलिका । स्त्रि- १५  
याम । आ समन्ताद् वलते आवलि । पाल्यते पालि । स्त्रियामी । पाली । वेलयति पूर्णिमादि-  
कालमपदिशति वेला । स्त्रियाम । तटश्च उच्छ्वासश्च तटोच्छ्वासो । तटति तट । उच्छ्वसनम्  
उच्छ्वास । विभ्रमति विभ्रम विकारः । कस्य १ उदन्वतः समुद्रस्य । ऊर्मि, लहरी ।

सम्प्रति मनुष्यवर्ग आरन्यते श्रीमद्भरकोर्णिना—

### मनुष्यो मानुषो मर्त्यो मनुजो मानवो नरः । ना पुमान् पुरुषो गोवा

एकादश मनुष्ये । मनोरपत्य मनुष्य । \* “कुरुनिषादेभ्य प्रथमोऽयत्येऽपि” । कुरुनिषादाभ्या-  
मणीपि मनो मानतश्च । वचचिदद्विस्वरस्य न वृद्धिः । अण्वा । \* मनुष्य । मानुष । मानादौ च ।  
मन्यते सुखद् खादिकर्मित मनुष्यः । “१८मनेहत्य” उत्प्रत्ययः । मानवति मान्यते इति वा मानुष ।  
“१९मानेनम्” उत्प्रत्ययः । उभयम् । २५

१ क्षी० भा० १६ । २ कोपान्तरेपु समुद्रस्य शशध्वज इति नाम नोपलवधम् । कथं  
चित्समानधानपैक्षाशा शशध्वज इति पाठो बोव्य । एशी चन्द्रो ध्वजश्चह्व वशप्रस्थापक यस्येति  
तद्विग्रहः । चन्द्रस्य समुद्रप्रभवत्वं पुराणप्रसिद्धम् । ३ का० उ० १५६ । ४ तृः झवनतरणयो । क-  
प्रत्यये ऋत इर्दीर्यत्वं च । अत्रोणादि शरणम् । सरलं पन्थास्तु पार तीरं कर्मसमानो । ततस्तीरय-  
तीति विग्रहं पचायच् । ५ पालनपूरणयो पृष्ठानुस्तेन पिपर्तीन्यस्य पूरयतीति पर्यायो युजो न तु  
वृणोतीति । ज्वलादित्वाण्ण । क्षीरस्वामी तु परे पाश्वेभव कूलम् पारम् इत्याह । ६ का० सू० १५१७०  
इति किः । ७. का० उ० ५१२२ । ८ कल्ल अव्यक्तं शब्दे कल्लन्ते इत्यस्य शब्दायन्ते इत्यर्थः । उणा-  
दित्वादोलच्छ्रूपः । क जलम् तस्य लोलश्चन्त्वलोऽवयवः । अनुस्वारस्य परसवर्णो लकार इति गमाश्रमः ।  
९ वेष्ट संवरणे । वेत्रो डिच्च उ० सू० ४१३२ इतीचिप्र० । १०. \*एव चिह्निताशस्थाने “मनो पण्ड्यैः”  
का० सू० ४९३ इति व्यष्ट प्रत्ययो इति पाठो युक्त । ११ का० उ० ६११० । १२. का० उ० ६१११ ।

“उद्गीय वाङ्छित यान्तो चरमेते भुजङ्गमाः ।

न पुनः पक्षर्हानतत्त्वात् पड्गुप्रायन्तु मानुषम् ॥”

प्रियते मर्त्यं । “‘इस्यः’ स्वार्थं त्यो वा । मनोर्जातं मनुजं । मनोरपत्यं मानवः<sup>१</sup> ।

५ नृणाति विनयति नरः, ‘योन्रुप्रायणे’ नयतीति वा । “‘नियो डाङ्गुबन्धश्च’ । अस्मात् ऋन् प्रत्ययो भवति, स च डाङ्गुबन्धं इष्टतेऽन्तस्वरादिलोपार्थः । पूर्यते कुलमनेन सान्त-पुमान् । उणादौ पूडः पवते पुनातीति वा पुमान् । “‘सिर्मनन्तश्च’ । अस्मात्सिं प्रत्ययो भवति, अस्य च मन् अन्तं चकाराद् हम्बत्वं च । इकारं उच्चारणार्थं । पुरि पुरि शयनात् पूरणादा पुरुषः । पूरणाति पूर्यति वा स्त्राणामुदरं गर्भेणति पुरुषः<sup>२</sup> । “‘पुणाते ३ कुषः’ । अस्मात्कुषं प्रत्ययो भवति । कोऽनुबन्धः । अन्येषामर्वाति वा दर्शवं । पुरुषः । लत्वे पुरुषः, पुलुपश्च । “‘गुणं परिवेष्टने’ । गुण्यति गोधारा<sup>४</sup> ।

१०

घवः स्यात्तरपतिनृपः ॥२८॥

तस्य मनुष्यशब्दस्याग्रे घव-पतिशब्दप्रयोगे नृपनामानि भवन्ति । मनुष्यघवं, मानुषघवं, मनुजघवं, मनुजघवः, मानवघवं नरघवं, मृघवः, पुम्घवं, पुरुषघवं गोधाघवः । मनुष्यपतिः, मानुषपतिः, मनुजपतिः, मानवपतिः, नरपतिः, नृपतिः, पुम्पतिः, पुरुषपतिः गोधापतिः ।

१५

भृत्योऽथ भृतकः पत्तिः पदातिः पदगोऽनुगः ।

भटोऽनुजोद्यनुचरः शख्जीवी च किङ्करः ॥२९॥

एकादशं सेवकं । भ्रिवते इति भृत्यः । “‘भृतोऽमज्ञायाम्’ । भ्रियते गजा भृतः । स्वार्थं क । भृतकः । पतति अधो गच्छति पत्तिः<sup>५</sup>, पतन वा । [पदान्याम] अतति [पदातिः<sup>६</sup>] । पदातिकः ।

ओराणादिक इक । ६ विनयादित्वात्वार्थे ठण् । पदभ्याः<sup>७</sup> गच्छतीति पदगः । अनु पश्चाद् गच्छति अनुगः । भटति युद्धं विभर्ति भटः । अनुजीवतीत्येवशीलं अनुजीवी । अनु पश्चाचरतीत्यनुचर ।

२० शन्तैराण आयुरेन जोवतीत्येवशीलं शख्जीवी । कि कुत्सितं कार्यं विद्वाति किङ्कर । सहायं, सेवकं, पदज्ये, पद्गः पदिकत्र । तथा च यशस्तिलके-(श्लो० १३०)

“सत्यं दूरं विहरति सम माधुभावेन पुसा धर्मश्चित्तात्सह करुणया याति देशान्तराणि ।

पापं शारादिव च तनुते नाच्चवृत्तं सार्वं सेवावृत्तेः परमिह परं पातकं नास्ति किङ्चिचन ॥”

स्त्री नारी वनिता मुग्धा भामिनी भीरुङ्गना ।

२५

ललना कामिनी योपिद् योषा सीमनितनीति च ॥३०॥

१ का० उ० ६१२ । २ वाणपत्ये का० र०० पू० ४७३ इत्यण् । ३ का० उ० २११ । ४

माति पुनाति वा पुमान् । पातेड्मुन् पूजा हुम्मुन्, पा० उ० ६१७० इति दुम्मुन् इति प्रक्रियाऽन्यत्र । ५ का०उ० ८४२ । ६ पुरि शयनादिति तु निरुक्तप्रकारो विग्रहस्तु पुणातीत्यादिरेव । ७. का०उ० ३५४ ।

८ गोधाशब्दस्य पुरुषार्थे कोषान्तरप्रमाणं नोपलब्धम् । तदुक्तम्— गोधा तलनिहाक्योः’ विंलो० । गोधा प्राणिर्विशेषे स्यज्ज्याप्रात्यय च वारंगे । आकारान्तलीलिगत्वं च सर्वत्रास्योक्तम् । अ०स० २४३। अतोऽस्य

मूल मृग्यम् । गोद इति पाठे तु गोदो मस्तिष्कमस्यात्तीति गोदं मुख्यमस्तिष्कवत्वात् पुरुष इति समाख्येयम् । तदुक्तम् गोद तु मस्तकस्नेहो मग्निको मन्तुलुङ्क अ० चि० ३।२८९ । ९. का० स०० ४।२।२५ इति क्षप् । १० ओराणादिकस्ति, किंचक्तो च मशायामिति वा किंच । पतन वा इति व्युत्तिस्त्वप्रासङ्गि-कत्वादुपेद्यता । ११. अज्यतिन्यां च पा०उ० ४।२।३० इत्यतेरन्तः । पादस्य पदाज्यातिहतेषु इति पदादेशश्च ।

१२ विनयादेष्टण् जै० स०० ४।२।४० । १३ पदान्या पदान्या वेसि वक्तव्यम्, न तु पदन्यामिति । पाद इत्यापते । पादस्य पदाज्यातीति पादस्य पद ।

नितम्बिन्यवला वाला कामुकी वामलोचना ।  
भामा तनूदरी रामा सुन्दरी युवती चला ॥३१॥

दाविशति: छियाम । “स्तु आच्छादने” सृष्टात्याच्छादयति स्वदीषान् परगुणानि-  
ति खी । उणांौ । सृष्टात्याच्छादयति लज्याऽमानमिति खी । स्तुणतेष्ट् ” प्रत्ययो भवति ।  
अकामात्रः । “रमुर्वर्णः” । अथवा इत्प्राठः । डाङुबन्धोऽस्त्वस्वादिलोपार्थः । डकारो ५  
नदाचर्थः । रकारमात्र एव । अमरसिहमान्ये—“स्त्यायत्य(तेऽ) स्या गभः स्त्री ।” तथा च हलायुधे—  
“स्तूणाति विवेकमान्द्वर्त्ता स्त्री” । नरस्य खो जातिश्चेतनारी । नर वनति भजते वनिता । मुह वैचित्र्ये  
कार्येषु मुहति मुग्धा । मुहंधर्मकृ हस्य गः ।” भामते कुप्यते (ति) भामिनी । [भामः] क्रोधोऽस्यस्याः  
वा भामिनी । विभेन्यस्माद्(त्यसौ)भीरु । “भियो रग्लुकौ च ।” भीरुः । प्रशस्तान्यङ्गान्यस्या अङ्गाना ।  
लाडयति (लडति) विलमति, ललयति (ललति) नरमीप्सते वा ललना । “लल ईसायाम” । भोगान् १०  
कामयते कामिनी । उपै. सौत्रोऽय धातु सेवाऽर्थे । योषति पुरुष गच्छति रत्तच्छया आत्मनो योषा ।  
“कष शिव जप भष दष मष रष रिष यूष जृष हिसार्था ।” योषति हिनस्ति हन्तीति योषित् । “हस्तउड़ि-  
रुहियुषिभ्य इति ।” एव्य इतिप्रत्ययो भवति । इकार उच्चारणार्थः । अमरसिह—“योनि पुसा योषित् ।”  
अजादित्वादा प्रत्यये योषिता च । सीमन्तोऽस्त्व्याः सीमन्तिनी । बधाति चित्त बधः । नितम्बोऽस्यस्या  
नितम्बिनी । न विद्रते बलमस्या अवला । ‘‘बा’ सोभाग्य लाति गह्लातीति वाला । ‘‘कमु कान्तो’’ कम् । १५  
“कमेरिनद् कारितम्” इन् । “श्रस्योप०” दीर्घं । कामयते इत्येवशीला कामुकी । “ शकमगमहन्तुष-  
मूस्थालपपतपदामुकत्र ।” १ कारितलोप । “ निमित्” दीर्घाभाव । ज्ञाराऽनुवन्वत्वात्पूर्वस्योप० दीर्घं ।  
वामे मुन्दरे लोचने नेत्र यम्या सा वामलोचना । “भाम क्रोधे” चुरादो । भामयति । “भाम क्रोधे”  
वादावकाराऽनुवन्ध आत्मनेपदी । भामते भामा । चक्षुदोषादिदर्शनात् । तनु सूक्ष्मसुदर यस्या सा  
तनूदरी । नरेषु रमते, मनासि रमयति वा रामा । २ सुदु द्रियते आदियते ज्ञोऽनु शोभनो दरो २०  
वराऽच्छिद्रमस्या वा । ३ सुन्दरी । अथवा ‘‘सुन्दर’ इति सौत्रोऽय धातु । युवतशब्दादादिविहितमि ।  
युवतिं । यु मिश्रणे यानि नगन् मिश्रयति आंशादिको वा आति युवति । छियामा । युन्ती ।  
युनीत्यन्य । तथाहि प्रयोग —

“भर्ता मगर एव मृत्युवमति प्राप्तः सम्बूद्धन्वुभिः ,

यूनी काममयं दुनोनि च मनो वैघव्यदुःखाद वधः ।

वालो दुस्त्यज एक एव च शिशुः कष्ट कृत वेधसा,

जीवामीति महीपते प्रलपति यद्वैरिसीमन्तिनी ॥”

चलचित्तान्पुरुपान् चालयतीति चला ॥” । वामनेत्रा पुरन्त्री, वासिता वर्णिनी, प्रमदा, रमणी,

२५

१ का० उ० ८३६ । २ का० सू० १२१० । ३ क्षी० भा० २६२ । ४ का०उ०  
६०८४ इति धिक् प्र० हस्य गश्च । ५ का०सू० ४४५६ । ६ का०उ० १३५ । ७. क्षी० भा०  
२६२ । ८ का० रू० ३० ४६२ । ९ का० सू० ४१०३४ । १० करितस्यानामिद्विकरणे का० सू०  
३१६।४४ इतीनो लोप । इन् कारितमज्ञा कातन्त्रव्याकरणे । ११ निमित्तापाये नैमित्तिकस्याप्यपाय इति  
परिनाषेन्दुशेखरे अकृतव्यूहपरिभापार्थरूप । १२ रमते रामा । ज्वलादित्वाप्ण । रमयतीति तु न युन्म,  
प्यन्तस्य ज्वलादित्वामावात् । १३ सु अतीव उनात सुन्दरी । उन्दो क्लेदने । बाहुलकादप्र० । शकन्धवादि-  
त्वादुकारस्य पररूपम् । गौरादित्वान्दीप् इति रामाश्रम । १४. का० सू० २४४५० । १५ चलचिर्दि-  
पुरुषैश्वलती त चलत्येव विग्रह । पञ्चायत्र । णिजन्तातु चाला इति स्यात् ।

दयिता, प्रतीपदर्शिनी, कान्ता, वशा, महिला, महेला च ।

भार्या जाया जनिः कुल्या कलत्र गेहिनी गृहम् ।  
महिला मानिनी पत्नी तथा दाराः पुरन्धयः ॥३२॥

दश कलत्रे । डुभूत्र धारणापोषणयोऽ । भ्रियते पुष्यते गर्भेण भार्या । “<sup>१</sup>ऋवर्णव्यञ्जना-५ न्तात्प्यण्” । यकारमात्र । अत्योपधावृद्धि । भार्या इति जातम् । “<sup>२</sup>ख्यामादा” । आप्रत्यय । प्र० सि । “<sup>३</sup>श्रद्धाया सिलोपम्”<sup>१</sup> मिलोप । “ज्या वयोहानौ” जा (जि) नाति जाया । जनी प्रादुर्भवे च’ । सुखी जायते आत्मा उत्र जाया । “<sup>४</sup>सन्ध्यादय—सन्ध्या बन्ध्या जाया इत्यादय शब्दाः यकृत्ययान्ता निपात्यन्ते । जनयति पुत्राञ्जनिः । इ” सर्वतुम्य” । कुले साधु कुल्या “यदुगवादित” । “कड मदे” कड तांदादि । कडति मायति योवनेनेति <sup>२</sup>कलत्रम् । “अमिनक्षिकडिभ्योऽत्र” अत्रप्रत्यय । १० कडत्रम् । डलयोरैक्यम् । प्रथ मि० नपु० “अका० सुरा० । <sup>३</sup>मोऽनु० । गेहमस्त्यस्था गेहिनी । “ग्रह उपादाने” । गृहात् प्रत्युपार्जित गृहम् । “<sup>४</sup>गेहेत्वक्” अकृपत्यय । “ग्रहिज्या”<sup>५</sup>—सम्प्रसारणम् । मद्यते पूज्यते । मोहल्ला । मान प्रणयकोपीऽत्या मानिनी । पति पतति याति पत्नी । “द विदारणे” । द० क्र० । दोर्यते शतवण्डीमवति पुरुष एमिरिति दारा । “<sup>६</sup>भावे” वृत्र् । अकारमात्र । <sup>७</sup>वृद्धि । दार इति जातम् । प्रथमा जम् । प्रया बहुत्व च । पुर धमयन्ति, नेत्रान्ते पुर शरीर धरन्तीति <sup>८</sup>पुरन्धयः । १५ ज्ञेत्रम्, सहधर्मचारिणा, ग्रहा, महचरी, सहचरा<sup>९</sup>

वल्लभा प्रेयसी प्रेष्टा रमणी दयिता प्रिया ।  
इष्टा च प्रमदा कान्ता चण्डी प्रणयिनी तथा ॥ ३३ ॥

एकादश वल्लभायाम् । वल्लते पत्युश्रित्त सवृणोतीति वल्लभा । “<sup>१०</sup>कृशलिगर्दिरासि-वलिवलिम्योऽम्” अम प्रत्यय आप्रत्यब्ध । अतिशयेन प्रिया प्रेयसी । “तर<sup>११</sup>तमेयच्चिष्ठ” प्रकर्षा<sup>१२</sup>यं २० तर तम ईयसु इष्ट्वा इत्येते प्रत्यया मवन्ति । अतिशयेन प्रिया प्रेष्टा । रमते जनोऽत्र, मनासि रमयति

— — — — —  
 १ का० स० ४२० ३५२० इति ध्यणप्रत्यय । २ का० स० २४४४३ । ३ का० स० २११३७ ।  
 ४ का० उ० ४१३० । ५ का० उ० ३१४ । ६ का० स० २६११ इति यत्प्र० । ७ का० उ० ३१५  
 गठ सेचने । गडति गड्यते वा “गडेरादेश्चकः” पा० उ० इत्यत्रन् । डलयोरेकवम् । कड शासने मदे ।  
 कडति कृच्यत वा बाहुलकादत्रन् । कल मधुर ध्वनि त्रायते रक्षति वा । त्रैदू पालने क इत्यन्यत्र ।  
 ८ अकारादसमुद्भो युश्च इति पूर्णे का० स० २१२७ इति सेलोपो युरागमस्त्व । ९ मोऽनुस्वार  
 व्यञ्जने इति पूर्ण का० स० १११५ इत्यनुस्वार । १० का० स० २१२० ४१२० । ११. का० स० ३४४२  
 ग्राहज्याव्याप्त्यावप्तिव्याचप्रिच्छिव्यवस्थित्वात्प्रस्त्रीजामगुणो इति पर्णात्पूत्रम् । १२ का० स० ४५११३ । १३ का०  
 स० ३१६५ । अस्योपद्राया दीर्घो वृद्धिर्नामिनामिनिचट्शु इति सूत्रस्वरूपम् । १४ स्यातु कुटुम्बिनी पुरन्त्री  
 २१६६ । इयमरादिकोशेषु दर्शनामान्तपुरन्त्रीशब्दस्यैव सत्वादत्र पुरन्धय इति पाठोऽयुक्त इति न  
 भ्रमितव्यम् । पुर धरन्तीति विग्रहे “ग्रन्त इ” पा० उ० ८११३ इति इ । पृष्ठोदरादित्वात्पुरोऽुकारान्तत्व  
 मुमागमन्तनि रोत्या तस्यामुपत्ते । अत एव “तौ मनातकैवन्युमता च राजा पुरन्विभित्व क्रमश  
 प्रयुक्तम्” इति रघु । पुरन्वमयन्तीति न विचारसहम्, तत्सावकानुशासनविरहात् । १५. भार्यादिपुरन्धयन्त-  
 शुद्धेषु सामान्यविशेषप्रभावादर्थभेदो न विसर्तव्यः । तद्यथा—नाया, जाया, कुल्या, कलत्र, गेहिनी, ग्रह, पत्नी  
 दारा परिणातद्वावाचका । महिलामानिन्यौ विशिष्टनायिके । पुरन्त्री पतिपुत्रती । १६. का०उ० ३१२ ।  
 १७. एतच्च कातन्त्रसूत्र नोपलव्यम् । गुणाङ्गादेष्टेयम् शा० स० ३४४७५ इतीयमुपत्ययो वौध्य ।

वा रमणी । नरेणु दयते गच्छति ईषे वा दयिता । प्रीणति पतिचित्त रज्जयति प्रिया । हज्जते इध्यते वा इष्टा । प्रकृष्टो मदोऽस्या प्रमदा । काम्यते नरेण कान्ता । चण्डते कुम्यति चरणी । चण्डिका च । प्रणयोऽस्या अतीति प्रणयिनी ।

सती पतिव्रता साध्वी पतिवत्येकपत्यपि ।

मनस्विनी भवत्यार्या—

५

सप्त पतिव्रतायाम् । एक पतिरस्तीति संती<sup>१</sup> । पतिव्रत करोति पतिरेव व्रत सेव्यो मान्यो यस्या इति वा पतिव्रता । पतिसेवैव व्रत यस्याः पतिव्रता । यत् ति —“नास्ति<sup>२</sup> छीणां पृथग्यहो न व्रतमिति”<sup>३</sup> साधयति साध्वी । पतिरस्या अस्तीति पतिव्रती<sup>४</sup> । एक पतिर्यस्याः सा एकपती । मनोऽस्या अस्तीति मनस्विनी । अर्थते सेव्यते आर्या । सुचरिता ।

विपरीता निरूप्यते ॥ ३४ ॥

मया धनञ्जयेन, भाष्यकर्त्ता अमरकीर्तिना वा कव्यते विपरीता असदाशा ।

१०

बन्धको कुलटा मुक्ता पुनर्भूः पुंश्चली खला ।

पद्म बन्धक्याम् । बन्धाति तहणचित्तानि बन्धको । कुलमठति कुलटा । तथा चोणादौ “टल ट्वल वक्लये” हेताविन । अस्योपवाया दीर्घ । कुलपूर्व । कुल टालयति कुलटा । “कुले” टाले-रिलुक् इश्वर्<sup>५</sup> कुले उपपदे टालेरिलन्तस्य इः प्रययो भवित इल्कुच । स्वाचार मुक्तये ( तम ) पत्या जनेर्वा मुक्ता । पुनर्भवतीति पुनर्भूः पुमास चालयति पुंश्चली । वा पञ्चेन्द्रियोत्पन्नमुख लाति गृह्णातीति १५ खला, अन्यपुरुषत्पत्त्वान् । पाशुला, स्वरिणी, असती, इत्वरी, धर्षणी, अविनीता, अभिसारिका, चपला ।

स्पर्शार्डभिसारिका दृती स्वैरिणी शम्फली तथा ।

पञ्च दूर्याम् । ‘स्पृशा सप्तर्षा’ । स्पृशति, स्पृद्यति, अस्त्राह्नीत् पस्पर्श वा वज् । स्पर्श । “पद्<sup>६</sup>-रुज्जिविशस्तुशोचा धन”<sup>७</sup> । नामिन<sup>८</sup> श्रु गुण । “ज्ञियामादा” आप्रत्यय । स्पर्शा । पुरुषान्तरमभिसरति अभिसारिका । दूर्यन्तेऽस्या<sup>९</sup> मालयात दृती । “ईर् गतौ कम्पने च”<sup>१०</sup> । ईर् । ईरणम ईर् । “भावे”<sup>११</sup> धन् धर्य । त्वस्य ईर्, धर्व । त्वरौ विग्रहेऽस्या स्वैरिणी । “तदस्याऽस्तीति” मन्तव्यत्वीन्<sup>१२</sup> इन् । “‘नदाद्यजिज्ववाहू’ इ ग्रन्थयः । रपूवणम्य<sup>१३</sup>” नस्य खत्वम् । श मुखम् कलति निष्पादयतीति शम्फली । तथा तेनैव प्रकारेण ।

गणिका लज्जिका वेश्या रूपार्जीवा विलासिनी ।

पण्यस्त्री दारिका दार्मा कामुकी मर्ववल्लभा ॥ ३६ ॥

२५

नव वेश्यायाम् । गण, पेटकोऽस्त्वया, गगायतीश्वरानीश्वरो वा गणिका । ‘लजि लाजि लाजा लज तर्ज भर्त्सने’ । लज्जयति निः स्वान्युष्मान् तर्जयतीति लज्जिका । वेशो वेश्यावाटे भवा वेश्या<sup>१४</sup> । हृषेण आ सप्तन्ताजीवतीति रूपार्जीवा । विलासोऽस्याऽस्तीति विलासिनी । तथा चोकम्—

“हावा मुखविकारः स्याद् भावाश्चित्तसमुद्भवः ।

विलासो नेत्रज्ञो झेयो विभ्रमोऽत दग्नतयोः ॥

३०

<sup>१</sup> अस्प्रातो शृतप्रत्ययान्तो दीव्रतः सतीशब्द । <sup>२</sup> “नास्ति छीणा पृथग् यज्ञो न व्रत नाप्युपोवणम् । पर्ति शुश्रूपते येन तेन स्वर्गे न हीयते” इति मनुस्मृतिः ५।१५५। <sup>३</sup> पतिवर्ती, एकपती इति पाठी युक्त । ४ का० ३० ५।४७। <sup>५</sup> का० सू० ४।५।१। <sup>६</sup> का० सू० ३।५।२ नामिनश्रोपवाया लघ्रो इसि पूर्णसत्रम् । <sup>७</sup> दूर्यन्ते परित्यन्ते । अस्य कर्तार छीपुमासः । <sup>८</sup> का० सू० ४।५।३। <sup>९</sup> का० सू० २।६।१५। <sup>१०</sup> का० सू० २।६।५०। <sup>११</sup> का० सू० २।४।४। “रूपवर्णेभ्यो नोममन्त्य खरहयकवर्गाऽन्तरी इपि” इति पूर्णे सूत्रम् । <sup>१२</sup> वेशेन नेपथ्येन शोभते, “कर्मवेशाद्यत्” इति यत् । वेशो भवा दिगादित्वाद्यत् ।

पर्याप्तं छी परायनली । परिमाणं कृत्वा रमयतीत्यर्थः । दृष्ट्याति विदारथति कामिनम् दारिका ।  
दस्यति परिकर्मणा क्षयति, ददात्यात्मानं वा दासी । दाशी । तालव्यदन्त्यः । कामयते इत्येवंशीला  
कामुकी । सर्वेषां पुरुषाणा वल्लभा सर्वव्यलुभा । सैरिन्प्री ।

“‘चतुःषष्ठिकलाभिज्ञा शीलस्थपादिसेविनी ।

प्रसाधनोपचारज्ञा सैरिन्धी कथ्यते बुधैः ॥”

## गन्धकारिका । पण्यस्त्री च ।

कान्तेष्टै दयितः प्रीतः प्रियः कामी च कामुकः ।

वल्लभोऽसुपतिः प्रेयान् विटश्च रमणो वरः ॥३७॥

त्रयोदश कान्ते । काम्यतेऽभिलास्यते कान्त । इध्यते इष्ट । दया कृपा सजाता अस्येति द्वयितः ।  
 १० “तारकादिदर्शनात्सजातेऽयं इतच् ।” “इवर्णवर्णयोलोप । स्वरे प्रत्यये पे च ।” आकारलोप । सौरेकः ।  
 प्र प्रक्षेपण इ कामसुखम् इत प्राप्तः श्रीत । पूपोदारादित्वात् आकारलोप । प्रीणातिस्थं श्रीतः ।  
 प्रीणाति प्रीणीते वा प्रियः । “नाम्युपध्रीकृगृजा कः” । “स्वरादाविवर्णोवर्णान्तस्य धातोरिजुवौ ।”  
 कामोऽस्थात्मीति कामी । कामयते इत्येवशील कामुक । वल्लते वल्लभः । “कृशशलिगदि-  
 रासिवलिवलिभ्योऽभः ।” अभ प्रत्यय । असूना प्राणाना पति । असुपति । अतिशयेन प्रिय प्रेयान् ।  
 १५ “प्रियस्थिरस्कोरुबहुलगुरुवृद्धन्तप्रदीर्घवृन्दारकाणा प्रस्थस्कवर्हाहिगर्वीर्त्तिवृद्धाधिवृन्दाः ।” विट शब्दे-  
 विटति कामोद्रेकशब्द करोतीति विटः । “इगुपघेति क । ‘रमु क्रीडायाम् ।’ रम । रमते करिन्चत् ।  
 त प्रयुक्ते इन् । अस्योपधादीर्घः । “मानुवन्धाना हस्तः ।” रमयतीति रमणः । “नन्द्यादेव्यु ।”  
 १६ “युवुक्षानामनाकान्ता” अन् । “कारितस्य” कारितलोपः । “रपू” नस्य गत्वम् । वृणोति वर-  
 यति वा वर । कमिता । पति । वरयिता । भर्ता । भोक्ता । धवः । सृच्य । अभीक । “अभ्य-  
 २० नुभ्या कामपितरि को वा दीर्घस्च” जनयति कः । अभिक । अमुक । प्राणाधिनाथः । सेन्ता ।

## सवित्री जननी माता

त्रयः मातरि । सूते जनयति सखिश्ची । जनयति जायतेऽस्या वा जननी । माति गर्भोऽत्र  
१० मानयति वा माता । श्रव्या ।

जनकः सविता पिता ।

२५ त्रयं पितरि । जनयति उत्पादयतीति जनकः । पुत्रान् सृजते (सृते) सविता । अहितान् पाति रक्षतीति पिता । “उणादौ” पा रक्षणे, पातीति पिता । ‘स्वमादयः’<sup>१८</sup> । ‘स्वसुनपृनेष्टुत्वष्टु क्षत्त्वहोउप्रासाल्पिन्मातृहितजामातृभातरः’ एते शब्दास्तुनप्रत्ययान्ते । निपात्यन्ते ।

१. 'चतुर्षिंगिकलाभिमित्रा शीलस्तुपदिसेविनी । प्रसादनोपचारजा सैरस्त्री स्ववशेति चेति कात्य' इत्यमरकोशे शब्दोऽस्वां । २ का० रू० पू० ५०८ । ३ का० सू० २१६।४४ । ४ का० सू० १।२।५१ । ५ का० सू० ३।४।५५। इतीपु । ६ का० उ० सू० ३।१।२ । ७ पा० सू० ६।४।१५।७। इति प्रियशब्दस्य प्रादेश । ८. "हुगुघासाप्रीकिर क." पा० सू० ३।१।१।३।५। ८ का० सू० ३।४।६।५। इति हस्त । १०. का० सू० ४।२।४।४। इति युप्रत्यय । ११ का० सू० ६।६।५।४। इति योरनादेश । १२ का० सू० ३।६।४।४। इतीनो लोपः । १३ का० सू० २।४।४।८। १४ कातन्त्रे नैतस्त्रमुपलब्धम् । जैनेन्द्रियाकरणो-“शृद्धस्वलिकोदिक्षेके” त्वादि सूत्रम् १।१।१७। तेन कप्रत्ययान्तः पक्षे दीर्घान्तश्चाभिमित्रोऽभीक इति निपातितं । १५ मानयतीर्थं, विग्रहस्तु मातीत्वेव । मा माने । तच प्रत्ययान्तः । १६. का० उ० २।४।२।

देहापघनकायाङ्गं वपुः संहननं ततुः ॥ ३८ ॥  
कलेवरं शरीरं च मर्तिः

अस्मिन् भवः

अस्मिन् काये भवः कायमव । देहमव । अपघनमव । अङ्गमव । वपुर्मव । सहनम-  
भव । तनुभव । कलेवरभव । शरीरभव । मूर्तिभव । कायज । देहज । अपघनज । अङ्गज ।  
वपुर्ज । सहननज । तनुज । कलेवरजः । शरीरजः । मूर्तिजः । एतानि पुत्रनामानि भवन्ति । भव २०  
प्रयोगे ।

सूतः ॥

पुत्रः सनुरपत्यं च तुक् तोकं चात्मजः प्रजा ॥३६॥

अष्टौ पुत्रे । सूयते सुते । पुनातीति पुत्रः । “१०८पूजो हस्तश्च” अस्मात् व्रक्प्रत्ययो भवति धातोहस्तश्च । कोगुणार्थं । तथा च सोमनीलाम्<sup>१५</sup>—“य उत्पन्नः पुनाति वशं स पुत्रः । अथ २५ पुनास्तो नरकात्मायते वा पुत्रः । सूयते सूनुः । “१०९सूविष्ण्या यावत्” आन्या तु प्रत्ययो भवति, स च यावत् ।” पूढ़ प्राणिगर्भविमोचने ।” पल शल पत्लु पये च गतौ ।” पत् नञ्जपूर्व । न पतन्ति येन जातेन पूर्वजा नरकादौ तदपत्यम् । “नन्जि<sup>१६</sup> पतेर्य” यप्रत्ययः । नस्य<sup>१७</sup> तत्पुर्व सि । नपुर्व

१. का० स० ४२५५। २. का० स० ४५५५। इत्यलं घन्यादेशश्च । ३. का० स० ४५५३५। ४. का० उ० २१४६। ५. का० उ० ११३१। ६. कले शुक्रे मधुराव्यक्तव्यनी वा वर श्रेष्ठम् । “हलदन्तादि” ति सप्तम्या अलुक् । इत्यन्त्रय । ७. क्षीर० भा० २।६।७०। ८. का० उ० ३।४४। ९. का० स० ४५५। १०. का० स० ४६।८०। ११. का० स० ४१५५। १२. का० स० ३।८।१४। १३. “व्यञ्जनमस्त्वर पर वर्णं नयेत्” इति पूर्णं कातन्त्रसूत्रम् । १।१।२।१। इति व्यञ्जनस्य पर-वर्णयोगः । १४. “रेकसोर्विसर्जनीय” इति पूर्णम् । का० स० २।३।६३। इति सकारस्य विसर्गं । १५. का० उ० ४।४।१। १६. नी० वा० समु० ५ स० १। १७. का० उ० २८।१८ का० उ० ६।३।०। १८. “नन्यं तत्पुरुषे लोप्य” इति पूर्णम् । का० स० २।४।२।२। इति नलोप ।

अका० । मोऽनु० । तोजति तुक् । स्त्रयते तोकम् । आत्मनो जात आत्मज । प्रकर्पेण  
जाता प्रजा । “सप्तमीष्वचम्यन्ते जनेऽर्ड ।” बाल, पाक, अर्मक, गर्भपोतश्च । पृथुक, शिशु,  
शाव, डिम्ब, वटु, माणवक, भ्रूण ।

उद्धवस्तनयः पोतो दारको नन्दनोऽर्भकः ।  
स्तनन्धयोत्तानशयौ-

५ अष्टो बालक । उद्धवतीति उद्धव । खश् । तनोति विस्तारयति वशम्, तनयः । “तनेऽ  
क्यं ।” पवते वातेन पोत । दारयति दणाति वा तस्यणीना मनासि “दारक । ‘दुनदि समृद्धौ ।’  
नद् । अत एव नन्द् । नन्दति कश्चित्तमन्यः प्रयुक्ते । “धारोश्च होतो ( हेतौ )” इत् । नन्दयतीति  
नन्दन् । “नन्दि” वासिमादिदूषिषाधिशोभिर्विर्धिन्य इनन्तेभ्योऽसज्जायाम्” युप्रत्ययः । स्वमते “नन्दादे-  
र्यु” यु प्रत्ययः “युक्तानाम०”— इति युश्याने अनः । “कारितस्यानामिं कारितलोप ।  
१० अर्ह मह पूजायाम्” अर्हत्यर्भक । “मूकादय ।” मूकयुक्ताऽर्भकपृथुकवृक्षकस्तकूका एते कप्रत्य-  
यान्ता निपात्यन्ते । स्तनौ धयतीति स्तनन्धय । “शुनीत्तनमुत्तकूलस्यपुण्येषु घेटः ।” खश् ।  
उत्तान, शेने उत्तानशय । “उत्तानादिपु कर्तृपु” श्रच् ।

स्त्री चेद् दुहितरं विदुः ॥४०॥

पुन्या दुहिनरं<sup>१५</sup> दोग्धि मातृकुल दुनोति वा विदु, कथयन्ति । तनया, पुत्री ।

१५ १५ वयस्याऽली सहचरी सधीची सवयाः सखी ।  
पट् सख्याम् । वयसा तुल्या वयस्या । वयसी च । आ समन्तान्त्रित लाति आलिः ।  
स्त्रियामी । आली । सह सार्थं चरतीति सहचरी । सहायतीति सध्यै॒ । “सहसन्तिरसा सत्रिमसिति-  
रय ।” ईप्रत्यये सधीची । सह वयसा वर्तते सवयाः । समान खयातीति सखि ( खा ) । स्त्रियामी-  
सखी । “सख्यादय” सखि अश्रि प्रहि इत्यादयो डिप्रत्ययान्ता निपात्यन्ते ।

२० २० आलीविवर्जितं मित्रं मम्बन्धो मित्रयुक् सुहृत् ॥४१॥

चत्वारो मित्रे । आली रहितानि वयस्यादीनि नामानि मित्रवाच्यानि स्युरित्यर्थः । “त्रिमिता  
स्नेहने” । मेवति स्म मेदते स्म वा स्नेहयुक्तो भवति स्म वा मित्रम् । “चमिदिम्या त्रक्” आम्या<sup>१६</sup>

१ “अकारादसमृद्धौ मुश्र इति पूर्णम् । का० स० २२३७। इति सेलोंपो मुरागमश्च ।  
२ “भीडनुस्वार व्यञ्जने” इति पूर्णम् । का० स० १५१५। ३ “तु ज्ञावलादाननिकेतनेतु” । चुरादौ  
वा णिच् । तोजति पितृधनमादरो तुक् इति टीकाशय । ४. तैति पूर्यति पितृकार्य पितृरभावेऽपीति  
तोकम् । तु सौत्रो धार्तिर्हिमाग्रतिर्हितिपु । चादुलकात्क इति व्युत्पत्यन्तरमप्युद्धम् । ५ का० स० १५५१।  
इति जनेऽर्ड । ६ का० उ० २२५। इति तन धातो, कथयत्यय । ७ पवते वातेनेति विप्रहस्तु नौका-  
वाचकपोते चोत्य । युत्रामै तु पुनाति पवते वा वश पोत । मृग्वाहस्यमि” इति का० उ० ४२२७।  
सूत्रेण तप्त्यय । ८ सुवितमनोदारण बालदाग न घटते । अतो इणाति दारयति वा मातृयैवनम्,  
पित्रीनिस्सन्तानता जन्यातिवति तदाशयोऽन्युन्नेय । ९ का० स० ३२१०। १० का० स० ४२२९।  
“नन्दादे युर्” इति सूत्रे दुर्गवृत्तिः । ११ का० स० ४२६५४। १२ का० स० ३२१४। इतीनो लोपः ।  
इन कारितसज्जा कातन्ते । १३ का० उ० २५८। १४ का० स० ४२३३। १५. का० स० ४२३१८  
अत्र दुर्गवृत्ति । १६ दोग्धि पितृकुलं दहति दुनोति वा मातृकुल दुहिता । स्वसादित्वात्तुन्प्रत्यय  
इत्याशयः । १७ का० स० ४२६३। इति सहस्य सध्यादेश । १८ समान वयो यस्या इति विग्रहे  
न्याय । ज्योतिर्जनपदेति समानस्य सादेश । १९ का० उ० ४१। २० का० उ० ४४०। २१. मेवति  
मेदते इति वर्तमानकालिको विग्रहो युक्त, न तु भूतकालिक ।

त्रक् प्रत्ययो भवति । ककारो यण्दभावाऽर्थस्तेनागुणात्म । सम्यक् स्तेहेन बधातीति सम्बन्धः । मित्र युनक्तीति मित्रयुक् । सुषु हरति चित्तं सुहृद्<sup>१</sup> । शोभन हृदय यस्य वा । सखा, स्त्रियः ।

### सहकृत्वा सहकारी सहायः सामवायिकः ।

चत्वारः सहाये । सहकृत्वान् सहकृत्वा । ‘कृजश्च<sup>२</sup>’ व्यनिप् प्रत्यय । प्र० सि० । “तुष्टि३ चाऽ” दीर्घः । सह समन्तात्करोतीति सहकारी । ‘नाम्यजातौ४ णिनिस्ताच्छील्ये५’ । सह सार्धम् अयते गच्छति सहाय । समवाये नियुकः सामवायिकः । इकण् ।

### सनाभिः सगोत्रो बन्धुश्च सोदर्यः

चत्वारो भ्रातरि । समाना नाभिर्यस्य सनाभिः । समान गोत्र यस्य सगोत्रः । बधाति स्तेहेन बन्धुः । “पट्यसि६ वसिहनिमनित्रपीन्दिकन्दिवत्यग्निभ्यश्च” एन्य एकादश्य उ प्रत्ययो भवति । सोदर्यः । समानोदर्य, तर्गर्भ., सोदर, समानोदर, आत्मीय, स्वजनः, आपः, जातिः, १० सनाभेयः, सपिण्ड ।

अवरजोऽनुजः ॥ ४२ ॥

### कनीयान्-

द्वौ (त्रयो) लघुभ्रातरि । अवर पश्चाजातः अवरजः । (अनु) पश्चाजात अनुजः । “सतमी७-८ पञ्चम्योर्ज (म्यन्ते ज ) नेर्द९” । अयमपनयोरतिशयेन युवा कनीयान् । “युवाऽल्पयो१० कन्वा । कनिष्ठः । १५

### अग्रजो ज्येष्ठः

अग्रे जात अग्रजः । प्रकृष्टो वृद्धो ज्येष्ठ । “वृद्धस्य॑१२ ज्य॑१३” वृद्धशब्दस्य ज्य आदेशो भवति । पूर्वजः, वरिष्ठ, वर्षीयान्, अग्रिय ।

### भ्रातृजानी स्वसाऽनुजा ।

त्रयो भगिन्याम् । भ्रातुर्जाता भ्रातृजानी१४ । स्वस (स्य) ति ज्ञप्ति ज्ञिपति चित्तं स्वस्तु१५ । २० अष्टदन्तः । अनु पश्चाजाता अनुजा । भगिनी । भग्नी च । जामि । यामिश्र ।

### भर्तुः स्वसा ननान्दा स्यात्-

स्यात् भवेत् । भर्तुःस्वसा भगिनी । ननान्दा । “टुनदि समृद्धौ१६” । नद् । “अत॑१ एव०” नन् पूर्व॑ । न नन्दति प्रातृजाया यम्या सत्या सा ननान्दा । “नज्रि॑२ च नन्देष्ट्रु॑३ दीर्घश्च” नज्रि उपपदे

१ सुषु हरतीतिव्युत्पत्तिस्तु तान्तसुहृद्दत्तशब्दे सम्भवति । मित्रवाचकदान्तमुहृद्दशब्दे तु शोभन हृदय यस्येत्येव । हृदयस्य हृदादेश समासे । २ का०स० ४१३१० । ३. “तुष्टि चासम्बुद्धौ१७” । ४ का०स० २१२१७ । का०स० ४१३७६ । ५ का०उ० ११६ । ६ का०स० ४१३१० । ७ वर्तमानकातन्त्रे नोपलव्यम् । ८ वर्तमान-कातन्त्रे नोपलव्यम् । ९. नान्यस्मिन्कोषे भ्रातृजानीशब्द उपलव्य, नायेतन्साधक किमपि ध्याकरण-सत्रम् । भ्रातुर्जातेति विग्रहोऽपि भगिन्यर्थेऽसगत । तथापि भ्रात्रा सह मातुर्जातेति विग्रह्य बाहुलकादै-णादिकमण्प्रत्यय जनधातो प्रकल्प्य अणन्तत्वान्वीपि भ्रातृजानीति शब्दो ग्रन्यकारप्रत्ययात् कथञ्चित् समाधेय । १० स्वस्यति ज्ञप्ति चित्तं भ्रातु स्वसेति विग्रहो व्योम् । “अमु ज्ञेपरो१८” दिवादौ । सुपूर्वकात्त “सुज्यसेष्ट्रु॑९ इति श्वन्प्रत्यय । कातन्त्रोशादौ तु ‘स्वसादयः’ इति ‘स्वस् प्राणने’ इत्यत श्वन्प्रत्यये शकारस्य सकारे च “श्वसितीति स्वसा” इत्याह । अत ज्ञिपतीति दर्शनात् ‘अमु ज्ञेपणे इत्येव भाष्य कर्तुरभिप्रेत इति ज्ञायते । १०. “अत एव वर्जनादिदमनुबन्धाना नोऽस्तीति॑२० दुर्गृह्णिति । का० स० ३१६१० । १२ का० उ० स० २१३१।

सति नन्देष्वातोश्चृंग् न प्रत्ययो भवति अकारो दीर्घश्च भवति । ननान्दा इति जातम् ।

### मातुलानी प्रियाम्बिका ॥ ४३ ॥

द्वौ मातुलभार्यायाम् । मातुलस्येय भार्या मातुलानी । “इन्द्रवशणभवशर्वदहिमयमारण्य-यवयवनमातुलाचार्याणामातुक्ष्वैष्ट्व्य” । अम्बैव अम्बिका । ‘अम्बादिभ्यो डलेका’ ड, ल, इक, प्रत्यया ५ भवन्ति । प्रिया चासौ अम्बिका प्रियाम्बिका ।

वैर्यारातिरमित्रोऽरिद्विद् सपत्नो द्विषद्रिपुः ।

आत्म्यो दुर्जनः शवुदुष्टो द्वैषी खलोऽहितः ॥ ४४ ॥

पञ्चदश शत्रौ । विशिष्टाम् ई लक्ष्मीम् ईरयति निर्गमयति वीर, वीरस्य कर्म वैरम् । [ वैरमस्यास्तीति वैरी । ] वैरिपुरमिर्ति गच्छति आरातिः<sup>३</sup> आरातिश्च । न मित्रम् अमित्रम् । १० अथमीन्तादिवत् । “विषेषे नच्” इति सारस्वतं सूत्रम् । शत्रुविमिर्ति अरिः । द्वैषीति द्विद् । “सत्” सूदिग्रहुहृष्युजविदभिदछिदजिनीराजामुपसर्गेऽपि” क्रिप् । एकार्याऽमिनिवेशेन समान पतति सपत्न । द्विष्टे द्विषन् । निष्ठुर रथति रिपु । “रज्जुतर्कुवल्गुफल्गुशिशुरिपृथुनघव ।” एते उप्रथयान्ता निपात्यन्ते । निपातनमप्राप्तं प्रापणार्थं ग्रासस्य चाचनार्थम् । लक्षणेन यद्यदसिद्ध तत्सर्व निपातनात्सद्भम् । तथा क्षीरस्वामिन्—“रेपयनि रिपुः । रेषु गतो । भ्रातर व्यवति मारयति १५ आत्म्य । दुष्टजन दुर्जनः । परमभट्टारकश्रीयश कीर्तिसम्भाषितप्रस्थ्य—

“प्रशस्या न नमस्याऽपि दुर्जनैर्या विधीयते ।  
कण्टकः पादलग्नोऽपि न शुभाय प्रजायते ॥”

तथा च सूक्ष्मिकावल्याम् ॥

२० “वर क्षिप्तः पाणिः कुपितफणिनो वक्ष्वकुहरे  
वरं भस्पापातो ज्वलदनलकुण्डे विरचितः ।  
वर प्रासप्रान्तः सपदि जठरान्तविनिहितो  
न जन्य दौर्जन्य तदपि विपदा सद्म विदुषा ॥”  
अत्र ये केचिद् दुर्जना, मन्ति, तेषां मस्तकेशनिपातो भवतु । तथा च<sup>१</sup>—  
“दुर्जन सुहियउ होव जगि सुयणु पयासिउ जेण ।  
अमित्र विसे वासस तिमिण जिमि मरगउ कच्चेण ॥”  
२५ शृणाति शीर्यते वा “शत्रु । दूष्यते निन्द्यते लोके दुष्ट । द्वेष्ट<sup>२</sup> द्वेषोऽस्यस्य वा द्विषन् ।

१ पा० सू० ४।१।४९। अत्र सत्रे यमेत्यविक पाठ । २ “द्वायनान्तयुवादिभ्योऽण्”युवादित्वादण् । ततो मत्वये “अत्र इन्हनौ” इतीन् । ३. “ऋ गते” । आडूर्वकाद् सूत्रातीर्बाहुलकादातिप्रत्यय । अन्यत्र तु न राति सुख ददातीति नभूर्वकात् रा (दाने) धातो किञ्च कोच सज्जायामिति किञ्च । ४. “तदन्यतद्विरुद्धतदभावेषु नज् वर्तेते” इति वक्तव्यम् । “अन् स्वरे” सार० समा० १४ सू० । ५ का० सू० ४।३।७।४। ६ का० उ० सू० १।६। ७ क्षीर० भा० २।८।१।०। ८ “व्येज् सवरणे” धातूनामनेकार्थत्वाद्विसाऽयै वृत्ति । आतोऽनुग्रहे क । ९ निर्णयसगरयन्त्रालयप्रकाशितकाव्यमालासतम् गुच्छेसुकिसुकावलौ ६।१ श्लो० । १० सावयघ० दो० २। ११ “जन्वादय । ज्वशमसुशिप्रशत्रव ।” एते उप्रथानाता निपात्यन्ते । इति का० उ० दुर्ग० वृ० ३।६। १२ द्वेषोऽस्यस्येति केवलमर्थाऽभिप्रायेण । विग्रहस्तु द्वेषीत्यैव । शत्रृप० ।

खलति सज्जनगुणानाच्छादयतीति खला । न मैत्रीं हिनोति गच्छति, न हितो वा, 'महित । अभियातिः, प्रतिपदः, असहनः, जिषासु, परिपन्थी, पर, अषुद्धत, अपथी, पर्यवस्थाता, शान्तव, प्रत्यनीकः, द्वेषणः, दुर्दृद्, दस्यु, अभिमन्थी ।

**दीधितिर्भानुसूतोऽशुर्गमस्तिः किरणः करः ।**

**पादे रुचिर्मरीचिर्मास्तेजोऽर्चिगौर्युतिः प्रभा ॥४५॥**

५

षोडश किरणे । दिधीते दीयने दीधिति । "दीधीडो डिति" दीधीडो धातोर्दितिः प्रत्ययो भवति । 'भा दीमौ' भाति भानुः । "दामागिवृत्यो तु ।" एन्यो तु. प्रत्यय स्यात् । बसति रबौ य उत्त्र । पुसि । अशनुते जगद् व्याप्रोति अशुः । छी । उणादौ । अनन्च् । अनितीति अशुः । अनेः" शु" अनेधातो शुप्रत्ययो भवति । [ "भा दीमौ" भाति भानुः ; "दामारी" ] गा भुव बमस्ति गमस्ति ।

१०

"वर्णागमो गवेन्द्रादौ सिहे वर्णविपर्ययः ।

पोडशादौ विकारस्तु वर्णनाशः पृष्ठोदरे ॥"

कीर्यते किरणः । हलायुधे-'किरति विक्षिपति तमांसि किरण' । "कमूल्या कन । कीर्यते करः । पदाने पादः । "पदरुजविशस्युशोक्ता घन् ।" रोचते रुचिः । ग्रियते तमोऽनेन मरीचि । स्त्रीनो । उणादौ । ग्रियते मरीचि । "मृकणियामीचि" आम्यामीचि प्रत्ययो भवति । भासने २५ ग्रिपि सान्तो भास्त् । स्त्रीनो । पु स्वेवेति शब्दभेद । भा । नासौ । भास । तेजयतीति तेजस् । अर्चयतीति अर्चिप् । अर्चयते अर्चिः । 'अर्चि' "शुचिर्हचित्तुपिळदिल्लिदिभ्य इतिः ।" गच्छति तमोऽत्रोदिते गौ । स्त्रीनो । योतन द्युति । योतने (वा) द्युति । प्रभाति प्रभा । रोचि, अभीशु, प्रद्योत, रश्मि, वृणि, रुचि, विमा, धाम वसु केतु, प्रग्रह, उपघृति, धृष्णि, पृश्नि, मयूख, विरोक, शेकन्च ।

२५

**दीमिज्योतिर्महो धाम गश्मरूजो विभावसुः ।**

सप्त नेजसि । दीयने दीमि । योतनं उयोति । 'ज्योतिरादय' ।<sup>१३</sup> ज्योतिर्बहिरादय । महति मह ।<sup>१४</sup> सान्तम । धीयने सूर्येण नान्तम् धामन् । रशि सोत्र । रशति अशनुते रशिम । "ऊर्ज बलप्राणनयो ।" ऊर्जयतीति ऊर्ज । क । [ "विभा वमुर्यस्य स विभावसु ।" ] ( विभा । वसु । )

२०

**शीतोष्णप्रायपूर्वाञ्चौ तदन्ताविन्दुभास्करौ ॥४६॥**

२५

तथोरन्तौ<sup>१५</sup> तदन्तौ । इन्दुभास्करौ । इन्दुश्च भास्करश्च इन्दुभास्करो । कथभूतौ । **शीतोष्ण-**

१ न मैत्रीं हिनोतिमेति भूते विग्रहो वोन्य । गत्यर्थवार्कर्त्तरि न । न हितमस्मादिति रामाश्रम । २ का० उ० म० ६।२६ । ३ का० उ० म० १।१ । ४ 'बस् निवासे' बस् धातो 'स्त्रायि तञ्ची' त्यादि उ० भूत्रेण रक्प्रत्यय सम्प्राणरण च । ५ का० उ० म० ५।८८ । अशयति विभाजयति "अश विभाजने" उप्रत्यय व्युत्पत्यन्तर च । ६ पुनरुक्तत्वात्परिहार्य । ७ वमस्ति दीपयति । "भस भर्मनदीप्त्यो" । तिप्रत्यय । पृष्ठोदरादिवात्पोडशादौ वर्णविकारवदोकारस्याकार । ८ शा० म० २।२।७।२। "पृष्ठोदरादय" इत्यत्र कारिकारूपेण पठित । ९ का० उ० म० ६।१।४ । १० का० म० ४।५।६ । ११ का० उ० स० ३।८।३ । १२ का० उ० स० २।४।८ । १३ का० उ० स० २।४।५ । १४ महन् मह । महते पूज्यते वेति रामाश्रम । १५ वस्तुतत्तु 'विभा' इति 'वसु' इति च तेजतः सज्जा । समुदितो "विभावसु" शब्दस्तु सूर्यग्निवाची । तदुक्त 'सूर्यवही विभावसु' इति अम० को० ३।३।२।६। १६ ते दीधित्यादयः शब्दा अन्ते योस्तौ तदन्तौ इत्येव समानो वोन्यः । तयोरन्ताविति समाप्तस्तु लेखकप्रमादात्प्रयुक्त ।

( प्राय ) पूर्वाञ्चौ । शीतीष्णौ ( प्रायेण ) पूर्वाञ्चौ योरिन्दुमास्करयो ( तौ ) शीतोष्ण ( प्राय ) पूर्वाञ्चौ । शीतदीधिति । शीतदीधितिमान् । शीतभानु । शीतभानुमान् । शीतांशु । शीतांशुमान् । शीतगमस्ति । शीतगमस्तिमान् । शीतकिरण । शीतकिरणवान् । शीतपादः । शीतपादवान् । शीत-रुचि । शीतरुचिमान् । शीतमरीचि । शीतमरीचिमान् । शीतार्चि । शीतार्चिमान् । शीतभा । ५ शीतभावान् । शीतगु । शीतगोवा<sup>१</sup> ( मा ) न् । शीतद्युति । शीतद्युतिमान् । शीतप्रभ । शीतप्रभमावान् । शीतदीपि । शीतदीपिमान् । शीतज्योति । शीतज्योतिमान् । शीतमहा । शीतमहस्वान् । शीतमहाम । शीतवामवान् । शीतरश्मि । शीतरशिमान् । शीतोर्ज । शीतोर्जवान् । शीतविभावसु । शीतविभावमुमान् । किरणशब्दानां ( व्येभ्य ) पूर्वं शोतशब्दप्रयोगे चन्द्रनामानि भवन्ति । उष्णशब्दप्रयोगे गूर्जनामानि भवन्ति । उष्णदीधितिमान् । उष्णमानु । १० उष्णभानुमान् । उष्णोक्त्त । उष्णोक्त्तवान् । उष्णांशु । उष्णांशुमान् । उष्णगमस्ति । उष्णगमस्तिमान् । उष्णकिरण । उष्णकिरणवान् । उष्णपाद । उष्णपादवान् । उष्णरुचि । उष्ण-रुचिमान् । उष्णमरीचि । उष्णमरीचिमान् । उष्णमा । उष्णमास्वान् । उष्णनेजा । उष्णनेजस्वान् । उष्णर्चिमान् । उष्णांशु । उष्णद्युति । उष्णद्युतिमान् । उष्णप्रभ । उष्ण-प्रभमावान् । उष्णदीपि । उष्णदीपिमान् । उष्णज्योति । उष्णज्योतिमान् । उष्णमहाः । उष्णमह-स्वान् । उष्णघामा । उष्णघामवान् । उष्णरश्मि । उष्णरशिमान् । उष्णोर्ज । उष्णोर्जवान् । उष्ण-विभावसु । उष्णविभावमुमान् ।

शशी विधुः सुधासूतिः कौमुदीकुमुदप्रियः ।

कलाभृच्छन्दमाश्वन्दः कान्तिमानोषधीश्वरः ॥ ४७ ॥

२० दश चन्द्रे । शशो उत्थास्तीति शशी । विदधात्यमृत विधुः । “वौ धात्रश्व” । सुधा अमृत सूते सूधासूति । कुमुदानाभिय विकाश ( स ) हेतुत्वात्कौमुदी ( ज्योत्स्ना तस्याः प्रियः कौमुदीप्रियः ) । कुमुदाना प्रियः अभीष्टः कुमुदप्रियः । कला बिर्त्तीति कलाभृत् । “मा माने” चन्द्र मातीति चन्द्रमाः<sup>२</sup> । ‘चन्द्रे’ माने उपरदे अस्मादसन् प्रत्ययो भवति । अगुणवदभावादकारलोपः । भिन्नयोग स्थार्थ गाव । चन्द्रीति चन्द्र । ‘स्त्रायि’ तत्त्विविशिक्षिप्लिप्तिरुदिमदिमन्दिचन्द्रादी-निद्यो रक्<sup>३</sup> । कान्तिगस्वास्त कान्तिमान् । ओषधीनामीश्वरः ओषधीश्वरः । इन्दुः सोमः, राजा, २५ रोहिणीवल्लभः, अञ्ज, ऋद्धेशः अतिनेत्रप्रसूतः । तथा चोक्त यशस्तिलके—<sup>४</sup>

“आहु नेत्रोत्थमत्रः स्तुतमसूतिनिधे य हरेन्मवन्धु  
मित्र पुष्पायुधस्य त्रिपुरविजयिनो मौलिभूषाविधानम् ।  
वृत्तिक्षेत्रं सुगार्णा यद्युक्तलितिक बान्धव केरवाणां,  
सम्प्रीति वस्तनोतु द्विजरजनियतिश्वन्द्रमाः सर्वकालम् ॥”

१ “मादुपधायाश्” इत्यादि वत्वविधायक सूत्रम् । मवर्णाऽवर्णान्तान्मवर्णावर्णोपवाच्च मतोर्मकारस्य वकार शास्ति । अत्र तथात्वाभावात् “शीतगोमान्” इति वक्तव्यम् । वस्तुतस्तु शीत-गोशब्दत्वं कर्मवारये ततो “गोरतद्वित्तलुकि” इति टचो दुर्वारत्वात् “शीतगववान्” इति सुवचम् । सिद्धान्ततस्तु नेत्रशस्थले मतुविष्ट । तदुक्त “न कर्मधारयान्मत्वर्थीयो बहुव्रीहिश्चेत्तदर्थप्रतिपत्तिकर” । २. का० उ० स० ५१। कुरुत्यय । ३. चन्द्र कर्पूर माति तुलयति सादृश्येनेति ग्रन्थोक्तविग्रहार्थ । चन्द्रमाहूलाद मिमीते तुलयति सादृश्येनेति विग्रहान्तरमप्यूद्यम् । ४ का० उ० स० ४५७। ५. का० उ० स० २१५। आश्वा० ३। ४७ श्लो० ।

प्रालेयाणु, श्वेतरोचि, शशाङ्क, द्विजराज, रजनिकर., पीयूषरुचि, निशीथिनीनाथ, जैवतृक, मृगाङ्क, दाक्षायणीरमणः, मा॑ अपुच्यते, सत्यभामेतिवत्। सुधामर्ति अमृतनिर्गमः, समुद्रनवनीतम्। देश्याम्॒ ।

### उडूनि भानि तारक्षं नक्षत्रम्-

चत्वारो नक्षत्रे । अवति प्रभाम् उडू॑ । ब्रीङ्गीबे । तथा चामरसिहै॒—

५

“नक्षत्रमृक्षं भन्तारा तारकाऽप्युडू वा ख्याम् ।”

भाति दीप्त्यते भम् । क्षीरस्वामिनि—“भा विद्यत्स्य भम् ।” तरन्त्यनया तारा॑ । तारयति वा । अ॒क्षयोति हिनस्ति तम् ऋक्षम्॑ । नक्षति खे याति न तम् क्षि॑ (क्ष) णोति वा नक्षत्रम् । “अमि॑ नक्षिकडिंयोऽनः ।” तारक क्लीबेऽपि । यच्च॑ शाश्वत—

“नक्षत्रे वा॑ उक्षिमध्ये च तारकं तारकाऽपि च ।

१०

लक्ष्य च—

द्वित्रेव्योमिनि पुराणमौक्तिकघनच्छायै, स्थितं तारकैः”

तत्पतिः

(नक्षत्र पर्यायेभ्य एव ) पतिशब्दप्रयोगे नन्दनामानि भवन्ति । उडूपति । तारापति । अ॒क्षपति । नक्षत्रपति॑ । उडूराजः । उडूस्वामी॑ । उडूनाथः । नक्षत्रेश्वर । तारेन्द॑ ।

१५

निशा ।

### क्षणदा रजनी नक्कं दोषा श्यामा क्षिपा

सम रात्रौ । निशा॑ति तनूकरोति चेषामिति निशा, निशो वा । “आत॒॑ अ॒चोपसर्गे॑” । क्षणमवसर ददातीति क्षणदा । तमसा रजति रजनि । लियामी॑ । रजनी॑ । रजनशब्दाद् वा नदा॑-दित्वादः । नेतेक्षि॑ नक्कम् । दु॒ष्ट दूष्यति या॑त्र दोषा॑ । आदन्तो॒ अ॒व्ययाऽनव्यय । श्यायन्ते गच्छन्ति॑ । गत्रित्ररा अत्र श्यामा॑ । तथाऽनेकार्थ॒॑ (वनि॑) मखर्णम्॒—

“श्यामा रात्रिस्तु चिट्ठ्यामा श्यामा खो॑ मुख्यौवना ।

श्यामा प्रियङ्गुराल्याता॑ श्यामा स्याद् वृद्धदारिका॑ ॥”

क्षिप प्रेरणे॑ । क्षिप॑ । क्षेपण क्षिपा॑ । “॒॑पा॑ उनुबन्धमिदादिंयस्त्वद् ।” क्षिप्यन्ते स्वपेन जनै॑, निर्गम्यते वा॑ । तमी॑ । तमा आदन्तो॒ अ॒व्ययाऽनव्यय । तमिक्षा॑ । तमस्विनी॑ । विभावरी॑ । नक्षमुखा॑ । शर्वरी॑ । श्रियामा॑ । निशीथिनी॑ । यामिनी॑ । वसति॑ । वासनेयी॑ । रात्रि॑ ।

१. “लोपः पूर्वपदस्य च अचूपत्यये तथैवेष्ट” इति कात्यायनवार्तिकम् । ५।३।८३। पा० सूत्रस्थ पूर्वपदोपविधायकमत्र प्रमाण बोध्यम् । २. ‘देशी’ शब्द, आन्तभाषावाचकः । क्षीरस्वामि॑-कृताऽमरभाष्येऽपि बहुत्र उपलभ्यते । साधुन्त्वमस्य पचादेराकृतिगणनात् “देवी॑” इतिवद् बोध्यम् । वस्तुत-स्त्रयं॑ शब्दो दैशिक एव । ३ अ॒वति प्रमा॑ रक्षतीति ऊ॑ । “अव रक्षणे॑” किं॑ । “ज्वरवरे॑” त्यूद॑ । डयते इति इ॒॑ । डयते॒ इ॒ प्रत्यय । ऊश्रास॑ इ॒ श्रेति॑ कर्मधारय । नक्षत्राणा॑ रक्षणार्हत्वादाकाशीत्पतनशीलत्वाच्च उडूत्वमुपपत्रम् । ‘इको हृत्वा॑’ इत्यूकारस्य हृत्व इति टीकाशयः । ४ अम० कौ० १।३।२।१ ५ क्षीर० भा० १।३।२।२।६ भिदादित्वादद॑ । अ॒डि॑ परे गुणः । निपातनाद॑ दीर्घः । ७. अ॒क्षति॑ गच्छन्ति॑ “अ॒क्षी॑ गतौ॑” तुदादि॑ । औणादिकः सप्रत्ययः॑ किं॑ । पत्वकत्वक्षत्वानि॑ । अ॒क्षमिति॑ । ८. का० उ० सू० ३।५।९. “यच्च॑ शाश्वत॒” इत्यारभ्य॑ “स्थितं तारकैः॑” इत्यन्तं पाठ॑ १।२।२।१ । क्षीरस्वामिभाष्यस्योऽनः॑ यहीतः॑ । १०. का० सू० ४।५।८।४। ११. १६ श्लो० श्लो० । १२. का० सू० ४।५।८।२ ।

करः ॥४८॥

(निशापर्यात्परं) करदशब्दे प्रयुज्यमाने चन्द्रनामानि भवन्ति । निशाकर । ज्ञानदाकर ।  
रजनीकर । नक्षत्रकर । दीपाकर । श्यामाकर । ज्योतिकर ।

तरणिस्तपनो भानुर्बधनः पूषार्ड्यमा रविः ।

५ तिग्मः पतञ्जो द्युमणिर्मार्तिण्डोऽको ग्रहाधिपः ॥४९॥  
इनः सूर्यस्तमोध्वान्ततिमिरारिविरोचनः ।

सप्तदश मर्ये । तरन्त्यनेनेति तरणिः । “श्रृतृं सूर्यत्र ध्यम्श्विवृतिग्रहिम्योऽुनि ।” तपति  
त्रिलोकों तपनः । भाति दीप्यते करैः भानुः । “दामरिवृत्यो तुः” तुः ग्रहयः । “बन्ध बन्धने”  
बन्धाति जनुटाटीब्रैधनः । “बन्धेव्रविश्व” । अस्मान्नक् प्रत्ययो भवति ब्रायदेशात् । इकार उच्चारणार्थ ।  
१० पुष पुष्टौ । पुषणाति वर्धते तेजसा पूषा । पूषादय ४ — “पूषवर्णमनुकृत्वनलाहन्मातरिश्वनक्लेनस्नेहन्-  
मूर्खनयूपन्दोषन्” एने कन्यता निपात्यन्ते । इयत्तेति अर्यमा । ‘श्रृगतो’ । रुथते स्त्रयते रविः ।  
“इं सर्वधातुम्” । तीतिज्ञतीति तिग्मः । “युविरुचितिजा धमक्” । पतति नक्षत्रपथे पतञ्जः । “तृ-  
७पतिम्यामङ्ग” । आम्यामङ्गः प्रत्ययो भवति । दिवो मणिरिव द्युमणिः । मृतण्डस्यापत्य मार्तरङ्गः ।  
मृतडशश । आकाशमिथर्ति अर्कः । उणादौ “अर्च पूजायाम्” अर्चनं अर्क । “इण्मीकापाशल्य  
१५ चिङ्कदाधाराम्य क.” एव्य. क प्रत्ययो भवति । ग्रहाणामधिप स्वामी ग्रहाधिपः । एतीति इनः ।  
“इण्जिकृष्टिम्यो नकृ” । सुवति (प्रेरयति कर्मणि) लोकान् सूर्यः । “सूर्यसूच्याव्यव्या १० कर्तरि” ।  
सूर्य इति यप्रत्ययान्तो निपात । तमश्च व्यान्त च तिमिरश्च तमोध्वान्ततिमिरा, तेपामरिः— तमोऽरि,  
व्यान्तारिः तिमिरारिः । विरोचते इत्येवशीलो विरोचन । ११ “रुचादेश व्यञ्जनाद” । रुचा-  
देशगणाद व्यञ्जनादेय भवति । आदित्य, सविता, सहस्रकिरण, प्रयोतन, भास्कर, तिग्माशुः, दिनमणि,  
२० भास्वान्, विवत्वान्, हरि, विकर्तनः, भग., गोपतिः दिनकर, सूरः रुद्रश, अशुमाली, मिहिरः, तिमिर-  
रिपुः, अशुमान, अशुः, हरिदशव., सप्ताश्वः, प्रभाकर, भानुमान्, हस., खग, मित्र, चित्रभानुः,  
अर्हर्ति, कर्मसाक्षी, जगचक्षुः, द्वादशात्मा, त्रयीतनुः ।

दिनं दिवाऽहर्दिवसो वासरः—

पञ्च दिवसे । “दोऽुवखण्डने” व्रति खण्डयति अन्धकारमिति दिनम् । “दोनात् १२ इ (यतेग्नि)  
२५ च” व्रते नैप्रत्ययो भवत्याकारस्येच । रविर्दि [र्घान् दी] प्यतेऽत्र, आदन्तमव्ययम् दिवा । अदन्त क्लीबम् ।  
दिव विद्न् । न जहाति काल (रवि) महः । ‘नन्ति १३ जहाते’ इति क्षिप् (कनि.) । दीव्यतीति दिवस १४।  
दिवसम् । “१५ वेतसवाहसदिवसकनसा” एतेऽस्त्रप्रत्ययान्ता निपात्यन्ते । वासयत्यत्र वासरः १६ । वासोऽपि ।  
उभयम् । “देवि १७ विजिठभिमिवासिम्योऽुर्” एम्योऽर् प्रत्ययो भवति । द्युः । घसः ।

१०. का० उ० सू० २।४३ । २. का० उ० सू० २।७ । ३ का० उ० सू० २।५२। दुर्गवृत्तिश ।  
४ का० उ० सू० २।५ । ५ का० उ० सू० ३।१४ । ६ का० उ० सू० १।५७ । ७ का० उ० सू० १।२२ ।  
८. का० उ० सू० २।५७ । ९. का० उ० सू० २।५१ । १०. का० सू० ४।२।३० । ११. का० सू० ४।४।३१ ।  
१२. का० उ० सू० ६।३।७ । १३. का० उ० सू० २।४। १४ दीव्यन्ति कीडन्ति प्राणिनोऽुत्र दिवस इत्यपि ।  
१५ का० उ० सू० ३।११ । १६ “वास उपसेवायाम्” वासयति सूर्यलोक प्राणिन वा वासरः । विग्रहे “अत्र”  
इति पदमधिकम् । १७ नैतसत्रम् का० उणादौ लघ्म । तत्र “कृवाम्यः सरक्” ३।६।२। इति सूत्रम् । वातीति  
वासर, वाधातो, सरक् प्रत्यय इत्युक्तम् । तत्रैव चतुर्थपादे ३।३ तमपरमपि सूत्रम् “सद्यसिवशिवासिम्य सरः”  
इति वासिधातोः सप्रत्यय उक्त । वासयतीति वासर । कौमुदीस्थमुणादिसूत्रम् “अर्तिकमिच्चमिभ्र-  
मिदिविवासिम्यश्चित्” ३।१२।७। इति वासिधातोररप्रत्यय ।

## तत्करथ स ॥ ५० ॥

दिनकरः, दिवाकरः, अहस्करः, दिवसकरः, वासरकरः, इत्यादि सूर्यनामानि भवन्ति ।

**चक्रवाकाब्जपर्यायबन्धुः—**

चक्रवाकश्च अञ्ज च चक्रवाकाब्जे, तयोर्थकवाकाब्जयोः (परत्र) बन्धु शब्दप्रयोगे सूर्य-  
नामानि भवन्ति । चक्रवाकबन्धु । अब्जबन्धु । पद्मबन्धु । कमलबन्धु । इत्यादीनि ज्ञातव्यानि । ५

**कुमुदविप्रियः ।**

कुमुदानां(परत्र) विप्रियशब्दे प्रयुज्यमाने सूर्यनामानि भवन्ति । कुमुदविप्रियः । कैरवविप्रिय ।  
कुमुदविवल्लभः । इत्यादि ।

**यमुनायमकानीनजनकः सविता मतः ॥ ५१ ॥**

यमुनाजनक । यमजनकः । <sup>१</sup>कानोनजनक । सविता । मतः कथित । १०

वाहोऽथस्तुरगो वाजो हयो धुर्यस्तुरङ्गमः ।

सप्तिरवीं हरी रथ्यः—

एकादशाश्वे । वाल्मीकी गम्यतेऽश्ववाहैर्वाह । तथा उनेकार्थ<sup>२</sup> ( खनि ) मञ्जर्याम्—

“वाहो युग्मं घनो वाहो वाहके वाह इत्यपि ।

वाहो मानविशेषश्च वाहो बाहुरिति स्मृतः ॥” १५

“अश् व्यामौ ॥ अश् । अश्नुते व्यानोति वेगेनाभीष्ट्यानमित्यश्व । अथवा “अश् भोजने”  
आशाति भद्रयति सुदूरादीनित्यश्वः । “<sup>३</sup>श्रिशलटिविशिष्य क” । वमात्रः । “धोपवत्योश्च  
कृति” लेण् । “उरो ( रसा ) गच्छतीति उरणः । “डोऽसज्जायामपि” । पूर्वमश्वाना वाजा अभूविनिति  
श्रुतिः । वाजाः सन्त्यस्य वजतीत्येवशीलो वा वाजी । इदन्तोऽपि, वाजिः । तथा हैमनाममालायाम्<sup>४</sup>—

“वाज वाजस्तु पच्छेनुपि मुनो निःखनवेगयोः ॥” २०

हिनोंति गच्छति वर्धते (वा) अनेन हय । धुरि सद्ग्रामे ताधुर्धुयः<sup>५</sup> । “<sup>६</sup>यदुगवादितः” । तुर  
(रेण) गच्छति तु (तो) तार्ति त्वरते वा तुरङ्गमः<sup>७</sup> । “गमश्च<sup>८</sup>” नाम्न्युपदे गमेश्च सज्जाया खो भवति  
“घातवदेः<sup>९</sup> ष स.” । सप्तत्यध्वान गच्छतीति सप्ति । “<sup>१०</sup>सपेत्तिततितनः” सपेधार्तिस्ति तति तन् एते  
प्रत्यया भवन्ति । अर्वति गच्छति अनेन नात्त, <sup>११</sup>अर्वन् । हरयनेन हरिः । रथे साधू रथ्यः<sup>१२</sup> । गन्धर्वः,  
तार्द्य, यु, धोक्क, अर्दनि.<sup>१३</sup>, वीति . पीति. २५

१ कानीन कर्णे । कन्याऽवस्थाया कुन्त्या कर्णादुत्पन्न इति पौराणिकी कथा उन्नत्येया ।

२. ११ श्लोऽश्लोकां । ३ काऽउठ०सू० २१। ४ कांसू० ४१। ५ भ्रान्तोऽय पाठः । उचितस्तु तुरेण  
वेगेन गच्छतीति तुरण । ६ का०सू० ४३। ४७। ७ अनेन०सू० २१। ८ धुर वहतीति धुर्य । “धुरो यड्को”  
इत्यन्वत्र । ९ का०सू० २१। १० तुरपूर्वकादगमे “गमश्च” इति से तुरङ्गमः । तोतोर्ति त्वरते वेति विग्रहे  
तत्सिद्धिप्रारोद्यन्था कल्पनीयः । ११. का० सू० ४। ३। ४५। १२ का० सू० ३। १। २। १३ का० उ० सू०  
५। ३। १। ४, “अर्व गतौ” बाहुलकात्कनिन् । १५ “रथ वहतीति सुवच । “तद् वहति रथयुग्मासङ्गम्”  
इति यत् । १६ अर्दनिशब्दस्याश्वार्थे प्रमाण मृग्यम् । कोशान्तरेऽर्दनिशब्दार्थश्चेत्यम्—“अर्दनी चार्दनि-  
रपि ख्ययः स्यु प्रार्थनाऽर्थना” कल्प० को० १। १। २। १। अर्वतीशब्दोऽश्विनीपर्यायस्तु सर्वसम्मत । “वीति”  
“पीति” शब्दपोरश्वार्थे प्रमाणमधस्तात् “वीति सप्तिर्दिविकावा वातस्कन्धार्थ इत्यपि” कल्प० को० १। ५।  
१९। ३। “पीति पाने सपूर्वा तु सद्धपाने हये पुणान्” विश्व० ।

### सप्ताद्यश्वो मयूखवान् ॥ ५२ ॥

आद्यशब्दस्य ( ब्रात् ) पूर्वं यदि सप्तादि ( सशब्दः ) तदा सूर्यनामानि भवन्ति ।  
सप्तवाह् । सप्तश्व । सप्ततुरग । सप्तवाजी । सप्तहय । सप्तधुर्य । सप्ततुरङ्गम् । सप्तसति । सप्तवार्वा ।  
सप्तहरिः । सप्तरथः ।

५

### ख विहायो वियद् व्योम गगनाकाशमम्बरम् ।

#### द्यौर्नभोऽत्रोऽन्तरीक्षं च-

एकादशं गगने । खनति शून्यत्वेन खन्यते वा 'खम् । विजहाति सर्वं विहायः' । अवाय विहायसा  
पक्षिणा मार्गं विह यच्छ्रुतीति वियत् । ( आथवा वीना पक्षिणा मार्गं यच्छ्रुति वियत् ) । अमरेन्द्रभाष्ये—  
“वियच्छ्रुतिः विरमति वियत्” वायुना वीयते (व्यवति व्यवत्यते वा) व्योमन् । “स्त्रिव्यविमविजवरि-  
त्वरामुषधाया ” एपामुषधाया वकारस्य चोद् भवति । “सर्वधातुम्बो मन्” (इति विष्वर्वकादवेसन्) । गम्यते  
१० सर्वमनेन गगनम् । कलीवे वा । गच्छ्रुत्यनेन गगन वा । आकाशन्ते सूर्याद्यांत्राकाशम् । न काशते वा  
छान्दसो दीर्घं । अम्बते राब्दायते अम्बरम् । दीर्घन्ति पक्षिणोऽत्र द्यौः । लियाम् । नह्यनि ब्रह्माति  
सर्वमात्मना सात्तम् नभः । न भम् इत्यदन्तम् नभम् च । न भ्राजतेऽभ्रम् । अन्त श्रक्षाण्यत्र अन्तरीक्षम् ।  
पूरोदरादित्वम् । द्यावाभूम्योरन्तरीक्षते वा अन्तरिक्षम्, अन्तरीक्षं च । मरुद्वरम्भन् । तारापथ । पुष्करम् ।  
१५ विष्णुपदम् । त्रिदिवम् । नाकम् । अनन्तम् । सुरवर्तम् । महावः (वि) लम् । देश्याम् ।

### मेघवायुपथोऽध्यथ ॥ ५३ ॥

मेघशब्दाग्रे वायुशब्दाग्रे च पथशब्दे प्रयुज्यमाने आकाशानामानि भवन्ति । मेघपथः । मेघमार्ग ।  
घनपथः । घनमार्गः । पर्जन्यपथ । पर्जन्यमार्ग । मिहिरमार्ग । नम्राट्यपथ । नम्राण्मार्ग ।  
तडित्पतिपथ । तडित्पतिमार्ग । सोदमिनीपतिपथः । सोदमिनीपतिमार्ग । वायुपथ । वायुमार्ग ।  
२० वातपथ । वातमार्ग । अनिलपथः । अनिलमार्ग । मरुपथ । मरुमार्गः । समीरणपथ । समीरण-  
मार्ग । गन्धवाहपथ । गन्धवाहमार्ग । श्वसनपथ । श्वसनमार्गः । सदागतिपथ । सदागतिमार्ग ।

#### तच्चरः खेच्चरः—

तत्र आकाशे चरतीति तच्चरः । आकाशाग्रे चरशब्दे प्रयुज्यमाने विद्याधरनामानि भवन्ति ।  
खेच्चरः । विहायश्वर । वियच्चरः । व्योमच्चर । नमश्वर । गगनच्चरः । अम्बरच्चर । आकाशच्चर । अन्तरिक्ष-  
२५ च्चर । मेघपथच्चरः । मेघमार्गच्चर । वायुपथच्चर । वायुमार्गच्चर । घनपथच्चर । घनमार्गच्चर । घनाधन-  
पथच्चर । घनाधनमार्गच्चर । जीमूतपथच्चर । जीमूतमार्गच्चर । अग्नपथच्चर । अभ्रमार्गच्चर । बलाहक-  
पथच्चर । बलाहकमार्गच्चर । पर्जन्यमार्गच्चर । इत्यादिनामानि विद्याधरस्य ज्ञेयानि ।

#### तद्गः,

तत्र गगने गच्छ्रुतीति तद्गः । गगनाग्रे ‘ग’ शब्दे प्रयुज्यमाने शकुन्तनामानि भवन्ति ।  
३० खग । विहायोग । वियदगः । व्योमग । नभोग । गगनग । द्यौग । आकाशग । अन्तरिक्षग ।

१ “खनु अवदारणे” डप्रत्ययः । “खर्व गतौ” खर्वत्यस्मिन्निति वा किम्हः । अत्रापि ड । २ उक्त-  
विप्रहे “ओहाक् त्यागे” हाथातो “वहिहावाऽभ्यश्छन्दसि” ४।२२। इत्यसुन् यित्व च । णित्वाद्युक् ।  
विशेषणा हायति गमयति विमानादीन् इत्यपि बोध्यम् । “इय गतौ” ष्णन्तादसुन् । ३. क्षीर० भा० १।२।२।  
४ का० सू० ४।१।५।७। ५ का० उ० सू० ४।२।८। ६. “गमेर्गश्च” इति मुच् गश्वान्तादेश । ७ महाविल-  
शब्दस्याकाशवाचकत्वेऽमरकोषमधस्तात्प्रमाणम्—“तारापथोऽन्तरीक्षं च मेघाध्वा च महाविलम्”  
१।२।२। चेपक ।

मेघपथग । मेघमार्गग । इत्यादिनि ज्ञातव्यानि ।

पशी पत्री पतञ्चयपि ।

**शकुनिः शकुनिविश्च पतञ्जो विष्किरोऽन्यथा ॥५४॥**

सम पतञ्जो । पत्राः सन्यस्य पशी । पत्राणि सन्यस्य पत्री । नान्त । पततीति पत्रिः । त्रिप्रत्यये इदन्त । पतत्राणि सन्यस्य पतञ्चय । नान्त । पततीति पते परतोऽत्रिप्रत्यये इदन्तो वा पतत्रि । हलायुध-<sup>५</sup> भाष्यकारेण डाळणिकेन—पत्रिशब्दं पत्रिन् नकारान्तं पत्रिरिकारान्तश्च व्याख्यात । अमरसिंह-<sup>१</sup> नाममालायाम् ।

“पत्रिपत्रिपतगपतत्पत्रथाण्डजाः ।

नगौकोवाजिविकिरविविष्करपतत्रयः ॥”

इकारान्तं पत्रिशब्दं पठितोऽस्ति । भाष्यकर्ता ज्ञीरस्वामिना पत्रिरिकारान्तो निविद्ध । १०  
‘पतेरत्रिरिति’ ग्रान्त्या पतत्रि ग्रन्थकृदिदन्तं सन्यते । एव कथितमस्ति श्रीमद्मरकीर्तिना द्वयोर्वचनं प्रमाणम् । शब्दाना वैचित्र्यं वर्तते । न भसा गन्तु शक्नोति शकुन्त । शकुनिः । एव शकुनि । एव शकुनी । शकुन्त । शकुन । द्वाँ अदन्तौ । वयतीति वि । “वैत्रो डि”<sup>२</sup> । पतेन वैगेन गच्छतीति पतञ्जो<sup>३</sup> । विकिरति पत्राणि विष्किर ।

“ वर्णान्सो गवेन्द्रादौ सिहे वर्णविपर्यय ।

घोडशादौ विकारस्तु वर्णनाशः पृष्ठोदरे ॥”

१५

सुटागम । विकिरश्च ।

**जाङ्गलं पिशितं मांगं पलं पेशी च-**

पञ्च मासे । गल्यते अग्रते जाङ्गलं जङ्गलं च । पिश्यते रुविरादिमि पूर्यते पिशितम्<sup>४</sup> । मन्यते सम्भाव्यते शरीरोपचयोऽनेनेति मासम् । ‘वृत्तं विदिहिमिनिकस्यशिकपिण्य स” । एव स. प्रत्ययो<sup>२०</sup> भवति । पलयते (पालयते) देहं पलम् । रुषिगदिमि पिश्यते (पिशिति) शरीरम् पेशी । आमिषम् । रुच्यम् । तरसम् ।

तत्प्रियः ।

तस्य मासस्य प्रिय । आमिषशब्दाग्रे प्रियशब्दे प्रयुज्यमाने राक्षसनामानि भवन्ति । जाङ्गलं प्रिय । पिशितप्रिय । मासप्रिय । पलप्रिय । पेशीप्रिय ।

२५

**यातुधानस्तथा रक्षो—**

द्वाँ यातुधाने । यातुनि यातना धीयन्ते तुम्हिन् यातुधान । रक्षतीति रक्ष<sup>५</sup> । राक्षस । कोणार । कव्याद । नैक्षर्त । नैकसेय । नैकयेयव । विपुसेऽपि (कर्वर । अस्त्र ।) । कीनाशो नानार्थ ।

**रात्यादिचर इप्यते ॥ ५५ ॥**

१ अम० को० २।५।३४ । २ ज्ञीर० भा० २।५।३४ । ३ का० उ० स० ४।६। रामाश्रमस्तु वातीति विः । “वातेडिच्च” इत्याह । ४ पतेन वैगेन गच्छतीति विग्रहे तत्साधु व कल्पनीयम् । तादृशसूत्राऽतुपलभात् । पतत्युद्भयते इति पतञ्जो । “तृपतिम्यामङ्ग” का० उ० स० ५।२। इत्यङ्गप्रययलु युक्तः । “तृपतिम्यामङ्ग” इत्यङ्गप्रयय । ५ “पृष्ठोदरादय” २।२।१७।२। शा० कारिका । ६ “पिश अवयवे” पिशिति पिश्यते स्म वा पिशितम् । “पिशे किच्च” उ० स० ३।६। इतीतन् । अथवा क्त । इति रामाश्रम । ७. का० उ० स० ४।५३ । ८ रक्षन्यस्मादिति रक्ष । “सर्वधातुऽयोऽसुन्” । “भीमादयोऽपादाने” इत्यन्यत्र ।

रात्रिशब्दामे चरशब्दे प्रयुज्यमाने रात्सनामानि भवन्ति । रात्रिचर । निशाचर । क्षणदाचरः । रजनीचर । नक्षत्रः । दोपाचरः । इत्यादीनि ज्ञातव्यानि ।

प्रारम्भते स्वर्गबर्गः

### सुतोऽदितेस्-

५ अदितिशब्दामे सुतशब्दे प्रयुज्यमाने दैत्य (देव) नामानि भवन्ति । अदितिसुतः । अदितितनय । अदितिपोतः । अदितिदारकः । अदितिनन्दनः । अदित्यर्मकः । अदितिस्तनन्धयः । अदित्युत्तानशय ।

तदिद्धून्वा सेन्द्रो देवः सुरोऽमरः ।

१० पञ्च देवे । सह इन्द्रेण वर्तते इति सेन्द्रः । “दितु क्रो”<sup>१</sup>—। दिव् । दीव्यन्ति क्रीडन्ति स्वर्गेऽप्सरोमि सह विलसन्ति देवाः । अचा सिद्धम् । अथवा दीव्यति क्रीडति परमानन्दपदे देवः । सुष्टु ग्रजते सुर । तथा सुरन्ति सुरा । “सुर ऐश्वर्ये”सुरा एषामस्तीति वा । “आर्शसादिन्योऽच्” । यतोऽविजासुरा तै पीता । न प्रियते अमर । आदित्या । त्रिदशा । सुप्रसन् । स्वर्गांकिस । देवता । मीर्वाणाः । ऋभवः । मरुत् । वृन्दारका । निर्जरा । अस्वाना । विवृधाः । त्रिविष्टपसद् । लेखा । सुवर्वाणाः । अग्रुताशानाः । अनिमिपाः । दैवतम् ।

१५ स्वर्यौः स्वर्गोऽथ नाकथ,

चत्वार स्वर्गे । मुदितो जन स्वरति शब्द करोत्यत्र रात्मव्ययम् । स्वर् । “दितु क्रीडादिपु” । दीव्यन्ति क्रीडन्ति अत्र पुण्यवन्त इति द्यौः । “दिवेऽङ्गिविः”<sup>२</sup> प्रत्ययो भवति । असौ सुष्टु अर्जते स्वर्ग । “स्वृ<sup>३</sup> मृन्या गः” गप्रत्ययः । नास्यक टुःखमत्र नाकः । उभयम् ।

तद्वासस्त्रिदशो मतः ॥ ५६ ॥

२० तत्य स्वर्गस्य वास , तद॒॑ वास –स्वर्गवास । वौवास , स्वर्गवास ; इत्यादीनि देवनामानि भवन्ति ।

### तत्पतिः

तत्य देवस्य (स्वर्गस्य च) पति , तत्पति । देवपति , सेन्द्रपति , स्वर्गवासपति , स्वर्गपति , नाकपति , नाकेन्द्र , इत्यादिपर्यायनामानि इन्द्रस्य बेयानि ।

शक इन्द्रश्च शुनासीरः शतक्रतुः ।

२५ प्राचीनबहिः सुत्रामा वज्री चाखण्डलो हरिः ॥ ५७ ॥

शत्रुवर्लस्य गोत्रस्य पाकस्य नमुचेरपि ।

वृत्रहा च महस्त्राक्षो गीर्वाणेशः पुरस्त्रः ॥ ५८ ॥

विडौजाश्चाप्सरोनाथो वासवो हरिवाहनः ।

मरुतश्च मरुत्वृश्च वृषा चैरावणाधिपः ॥ ५९ ॥

३० शतमन्युस्तुराषाट् च पुरुहृतश्च कौशिकः ।

संक्रन्दनोऽथ मधवान् पुलोमार्मस्तसखः ॥ ६० ॥

त्रयज्ञिशदिन्द्रे । पातु शकनोतीति शुक्र । “स्त्रायितज्ञिशक्तिपिष्ठुदिशदिचन्द्र्य-

<sup>१</sup> “आश आदेर” जै० सू० ४११५०। २. का० उ० सू० ६५३। ३. का० उ० सू० ५६०।

<sup>४</sup> तस्मिन् स्वर्गे वसतीति तद्वास । गप्रत्यय । स्वर्गपर्यायार्थात् परत्र वासशब्दे प्रयुज्यमाने त्रिदशनामानि भवन्तीत्यर्थ । ५. का० उ० सू० २१४।

म्दीदिन्यो रक् । इन्दति परमैश्वर्ययुनो भवति इन्द्र । रक् । शुन आदित्य शीरो वायुस्तयोरपत्यमणो  
लुक्यभेदादवा, दीर्घे शुनाशीरः । तालध्यद्यम् । शोभनं नासीर कटकं वा यस्य स सुनासीरः । द्वौ दन्त्यौ ।  
शु अव्यय तालव्यमपि । अत्र पक्षे प्रथमस्तालव्यो द्वितीयो दन्त्यो भवति । तथा च शोभना नासीरा  
अग्रेसरा अस्य, शुनासीर । शु पूजायाम्, शवशुरवत् । शुनाशीरयोरपत्यमित्येके । शत क्रतवो यशा  
यस्य शतकतु । प्राचीना प्राचीनमुखा बर्हिषो दर्भा यस्य स । सुषु त्रायते नान्तं सुत्रामा । वत्र विद्यते  
यस्य स वज्री । आखण्डयति भिनत्यरीनाखण्डल । हियते शचीकाद्यहैर्हरि ।

५

“शत्रुवलस्य गोत्रस्य पाकस्य नमुचेऽपि”-

बलशत्रुर्गोत्रशत्रु पाकशत्रुर्मुचिशत्रु, इत्यादीनि इन्द्रनामानि भवन्ति । त्रुत्र दानव यज्ञ वा  
हतवान् त्रुत्रहा । किप् । (“किप्) ब्रह्मभ्रणवृत्रेतु” विष्प सहस्रमहीण यस्य स सहस्राक्ष । गोवाणाना देवाना  
मीश (गीर्वाणेशः) । विद्सु प्रजासु ओजो यस्य । पृष्ठादरादित्वाद् वृद्धि । विड भेदकमोजो  
यत्य वा (विडोजा ३) । आपरसा नाथोऽप्त्सरोनाथ । वस्वपत्य वासव । हरिर्वाहन् यस्य हरिर्वाहन् ।  
पुण्यज्ञये द्वियते च्यवते मरुत् । तान्तम् । मरुतो देवा । सन्त्यस्य मरुत्वान् । वर्षति, नान्तम्, त्रुषा । ऐराव-  
णानामधिप (ऐरावणाधिप) । शत मन्यव, क्रतवोऽस्य शतमन्यु । “पह मर्यणे” । । पह । “धात्रादे, १०  
ष स” । सहने कश्चित्तमपर प्रयुद्धके “धातोस्तचौ हेतौ” इत् । अस्यैप० दीर्घ । साहि जाते । तुरपूर्वक ।  
तुर त्वरितं साहशत्यभिनवत्यरीनिति तुराषाट् । “सहश्छन्दसि” विश् । “कारितत्या०” कारितत्तोप ।  
वेलोंप १० । “नहि” वृत्तिवृष्टिव्यधिरुचिसहितनिषु क्षा ॥ किवन्तेषु प्रायकाराणा दीर्घ । तुरा जातम् । तुरासाह-  
निष्पन्न । सि । “वृज्जनानात्ताच॑” मिलोप । “हशप॑” वृज्जन्तेजादीना ड “हस्य डः । “सहे साडः ष १४”  
सस्य पत्वम् । रपरत्वात्परपदेऽपि सस्य पत्वम् । स्वमते अपिशब्दबलात् । अथवा तुर वेग सहते तुराषाट् ।  
“सह॑” शब्दसि विण् पूर्ववत् । पुरु प्रभूत हूत यज्ञे यज्ञेष्वा (ज्ञे आ) ह्वान यस्य पुरुहृत । जातमात्रोऽ-  
दित्या कुशराच्छादित्वात् (कौशिक) । तथा पुराणम् १५ —

१०

१५

२०

“जातमात्रोऽथ भगवानदित्या स कुशैर्वृतः ।

तदा प्रभृति देवेशः कौशिकत्वमुपागतः ॥”

कुशैर्दर्मैश्वरति वा । अरिस्ती सद्क्रन्दयति सद्क्रन्दन । मद्यते पूज्यते नान्तो मघवा ।  
“मद्ये॑” नैलुगवन्तश्च” मद्ये॑ कनि प्रत्ययो भवति नलुगवन्तश्च । पुलोमस्या (म्नो॒) रि पुलोमारि ।  
मरुता पवनाना सत्वा मित्र, (त्र) मरुत्सख । दुश्न्यवन । त्रुत्रारि । बलसूदन । वृद्धश्रवा । जिरणु ।  
वत्रपर । वास्तोष्पतिः । गोपति । पर्जन्य । हरिहर्य । पूर्वदिक्पति । रवराद् । गोत्रमिद् । अग्रधन्वा ।  
हरिमान् । पाकशामन । दिवस्पति । २५

१. शु पूजायाम् अश्वने व्याप्नोति “शवशुर्” इति व्युत्पत्या “शवशुर्” शब्दो निष्पन्न । तदव-  
च्छुनासीरशब्देऽपि शु शब्दः पूजार्थ इत्याशय । २. का० सू० ४।३।८३। ३. वैवेष्टि व्याप्नोति विट् ।  
“विष्ट व्याप्तौ” किप् । विड व्यापकमोजो यस्य स विडोजा । पृष्ठोदगादित्वादोकारस्योकार । इत्यप्य-  
ह्यम् । ४ त्वक्केशवालरोमाणि सुवर्णमानि यस्य त । हरि स वर्णतोऽुद्वम्तु पीतकोशेयसप्रभ । इति  
शालिहोत्रोक्तप्रकारोऽुद्वो हरि । ५ मरुतो देवा । शास्त्यत्वेन सन्त्यस्येति यावत् । ६ का० सू० ३।८।२।४।  
७ का० सू० ३।२।१।०। ८. का० सू० ४।३।६।० । ९. का० सू० ३।६।४।३। १० “वैरपृक्तस्य” पा० सू०  
६।१।६।७ । ११ पा०सू० ६।३।१।६। १२ का० सू० २।१।८।० । १३ का० सू० २।३।४।६। १४ पा० सू०  
८।३।५।६। १५ का० सू० ४।३।६।० । १६. श्लोकोऽप्यम् अभिं चिं २।८।७। टीकायामप्येवमेवोपलम्यते ।  
१७. का० उ० सू० ५।४ ।

काष्ठा कुवृ दिगाशा च दक्षकन्या तथा हरित् ।

षड् दिशायाम् । काशन्ते राजन्ते (नद्रादयोऽत्र) काष्ठा<sup>१</sup> । क स्कुम्भाति विस्तारयति ककुपैः । भान्तम् । दिशत्यवकाश दिक् । “<sup>२</sup>ऋत्विदधृक् स्वादिगुणिहश्च” इति साधु । आशुते आशा । दक्ष प्रजापति, तस्य कन्या, दक्षकन्या । हरित्यनया हरित्<sup>३</sup> ।

५ तत्पर्यायिपरं योजयं प्राञ्छः पालगजाम्बरम् ॥ ६१ ॥

काष्ठादिनामतः परं योजयं प्राञ्छै विद्वद्विभः पालगजाम्बरम् । काष्ठापालः । कुपालः । दिक्पालः । आशापालः । दक्षकन्यापालः । इरित्पालः । पालप्रयोगे दिगगजनामानि भवन्ति । काण्ठागजः । कुपगजः । दिगगजः । आशागजः । दक्षकन्यागजः । हरिदगजः । अम्बरशब्दप्रयोगे दिगम्बरनामानि भवन्ति । काष्ठाम्बरः । कुपम्बरः । दिगम्बरः । आशाम्बरः । दक्षकन्याम्बरः । हरिम्बरः ।

१० तथा च—

“गिरिकन्द्रदुर्गेषु ये वसन्ति दिगम्बराः ।

पाणिपात्रपुटाहारास्ते यान्तु परमा गतिम् ॥”

एवविधा मुनयो नव्याना शरणं नवन्तु जन्मनि जन्मनि ।

पवनः पवमानश्च वायुर्वातोऽनिलो मरुत् ।

१५ समीरणो गन्धवाहः श्वसनश्च सदागतिः ॥ ६२ ॥

नभस्वान् मातरिश्वा च चरण्युर्जवनस्तथा ।

प्रभञ्जनः—

पञ्चदश वायौ । पवते जगत् पवित्रीकरोति पवनः । युच् । “पूढ़ पवने ॥” पू । पवते पवमान । “<sup>४</sup>पूढ़यो शान्द” आनमात्रः । अन्विंश्च अनिच्छ० नाम्यत्तुगुण । “ओऽश्व् ।” ‘आन्मोऽन्त॒ २० आने’ मीऽन्त । वातीति वायु । “<sup>५</sup>कुपापाञ्छी”—ति उण् । वाति सर्वत्राऽस्त्वलित वा वायु । वाति ग्रस्त्वलित याति, वात । “<sup>६</sup>मृगवाहस्यमिदमिल्लूपूयस्त्” । अनेन जगत् अनिति प्राणिति, न निलिति वा अनिलि । “निल गहने” । क्षुद्रजन्तवो ग्रियन्ते स्पर्शेनस्य मरुत् । तान्तम् । “<sup>७</sup>मृगोहति” उत्प्रत्यय । समन्तादीरयति समीरण । गन्धं वहति गन्धवह । गन्धवाह । गन्धवाही । श्वसन्त्यनेन श्वसन । सदा सर्वकालं गतिर्यस्य स सदागतिः । नम आकाशमस्यास्तीति नभस्वान् । मातरि २५ रेत श्वयति वर्द्धते नान्तो मातरिश्वन् । मातरिश्वेव भवनि “<sup>८</sup>मातरिश्वा” । चरणचर याति चरे-

१ “काशृ दीपौ” “हनिकुशि” इत्यादि २१२। पा०उ० सूत्रेण कथन । २ क वात स्कुम्भाति विस्तारयति । किप् । पृष्ठोदरादिवास्त्वलोप । केनादित्येन जलेन वा कुम्भितानि भानि नद्राणि यस्याप्निति “कुम्भा” इत्यावन्तोऽपीति केचित् । ३ का०सू०४१।३७३।४ हरिन्ति नयन्ति अनया हरित् दिग्जानेनैव कवित् कुतश्चित् कुत्तचिन्धयति । “दसहिमिद्युभ्य इति” इतीति । ५ का०सू० ४।४१८।६ “अन्विकरण कर्त्तरि” इति पूर्णे सूत्रम् । का० सू० ३।३।३२। इत्यन्विकरण । ७ “अनि च विकरणे” का० सू० ३।४।३।८ का० सू० १२।११।९ का० सू० ४।४।७। १० का० उ०सू० १।१।११ का०उ० सू० ४।२।७। १२ का०उ० १।३।१३।१३ मातरि जनन्या रेतः प्रसिद्धं यथा वर्धते, तथाऽन्तरीक्षे वर्धमानो वायु ‘मातरिश्वा’ इत्याशय । क्षीरस्वामी तु—‘मातरि न्ये श्वयति’ इत्याह । रामाश्रमद्यु—‘मातरि जनन्या श्वयति वर्धते सप्तसप्तकल्पत्वात्’ इत्याह । आपन्नस्त्वाया दितेर्निद्रा उवस्थाया तत्कुक्षिप्रविष्टेनेन्द्रेण कुलिशद्वाग् तद्गर्भस्यैवोनपश्चाशन्छक्लीकरणस्य पुराणप्रसिद्धत्वात्सप्तसप्तकल्पनम् । “दु ओश्विगतिवद्धयो” । दिवधातो “श्वन्तुकून्नि” ति कनिनन्तो निपातः समया अतुरुक् च ।

“रण्यः । केवयुभुरण्यव्यवर्णदय” केवयादयः शब्दा दुप्रत्ययान्ता निपात्यन्ते । तथा च द्विसन्धानकाव्ये<sup>२</sup>—

“असूयया उगम्य निशाम्य यां पुरो

विलज्जयाऽम्भःपरिणामिनीदशाम् ।

गता इवाभान्ति कुलाद्रिपेशस्ता-

श्रीराध्यलोलाः परिखा उम्बुकीचयः ॥”

“ज” ति सौबो धातर्गते । सौत्रा धातवोऽपि खादौ पठयन्ते । जवतीति जवन । ३ज्ञचट-

कम्यदन्तम्यसुग्निज्वलगचपतपदाम्” एव्यो यर्भवति । सर्वा दिशा प्रभनक्ति प्रभञ्जन । जगत्याण ।

प्रपदश्व | स्पर्शनः | समीक् | हरि | महाबलः | आशुग |

१०८

अस्य पथायपुत्रा भामाज्जनात्मजा ॥६३॥

अस्य पर्यायात् प्रभज्जनादिशब्दात्परत्र पुत्रशब्दो दीयते तदा भीमहनुमतोर्नामानि भवन्ति । १०

पवनपुत्र । पवनतनय । पवमानतनय । वायुपुत्र । वायुतनय । वातपुत्र । वाततनय । अनिलपुत्रः ।

अनिलतनयः । समीरणपुत्र । समीरणतनय । गन्धवाहपुत्र । गन्धवाहतनय । श्वसनपुत्र । श्वसनतनय ।

मदागतिपुत्र । मदागतितनय । नभस्वतपुत्र । नभस्वतनय । मातरिश्वपुत्र । मातरिश्वतनय ।

चरण्यपुत्र । चरण्युतनय । जवनपुत्र । जवनतनय । चलपुत्र । चलतनयः । प्रभञ्जनपुत्र । प्रभञ्जन-

तनय । भीमत्य हनुमतश्च नामानि ज्ञातव्यानि ।

तत्त्वादपि;

વાયુ વાયો સત્ત્વા તત્ત્વસ્વ | વાયુશક્તાયો સત્ત્વશક્તાદે પ્રયત્નિમાને અભિવ્યક્તામાર્ગિ સુવિદ્ધ |

॥ वारसु । वारसु । याचिलसु । वारसु । महसु । यद्यवाहसु । समीरासु । जसरसु ।

प्रवनसत्यं । वायुनेत्रं । श्रान्तिसत्यं । वरातिरूपं । वसातिरूपं । कृपयाहस्यं । दम्भरुद्धसत्यं । व्यसनसत्यं ।

यत्वेत्प्राप्ति ज्ञात्वा प्राप्ति ।

शिखी वहि: प्रातःक्षत्राशशभग्नि: ।

दिवायेदा सप्तर्जितवेदास्त्रवाच ॥ ६२ ॥

प्राप्तवर्तिर्वाप्ति नवतो द्वितीयः ।

स्वाहापात्रहुताशरथ उवलना दहनाउनलः ।  
ैश्वर्यः क्षमारह गेतिवालो विमानः ॥ ५ ॥ १

पश्चान् रुद्रमुश्व राहताश्वा विमाविसु  
विप्रकृषि अग्नीसर्वे त्वयावामो द्वाष्टनः ।

एकविश्वतिरग्नो । “अक अग कुटिलाया गतौ ।” अगति वायुवशादूध्व गच्छतीत्यर्थिन । शिखाऽस्त्यस्य शिखो । उद्यते वहिः । “अगिश्रुतियुवहिःयो नि” एव्यो धातुम्यो नि प्रत्ययो भवति । पुनराति पात्रः । आय शोप्यति रसान् “आशाशक्षणिः” । “आशौ शष्पे सनिकः” । “शुप्य

१ चरण्युशब्दोऽयम्, न तु चरेण्यः । द्विसन्धानेऽपि चरण्युशब्दस्यैव दर्शनात् । एतत्साधकमुणा-दिमत्रम् अभिधानचिन्नामणिटीकायाम् (३।४८३) उपलब्ध्यते, नैवान्यत्र । वस्तुतस्तु वैदिकोऽय प्रयोगः । ‘चरण् वरण् गतो’ कण्डवादौ चरण् धारुर्यक् प्रत्ययात् । ततः “क्याच्छन्दसि” पा०म० ३।२।७० । इयु-प्रत्ययः । सुम्नयु, तुरण्यु, भुण्य, सप्यु, आदिशब्दवदस्य सिद्धिः । विशेषस्तु “क्याच्छन्दसि” इत्यस्य तत्त्वबोधिन्या द्रष्टव्यः । चरण्यतीति चरण्यु । २ स० १ श्लो० १९ । ३. का० स० ४।४।३२ । ४ वहति हव्य वह्विति व्युपतिरन्यत्र । ५ का० उ० स० ३।५० । ६ आशोऽुमिच्छतीति आदृपूर्वकाच्छुदेः सञ्चन्तात् “आडि गुप्ते सनश्लन्दसि” पा०उ०स० २।१०६ । अनिं । आशु शीघ्रम्, आशु वीहि वा शु सङ्घ खण्णोतीति वा । “सर्वधार्मय इन्” इत्यन्यत्र । ७ का० उ० म० ५।१५ ।

शोपे ।” अन्तर्भूतकारितार्थोऽयम् । आशुपूर्वः । आशाहुपपदे शुषे सनिक् प्रत्ययो भवति । हिरण्यं रेतोऽस्य स हिरण्यरेता । यत् सृतिः “—“अग्नेरपत्यं प्रथमं सुवर्णम्” । सताचिंचो यस्य स सत्ता-चिंचः । भवन्ति “हिरण्या, कतका, रक्ता, कृष्णा, प्रसुतभावाऽन्या । अतिरिक्ता बहुरूपेति सप्त सप्ताचिंचो जिह्वा ।” जाते जाते विद्यते सान्तो जातवेदस् । जाता वेदा अस्माद् वा जातवेदाः<sup>२</sup> ।

५ तन् न पातयति <sup>३</sup>तनूनपात् । अपि तान्तो दान्तो वा । ‘स्वाहा’ इत्यस्य (स्याः) पतिः भर्ता स्वाहापति । हुत वषट्कारकृत वस्तु असनातीति हुताश । हुतम् आशो भोजन यस्य वा । ज्वलती-त्येवशीलो ज्वलन । दहतीत्येवशीलो दहनः । अनिति प्राणिन्यनेन अनलः । विद्वानरस्यापत्य वैश्वानरः । कृश्यति तनूकरोति <sup>४</sup>कृशानुः । रोहिताऽस्यो मृगोऽस्यो वाहनमस्य रोहिताऽश्यः । विभा वसुर्धनं यस्य स विभावसु । वृषो धर्म, कपिवराह श्रेष्ठश्च तदस्यात् वृषाकपि । “पुराणम-

१० “कपिर्वराहः श्रेष्ठश्च धर्मश्च वृष उच्यते ।

तस्माद् वृषाकपि प्राह काशयपो मां प्रजापतिः ॥”

हमीनाममालायाम्<sup>५</sup>—

“वृषाकपिर्वासुदेवे शिवेऽग्नौ च ।”

शम्या गर्भो यस्य स शम्मीर्गम्भे । हत्य वहतीति हत्यवाट् । हुतमनातीनि हुताशन । बहुल ।

१५ वमु । सिततरगति । अचिंचान् । धूम-वजः । बहिर्ज्योतिः । उपर्वध । चित्रमानुः । शुचि । कृषीट-योनि । दमुना । कृष्णवर्तमा । अपापित्तम् । वीतहोत्रः । वृद्धभानु । आश्रयाशः । वनञ्जयः । नमोन् । दम्भा इत्येके । दमेरुनमि ।

### तदादिसूनुः,

अग्नेऽग्नुः । बहिपुत्र । वृपाकपिसूनुः । वृपाकपिषुत्र । इत्यादीनि स्कन्दनामानि भवन्ति ।

२० सेनानीः स्कन्दश्च शिखिवाहनः ॥ ६६ ॥

कार्तिकेयो विशाखश्च कुमारः पण्मुखो गुहः ।

शक्तिमान् क्रौञ्चभेदी च स्वामी शश्वणोङ्गवः ॥ ६७ ॥

द्वादश स्कन्दे । मेना नयतीति सेनानीः । “सत्सूऽदिपद्महुयुजविदभिदल्लिदजिनीराजामुप-सर्गेऽपि” एषामुपमर्गेऽशनुपर्गेऽपि नाम्यनाम्नुपपदे क्विं भवति । स्कन्दत्यरीन् स्कन्दः । स्कन्दं<sup>६</sup> शुष्क रेतोऽस्य वा । शिखी मूर्यो वाहनमन्य शिखिवाहनः । कृत्तिकानामपत्य कार्तिकेयः । दानव-बलौ बस्तेजासि श्यति विशेषेण तनूकरोति विशाख । विशाखामुतो वा । कुमारो ब्रह्मचारिस्त्वात् ।

१. अम को० ज्ञार० मा० १११५५ । २. सर्वत्रोत्पन्नपदार्थे वर्तमानवाद् वेदोत्पत्तिका-रणत्वेन चाग्नेसन्त्वाच्च । जात वेदो धन (मुवर्ण) यस्मात् जात वेत्ति वेदयते वा इति त्युत्पत्तिर्गपि ।

३. तन् स्वस्वरूप न पातयति दहतीत्यर्थ । विप् । “नश्चाण्नपात्” इति नलोपाभाव । तन् न पति रक्षति जाते जाते विनष्टत्वादिति वा । पाते शत्रुत्रय्य । तन्वा ऊन पाति रक्षतीति तनूनप वृत तदत्तीति । “आदोऽनज्ञे” इति विट् । इत्यप्यूद्यम् । ४. कृशोऽस्यनिति वर्वते कृशानुरिति वा ।

५. शताकोऽयम्, अभिं चिं २१२९ । टीकायामेवोपल-यते । ६. अनेका० स० ४२१८ ।

७. का० स० ४१३७४ । ८. स्कन्द रेतोऽस्येष्यर्थाभिप्रायेण । विग्रहस्तु स्कन्दति शुष्करेता भवतीति स्कन्द इत्येवंरूप । ब्रह्मचारिणा शुष्करेतस्त्वमागमात्सद्भूमि । पचाश्च । ९. विपूर्वात् “शो तनूकरणे” इत्याद् बाहुलकात्खपत्य, विशाखानन्द्रे जातो वा । विशाखयति विशेषेण व्याख्याति दानवबलमिति वा । “शावृ व्यामौ ।” पचाश्च ।

कुतिस्तो मारोऽस्येति कुमारः । पण्मुखानि यस्य स चरमुखः । गूह्यं रक्षति देवसैन्यं गुह्यः । “नामगुप्त  
प्रीकृगृजा कः ।” शक्तिर्वित्तेऽस्य शक्तिमान् । कौञ्जं पर्वत मिनतीति कौञ्जभेदी । स्वमस्त्यस्य स्थामी ।  
शरणा वनम्, शरवणम्, तस्मिन्नुद्धव शरवणोद्धवः । गौरीपुत्र, । शक्तिपाणि । तारकारि । अग्निभूः ।  
बाहुल्येः । गाहूर्य, । ब्रह्मचारी । महासेनः । महातेजा । पार्वतीनन्दनः ।

तत्पिता शङ्करः शम्भुः शिवः स्थाणुर्महेश्वरः ।

५

त्र्यम्बको धूर्जटिः शर्वः पिनाकी प्रमथाधिपः॥ ६८ ॥

त्रिपुरारिविशालाक्षो गिरीशो नीललोहितः ।

रुद्रेन्दुमौलिर्यज्ञारिस्त्रिनेत्रो वृषभध्वजः ॥ ६९ ॥

उग्रः शूली कपाली च शिपिविष्टो भवो हरः ।

उमापतिर्विरूपाक्षो विश्वरूपः कपर्दयि ॥ ७० ॥

१०

एकोननिशादीश्वरे । तस्य स्कन्दस्य पिता । शं सुख करोतीति शङ्कर । शम्भवती (ल्यस्मादि) १५  
ति शम्भुः । “सुवो डुर्विशम्भेषु च ।” शेते प्रलयकाले जगदत्र शिवः । जगति प्रलीनेऽपि तिष्ठति  
स्थाणु । महांश्वाशौ इ॒श्वरः महेश्वर । त्रीण्यम्बकानि अहीण्यस्य त्र्यम्बकः । त्रयाणा लोकानाम् अम्बक  
पितत्यागम । धूर्गंडु जटियु यस्य वा धूर्जटिः । शृणाति दैत्यान् शर्वः ।  
“शर्वजिह्वाप्रीवा” एते कप्रत्ययान्ता निपात्यन्ते । पिनाकमस्त्यस्य पिनाकी । प्रमथाया अधिपः प्रम-  
थाधिपः । त्रिपुरासुरस्यारिस्त्रिपुरारि । विशाले विस्तीर्णे अक्षिणी यस्य विशालाक्षः । “सक्यत्तिणी  
स्वादुः ।” गिराणामीशो गिरीश । कालकूटमत्तानीलं कृष्ण लोहित यस्य स नीललोहितः । “नीलः ।”  
कण्ठं लोहितश्च केशे इति नीललोहितः । इति पुराणम् । रोदयत्यरिस्त्री रुद्रः । “सक्षायितत्रिवत्ति-”  
शक्तिर्विष्टुदिसदिमदिन्दिचन्तुन्दीन्दिन्यो रक् । इन्दुमौलिर्मुर्कुट यस्य (स) इन्दुमौलिः ।  
यज्ञाना पशुकारणलक्षणानाम् अरिः, यज्ञारिः । त्रीणि नेत्राण्यस्य त्रिनेत्रः । वृषभो बलीवदो ध्वजाया २०  
यस्य स वृषभध्वजः । कोपमूर्जति उग्रः । शूलमस्त्यस्य शूली । कपाल मनुष्यकरोतिरस्त्यस्य कपालो ।  
शिव, पिंटो इता अस्तिरूपो (विष्टे) मूर्धन्यस्य स शिपिविष्टः । भवतीति भवः । हरत्यप हरः ।

१ “कुमार क्रीडायाम् ।” कुमारयतीति पचाश्यच् । को पृथिव्या मारयति दुष्टानिति वा  
विग्रहो बोध्य । २ का० उ० स० ६६८ । इतीन्प्रत्ययः । ३ स्वशब्ददामिन् प्रत्यय । ‘स्वामिनैश्वर्ये’  
पा० स० ५।२।१२६ । अथवा शोभनमस्ति रक्षतीति स्वामी । “सावमेरिन् दीर्घश्च” का० उ० स० ६६८  
इतीन् प्रत्ययः । ४ शम्भवति भावयतीत्यर्थो वा । अन्तभावितपृथिव्येऽत्र भवतिः । ५ का० स० ४।४।५५६ ।  
६ उक्तविवहे शे वर्वादुलकाड्डविप्रत्ययः । शिव करोतीति शिवयति, ततः पचाश्यचि शिवो वा । शिव-  
स्यास्त्यस्मिन्नेत्र्यपि विग्रहो बोध्यः । ७ का० उ० स० २।२।८ प्रमथाया दुर्गायाः । परन्तु “प्रमथाः म्युः  
पारिपदाः” इत्यमरादिषु प्रमथशब्दस्य शिवपर्यायत्वेन प्रसिद्धेः, दुर्गात्वेनाप्रसिद्धे प्रमथानामविपः  
इति सुवचम् । ९. “राजादीनामदन्तता” का० स० २।६।४। वृत्तिः ५०। १० नील कण्ठे लोहित जटाया-  
मङ्ग यस्येति विग्रहार्थ । तदुक्तम्—“नील येन ममाङ्गन्तु रसाक लोहित त्विषा । नीललोहित इत्येष  
ततोऽह परेकीर्तिः ॥ इति स्कान्दे” इति मुकुटः । ११ अम०कौ०क्षीर०भा० १।१।३३। १२ का० उ० स०  
२।१। १३ इन्दुमौलां यस्येति विग्रहः सरलः । १४ उच्यते कुधा समवैति उग्रः । “उच् समवाये”  
उच् धातु । ततो रक् । गश्चान्तादेशः । क्रूरेन्द्रादि उ० स० । १५ शिवपिण्ठशब्दयोराद्यरोपादानेन  
शिपिशब्दोऽ । १६. भव्याय भवति कल्पते इत्यर्थः ।

उमायाः पति उमापतिः । विरुपाण्यक्षीण्यस्य विरूपाक्षः । विश्वेषु रूप यथ स विश्वरूपः । कपदोऽस्यस्य कपर्दी । कपदों जटाजृटः । क शिरः पिपर्तीति कपर्दः । श्रौणादिको द । अपिशब्दात्-ईशान । शशिशेषवर । पशुपति । शम्भुः । गिरिश । श्रोकण्ठः । सर्वजः । त्रिपुरान्तक । भूतशः । परमेश्वरः । अनवकरिषु । दक्षाख्वरध्वसक । स्था । वामदेव । कामधंसी । व्योमकेशः । वहिरेता । भीम । भर्ग । ५ कृत्तिवासा । तृष्णाङ्कः ।

### भागीरथी त्रिपथगा जाह्नवी हिमवत्सुता । मन्दाकिनी—

पञ्च गङ्गाशाम । भगीरथेन राजा त्रिपतित्वात्स्थापत्य वा भागीरथी । त्रिभिः पथिभिर्गच्छति त्रिपथगा । १० त्रिमार्गं च । जह्नुना पीता श्रीत्रेण त्यक्ता जाह्नवी । जह्नोरपत्य वा जाह्नवी । हिमवतो हिमाचलत्य सुता हिमवत्सुता । मन्दाका मन्दा गतिरस्यस्या मन्दाकिनी । सुरसरित् । १५ विष्णुपदी । सदिद्वरा । त्रिदशदीर्घिका । त्रिक्षोता । भीष्मसू । सुरनिम्नगा ।

### द्युपर्यायधुनी

आकाशशब्दतो ( तः परत्र ) नदीपर्ययेषु गङ्गानामानि भवन्ति । खस्त्रोतस्थिनी । विहायोधुनी । वियस्तिन्धु । व्योमस्त्रवन्ती । नभोनदी । गगननिम्नगा । अम्बरापगा । व्योनदी । आकाशनदी । १५ अन्तरीक्षद्विरेका । मेघपथसरित् । वायुपथतरङ्गिणी । इत्यादीनि जातव्यानि ।

### गङ्गानदीश्वरः ॥ ७१ ॥

गागीरथ्यादिशब्दत ( परत्र ) ईश्वरपर्ययेषु हरनामानि भवन्ति । भागीरथीराजः । त्रिपथगाधिप । जाह्नवीपति । हिमवत्सुतास्वामी । मन्दाकिनीनाथ । इत्यादीनि जातव्यानि ।

विधिवेधा विधाता च द्रुहिणोऽजश्चतुर्मुखः ।  
पद्मपर्याययोनिश्च पितामहविरच्चिनौ ॥७२॥  
हिरण्यगर्भः सृष्टा च प्रजापतिसहस्रपात् ।  
त्रिष्णात्मभूरनन्तात्मा कः

सप्तदश व्रद्धिणि । विधतिः सूजति विधि । विधते वा विधिः । “उपसर्गे द. किः० ।” विधाति सूजति वेधा । ““सर्वधानुभ्योऽसन् ।” “विध विधाने ।” विधधाति धारयति भूतानीति विधाता । २५ द्रुद्यत्यसुरेभ्यो द्रुहिण । न जायतेऽजः । चत्वारि मुखानि वक्त्राण्यस्य चतुर्मुख । “पद्मपर्याययोनिः”- पद्मपर्यायशब्दात्र्ये योनिशब्दे प्रयुज्यमाने धारुनामानि भवन्ति । तामरसयोनिः । कमलयोनिः । नलिनयोनिः । पद्मयोनि । सरोजयोनि । सरसीष्मयोनि । खरण्डयोनिः । पुण्डरीकमव । महोत्पलज । अरविन्दयोनि । शतपत्रयोनि । पुष्करयोनि । इत्यादीनि जातव्यानि । दक्षमन्त्रादीना लोकपितृणा पिता पितामह । आत्मनो भूतानि विरिदृक्ते पृथक् करोति चिरिञ्जन । विरिज्ज । विरिज्जिश्च ।

१ त्रयाणा पथा समाहारस्त्रिपथ तेन गच्छतीति वा । इत्य च पूर्वे समाहारदिग्गौ हृते तत्र समासान्तविधानेन त्रिपथशब्दस्याकारान्तत्व सूपणाद्य भवति । गगायात्रिपथगामित्वे भारतोक्त वचनम्- “क्षितौ तारयते मत्यांत् नागौस्तारयतेऽप्यधः । दिवि तारयते देवोऽस्तेन त्रिपथगा स्मृता ॥” २ मन्द-मकितु गन्तु शीलमस्या इति वा । “अक कुटिलाया गतो ।” णिन् । डीप् । ग्रन्थोक्तविग्रहै मन्दाकशब्द-न्य मन्दगत्यर्थे प्रमाणं गृग्यम् । ३ “विध विधाने” । त्रुदादिः । सर्व धानुभ्य इन् किञ्च च । ४ का० स० ए५।७० । ५ का० उ० स० ए५६।

हिरण्य गर्भे यस्य, हिरण्य गर्भो वा यस्य हिरण्यगर्भः । ‘पुराणम्— ।

“हिरण्यगर्भमभवत्त्राण्डमुदके तथा ।  
तत्र यज्ञे स्वयं ब्रह्मा स्वयम्भूलोकविश्रुतः ॥”

सृजतीत्येवशील स्त्रष्टा । प्रजाना पति प्रजापति । “पद गतौ ।” पद । पश्चन्ते गम्यन्ते (गच्छन्ति) प्राणिन्, तान् पत्रमानन् जनन् चरणा एव प्रगुञ्जते । “धातोश्च हेतोऽ” इत् । अस्योप० दीर्घ । पादि जाओ । पाद्यन्तीति पाद । विष्वच । “कारितस्याऽ” कारितलोपः । वेलींप । पाद । सहस्र पादो यस्य स सहस्रपाद् । ब्रह्मन्ति वर्णने चराचराण्यत्र ब्रह्म । उभयम् । इदं ब्रह्म । अयं ब्रह्मा । अथवा ब्रह्मन्ति ब्रतानि यस्मिन्निति ब्रह्म । वृहे ऐन् प्रत्ययो भवति, अन्ते हकारात् पूर्वम् । आत्मना भवति आत्मभूः । न अन्तो विश्रन्ते यन्य सोऽनन्तः, अनन्तो विनाशरहित आत्मा यस्य सः अनन्तात्मा । कायतीति “क । परमेष्ठी । सुरज्येष्ठः । शतानन्दः । स्वयम्भू । जगत्कर्ता । शतमृति । स्थविरः ।

तत्पुत्रोऽथ नारदः ॥७३॥

तस्य पुत्रस्तपुत्रः । ब्रह्मणः शब्दात् (परत्र) पुत्रशब्दे प्रयुज्यमाने नारदनामानि भवन्ति । विधिपुत्रः । वेशं पुत्र । विवातपुत्रः । विरिच्चिपुत्रः । दुष्मिणपुत्र । अञ्जपुत्रः । चतुर्मुखपुत्र । पदमयोनिपुत्र । वितामहपुत्र । हिरण्यगर्भपुत्र । प्रजापतिपुत्र । सहस्रगतपुत्र । ब्रह्मपुत्र । आत्मभूसुत । अनन्तात्मपुत्र । इयादीनि जातव्यानि ।

१५

कृष्णो दामोदरो विष्णुरुपेन्द्रः पुरुषोत्तमः ।

केशवश्च हृषीकेशं शार्ङ्गीं नारायणो हरिः ॥ ७४ ॥

केशी मधुर्वलिर्वाणो हिरण्यकशिपुर्मुरः ।

तदादिसूदनः शौरिः पदमनाभोऽप्यघोऽक्षजः ॥७५॥

गोविन्दो वासुदेवश्च—

२०

एकविश्वतिर्नागयगो । कर्षन्यरीत् कृष्णवर्णत्वाद्वा कृष्णः । “इण्जिक्षिप्यो नक् ।” दाम उदरे यस्य स दामोदर । यल्लक्ष्यम्<sup>१</sup>-वालो हि चापलाददामा बद्धोऽभूत् । वेवेष्टि व्याख्योति विष्णु । “सूचिपिन्या यश्वत् ॥” उपगतमिन्द्रसुपेन्द्र । इन्द्र उपगतोऽनुजन्वाद् वा उपेन्द्र । पुरुषेनु उत्तम पुरुषोत्तमः । केशा सन्त्यम्य केशवः । हृषीकेणामिन्द्रियाणामीशो वशित्वाद् हृषीकेश । शार्ङ्गी घनु-रत्यस्य शार्ङ्गी । नारा आपो अथन यस्य नारायणः<sup>२</sup> । यस्तमृति ।<sup>३</sup>—

२५

“आपो नारा इति प्रोक्ता आपो वै नरसूनवः ।

अयनं तस्य ताः पूर्वं तेन नारायणः स्मृत ॥”

१ “पुराणम्” इत्यार्थं “लोक विश्रुतः” इत्यन्तम् अभिधानचिन्तामणिदीकाशम् २।१२७। उपलभ्यते । २. का० सू० ३।२।१०। ३. का० सू० ३।६।४४। ४ “सर्वधातुम्यो मन्” का० उ० सू० ४।२।८। ५ “कै शब्दे” वेदध्वनिकर्त्तव्येन ब्रह्मणि कायतीति क इति विग्रहः । “कच दीतौ” कचते वा । “अन्येन्योऽपि हश्यते” पा० सू० ३।२।१०। सूत्रवार्तिकेन ड । ६. का० उ० सू० २।५।१।७ बालकृष्णो दि यशोदया तत्त्वापत्त्वनिवारणाय कटिप्रदेशे बद्ध इति पौराणिकी कथा “लक्ष्यम्” इति पदेन स्मार्यते ८ का० उ० सू० २।४। ९. नाराणा समूहो नारम्, तदयन यस्य, नराद् विराद् पुरुषाज्ञात तत्व नारम्; तदयते जानाति वा, आयथति प्रवर्तयति वा, “नारायण” इत्यपि अुत्पत्तिरत्र । १० मनुस्मृति १।१०। तृतीयचरणे “ता पदस्यायनम्पूर्वम्” इति पाठो लभ्यते ।

नरस्यापत्यं वा । नरनयते इति वाक्येन नरायणोऽपि । हरस्यव्रह्म हरि । वेशाः सन्त्यस्य केशी ।  
 'मन्यते जनै मधु ।'" "मनिजनिनमा मधजतनाकाश्च" एषामुप्रत्ययो भवति मधजतनाकाश्च यथासख्य-  
 मादेशा भवन्ति । "बल बल्ल च ।" बलतीर्ति बलिः । 'इ॑ सर्वभातु॒य ।' बण्यते बाणः । तदादि-  
 सूदनः । तदादीना केश्यादीना सूदनो नाशकर्ताऽरि । केशी मधु, बलिः, बाणः हरिण्यकशिपुः, मुरु-  
 ५ एव्य, शब्देभ्यः परत्रारिशब्दे प्रयुज्यमाने नारायणनामानि भवन्ति । केशिवैरी । केश्यरातिः । केश्यमित्रः ।  
 केशिद्विट् । केशिसप्तन् । मधुवैरी । मध्वराति । मध्वमित्र । मध्वरिः । मधुद्विट् । मधुमश्तन् । मधुरिपु ।  
 बलिवैरी । बल्यराति । बल्यमित्र । बलिद्विट् । बलिसप्तन् । बलिरिपु । बाणवैरी । बाणाराति । बाणा-  
 मित्र । बाणारि । बाणद्विट् । बाणसप्तनः । बाणरिपु । हिरण्यकशिपुद्विट् । हिरण्यकशिपुसप्तनः ।  
 हिरण्यकशिपुरिपुः । मुरवैरी । मुरारिः । मुरासाति । मुरद्विट् । मुरसप्तनः । मुररिपुः । मधुशत्रुः । बाण  
 १० शत्रु । मधुसूदन । बलिसूदन । बलिबन्धनः । बाणसूदन । हिरण्यकशिपुसूदनः । केशसूदन । इत्यादि  
 पर्यायनामानि । शूरस्तस्यादिपुरुषस्तस्यापत्यम्, शौरि । संरिवा । पदम् नामावस्य पद्मनाभ ।  
 "४सजाया नामिः ।" अधोच्छाणा जितेन्द्रियाणा जायते प्रत्यक्षीभवति, अधोक्षज । गा मुव विन्दति  
 गोविन्दः । वसुदेवस्यापत्य वासुदेव । ५मञ्जुकेश । श्रीवत्साङ्क । श्रीपति । पीतवासा । विष्वक्रसेन । विश्व-  
 रूप । मुकुन्दः । धरणिधर । सुपर्णकेतु । वैकुण्ठ । जलशयन । रथाङ्गपाणि । दाशार्थः । कनुपूर्प ।  
 १५ वृषाकपि । अच्युतः । इन्दावरज । ७वन्न । विष्टरश्रवा । वनमाली । सनातन । जिन । शम्भु ।  
 इत्यावृद्धम् ।

### लक्ष्मीः श्रीगांगिमिनीनिदरा ।

चन्वार श्रियाम् । लक्ष्मीदर्शनाकाङ्क्षयो ।" लक्ष्यति दर्शयति पुण्यकर्मण जनमिति लक्ष्मी ।  
 "लक्ष्मेमाङ्नतश्च" अस्मादीप्रत्ययो भवति मोऽन्तश्च । "मञ्जु श्रित्र॑ (सेवायाम) ।" पुण्यकृत श्रयतीति  
 २० श्री । " वचिपच्छिद्वित्पुज्ज्ञा किंवदीर्घवत्" एव्यः किंप्रत्ययो भवति दीर्घ्यं न्वरस्य चैपम् । गा मिनो-  
 तीति गोमिनी । १० इन्द्रिति परमैश्वर्यवुज्ञा भवति इन्दिरा । कमला । पद्मा । पद्मवासा । हरिप्रिया ।  
 क्षीरोदत्तनया । माया । मा । ता । ई । आ । रमा । सीता । बला (चला) । मर्मी । अविज्ञाऽपि ।

### तत्पति॑ शैलभूम्यादिधरस्त्रक्षरस्तथा ॥ ७६ ॥

तस्याः पतिस्तत्पति॑ । लक्ष्मीपति॑ । श्रीपति॑ । गोमिनीपति॑ । इन्दिरापति॑ । इत्यादीनि हरि-  
 २५ नामानि स्युः । शैलभूम्यादिधरः । पर्वतवर । शैलधर । दरीभूदधरः । अचलवर । गृहिधरः । सानुम-  
 दधर । गिरधरः । नगधरः । शिलोच्चयवर । भूमिधर । भूधर । पूर्वाधर । गङ्गाधर । मेदिनोधर ।

१ मन्यते जनै 'खलत्वेन इति शेष । २ का० उ० सू० ११८ । ३ का० उ० सू० ३१४ ।  
 ४ का० सू० २१६११ । वृत्तिः । ५ अथ कृतमक्षजमैन्द्रियक ज्ञान येन, अधो न क्षीयते जातु इति  
 वा विग्रहाऽपिकोऽन्यत्र । ६. "मञ्जुकेश" शब्दस्य "विष्णु" पर्यायत्वे कल्पद्रुरपि प्रमाणम्—'मञ्जुकेश'  
 कोऽनुभोरा, तीमगमो धराधर ।" ३२१७ । ७ वन्नशब्दस्य नारायणार्थेऽमरोऽपि प्रमाणम् । "विषुले  
 नकुले विष्णौ वन्न । स्यात्पिङ्गले त्रिषु ।" ३३१७० । ८ का० उ० सू० ३३५ । ९ का० उ० सू०  
 २१२३ । १० "गोमिनी" शब्दस्य लक्ष्मयेऽप्रमाण मृग्यम् । अत्रत्वविग्रहोऽपि चिन्त्य । मत्वर्ये गोशब्दा-  
 मिनिप्रत्यये दीपि गोपालिकार्थै तस्य प्रतिद्वौ कोपान्तरसवादः । ११. ता, ई, आ, एषा लक्ष्मयेऽप्रमाणम्—  
 "लक्ष्मी पद्मा रमा या मा ता धी कमलेन्दिरा" अभिं चिं २१८० । "या" इत्यत्र ई आ इति॑  
 छेद । "लक्ष्मान्तु मर्मरो विष्णुशक्ति क्षीराविभानुवी ।" इति॑ तटीकायाम् ।

महीधरः । धराधर । वसुन्धराधरः । धात्रीधरः । क्षमाधरः । वसुमतीधर । विद्वमराधरः । अवनीधरः । धरणीधरः । क्षमाधर । धरित्रीधरः । क्षितिधरः । कुधरः ( त्रः ) । कुम्भिनीधरः । इलाधरः । उर्वरीधर । उर्वीधरः । गोधरः । जगतीधरः । इत्यादीनि हरेनामानि शातव्यानि । तथा चक्रधरोऽपि ।

तत्पुत्रो मन्मथः कामः सूर्पकाराति ( कारि ) रनन्यजः ।

कायपर्यायरहितो मदनो मकरध्वजः ॥ ७७ ॥

५

पट् कामे । तत्पुत्र । कृष्णपुत्रः । दामोदरपुत्र । विष्णुपुत्र । उपेन्द्रतनयः । पुरुषोत्तमसूतुः । केशवपुत्र । हृषीकेशपुत्र । हृषीकेशतनय । शार्ङ्गिनन्दनः । नारायणोद्धृत । इरिसनु । गोविन्दत्रू । इमानि मदनन्य पर्यायनामानि ज्ञातव्यानि । मन्नाति चित्तं ॑ मन्मथः । कामयते जन ( अनेन ) कामः । २ सूर्पकाराति । मनसोऽन्यमाच जायते अनन्यज । कायपर्यायरहित । विद्वह । श्रकाय । अनङ् । अनपघन । अवपु । असहननः । अक्लेवरः । अमूर्तिः । इत्यादि ( दीन्यपि तम्य ) पर्यायनामानि । जन १० मदयतीति मदन । मरुरो वजे यत्य स मकरध्वज । प्रश्नमन । मनसिज । सङ्कल्पजन्मा । अङ्गज । पञ्चेषुः । श्रीनन्दन । हृन्छय । मधुसख ।

शिलीमुखः शरो वाणो मार्गणो रोपणः कणः ।

इपुः काण्डं क्षुरप्र च नाराचं तोमरं खगः ॥ ७८ ॥

द्वादश वाणो । शिलीव रुद्माग्र मुख यस्य १ शिलीमुखः । “शृ हिमायाम्” । श्रणन्यनेनेति १५ शर । २ “पुसि सजाया घ” धप्रत्यय । वणति “वाण । ६ “व्यञ्जनाच्च” घन् । मार्गयति अन्वेषयति मार्गणः । गेष्यन्ते देहे निखन्यन्ते रोपण । कणति ७ कण । ७ इप गतौ । इप्यते गम्यते शत्रुसमुखमिति ८ इपु । जनुमिष्यति हिनस्तीति वा इपु । ९ इपिभृष्मिदिग्यविष्मृदिपृष्य कु । कामयते रिपुवधाय १० कागडम् । उभयम् । खनति भिनति ११ श्वरप्रम् । नार नरसमूहम् अश्वतीति १२ नाराचम् । स्तोम्यते श्लायते तोमरम् । यमाकाश गच्छतीति खगः । कङ्कपत्र । चित्रपुद्भव । विशिख । कलम्ब । २० कदम्बोऽपि । सायक । प्रदह । पृष्ठक । रोप । गादर्घपक्षः । १३ खनः । भलिः । भल्ल ।

१ विग्रहे चित्तस्थाने मन शब्दपाठो योज्य । मनसैष्लोपार्थं पृष्ठोदरादिगणपाठायासो अपि तस्य कार्य । क्षीरस्वामिगमाश्रमौ तु मनन मत् चेतना । मध्नातीति मथ । पचायच् । मतस्तेतनाया मथ “मन्मथ” इत्याहतु । २ छन्दोभङ्गमयच्छूर्पकारित्यति पाठो बोध्य । शूर्पको नाम कश्चिद् दानवस्तम्य नाशकारित्वाकाम शूर्पकार । तदुक्तम्- अभिम० चिं० २।१४२ । ‘पुष्पाण्यस्येनुचापास्त्राण्यरी शम्वरमूर्पकौ’ । ३ शिली नाम गण्डपद । ‘केचुवा’ इति लोके ख्यात । ४ का० स० ४।५।९६ । ५ बणति शब्दायते पुद्भ्रूपस्मिति पूर्णो विग्रह । ६ का० स० ४।५।९९ । ७ कणति शब्दायते कण । पचायच् । ८ इपति गच्छतीति शत्रुसमुखमिति वा । ९ का० उ० स० १।१० । १० कनति दण्यते काण्ड इति रामाश्रम । ‘कनी दीतो’ । ‘क्वादिन्य कित्’ उ० १।१२ । इति डः । अनुनासिकर्येत्युपधादीर्षश । अमरकोत्पूर्कविग्रहे “कमु कान्तो” कमधातोः स एव प्रत्ययः । कणत्यनेनाहतः काण्ड इति हैमचन्द्र । “कण शब्दं” इत्यतो डः । ११ क्षुर तैद्येन प्राति गच्छतीति क्षुरप्रम् इत्यपि । क्षुराम लोह प्राति गच्छतीति वा । १२ नारमाचामतीति रामाश्रम । नरमत्तीति नराची, नराच्यास्तुल्यो नाराच इति हैमचन्द्रः । १३ “तु गतौ” सौत्रः । तौतीति तौं । विच् । व्रियतेनेनेति मरः । पुसि सज्जाया घ । तौश्चासौ मरश्चेति तोमर इत्यन्यत्र । १४ खस्त्राणः । तदुक्त कल्पदुकोशे १।५।२६९ । ‘विकर्णं पत्रवाहश्च चित्रपुद्भवः शर खरुः’ इति ।

कामुकं धन्वं चापं च धर्मं कोदण्डं धनुः ।  
शिलीमुखादेरसनम्-

षट् धनुषि । कर्मणे शत्रुवधलक्षणाय प्रभवतीति 'कामुकम् । दधन्ति मारयत्यनेन ३धन्वन् । अदन्तम् धन्वम् । चपस्य वेरणोर्बिकारश्चापम् । उभयम् । धरति ३धर्मन् । धर्मं च । "कुट अनृतमापणे" । ५ कोदयत्यनेन ४कोदण्डम् । शत्रुवधार्थं धन्यते अर्थते धार्यते वा धनुः । उभयम् । उणादौ दधन्तीति धनुः (नः) । "कृपिचमितनिधनिविधिसञ्जित्वर्जित्य ऊ" । शिलीमुखादेरसनम् । शिलीमुखासन । शरासनः । मर्गणासन । रोपणासन । कणासनः । इप्वासन । कण्डासन । क्षुरप्रासन । नाराचासनः । तोमरासन ।

तत्कोटिमठनीं विदुः ॥ ७६ ॥

१० तस्य धनुपः कोटिमप्रभागम् । कामुककाटि । धन्वकोटिः । चापकोटिः । काण्डकोटि । धनुष्कोटिः । शिलीमुखासनकोटिः । शरासन शोटिः । वाणिजासनकोटिः । रोपणासनकोटिः । मार्गणाहनकोटिः । इत्यादिकमठनीति कथ्यते । अरति गच्छति भूमिमठनिः । इप्याम् । अटनो । हो स्त्रियाम् ।

पुष्पं सुमनसः फुल्लं लतानन्तं प्रमयोद्गमौ ।  
प्रसूनं कुसुमं व्रेयम्-

१५ पद् (आट) पुष्पे । पुष्पायति विकृतिं पुष्पम् । मुद्रु मन्यन्ते आग्निः गुमनसः । छोत्वदृत्वं । "त्रिकला विशरणे" १ फल । फलति त्वम् फुलः । फुल्लं वा । "ग्रामश्चाटकमंक- त. । "आदनुन्धयज्ञ" दति नेट् । "अनुपसर्गात्कृष्णक्षेत्रशोलाशा" निष्ठातमारय लन्वन् । "चरकलोहस्म्य" तमारादावगुणे उत्त्वम् । सि । रेक । लताया अन्तं पतित लतान्तम् । प्रस् (य) ते प्रसवयम् । उदगच्छति प्रादुर्भवति उद्गमः । श्रिय प्रसूते प्रसूनम् । तन मनक च । एता उभयम् । को शोभा भते १ कुसुमम् । २० गुम च । जेय ज्ञातव्यम् ।

तदाद्यस्त्रशरः स्मरः ॥ ८० ॥

पुष्पपर्यायतो ( त. परत्रा ) स्वपर्यायेणु तथा ब्रागपर्यायेष्वपि स्मरनामानि भवन्ति । पुष्पेषु । पुष्पबाणः । पुष्पशिलीमुख । पुष्पशर । पुष्पमार्गण । पुष्परोपणः । पुष्पकाण्ड । पुष्पकण । पुष्पक्षुरप्रः । पुष्पनाराच । पुष्पतोमर । सुमनवृत्र । सुमशिलीमुख । सुमनोनाराच । लतान्तेषु ।

१ 'कर्मण उक्त्र' पा० स० ५।१।१०३ । इति प्रभवत्यर्थं उक्त्र् । टिलोप । २ 'धन धार्ये' जुहोन्यादिः । वनप्रत्ययः । धातूनामनेकार्यत्वान्मारयतीर्यथः । धात्वर्यात्मावेतु दधति वान्यमर्जयत्यनेन त्वयोः द्वीधयः । वीराणा वनधान्यार्जनमाधनवाऽप्त धनुपः । धन्वति गच्छति धन्वेति क्षीरत्वामिरामाश्रम-हमचन्द्राः । कनिन्प्रत्ययः । ३ धरती रक्षत्यापन्नसत्त्वनिर्यथ । मनिन्प्रत्ययः । अकागन्तधर्मशब्द-स्म्य धनुवर्वाचित्वे मेदिनो प्रमाणम् - 'धर्मोऽस्त्री पुण्य आचारे स्वभावोपमयोः क्रतो । अहिमोपनिपन्न्याये ना धनुर्यममोमपे ॥' मान्तव० १६ श्लो० ॥ ४ बाहुलकादण्डप्रत्ययः । रामाश्रमस्तु 'कुट अनृतमापणे' कोटती विग्रहमाह । म एव प्रत्ययः । पृष्ठोदरादित्वादृत्य द । कदि सोत्रः । कथतेऽनेनेति हेमचन्द्रः । 'कु शब्दे' कौतीति कौ । कौ, शब्दायमानो दण्डोऽस्त्रेत्यायन्त्र । ५ का० उ० स० १।३१ । ६ सुप्रीत मन आभिरिति मुकुट । ७. का०स० ४।६।४९।८ का०स० ४।५।९।१ ९. का०स० ४।६।१५।१ १० का० स० ४।१।७६।१ ११ कुत्यति कुसुमम् । 'कुस सश्लेषणे' दिवादि । 'कुसेसमोमेदेता' पा०उ० स० ४।१।०६।१ इत्युप्रत्यय । इति रामाश्रम ।

लतान्तकाण्ड । लतान्तक्षुरप्र । लतान्तनाराचः । लतान्तोमरः । प्रसवमार्गण । प्रसवोपण । प्रसवकण । प्रसवेषु । प्रसवकाण्ड । प्रसवक्षुरप्र । प्रसवनाराच । प्रसवतोमर । उद्गमशिलीमुखः । उद्गमशर । उद्गमबाण । उद्गममार्गणः । उद्गमपौपणः । उद्गमकणः । उद्गमेषु । उद्गमक्षुरप्र । उद्गमनाराच । उद्गमतोमरः । प्रसूनशिलीमुख । प्रसूनशर । प्रसूनबाण । प्रसूनरोपण । प्रसूनकण । प्रसूनकाण्ड । प्रसूनेषु । प्रसूनक्षुरप्र । प्रसूननाराच । प्रसूनतोमर । कुसुमशिलीमुख । कुसुमशर । कुसुमबाण । कुसुममार्गण । कुसुमकण । कुसुमेषु । कुसुमकाण्ड । कुसुमक्षुरप्र । कुसुमनाराच । कुसुमतोमर । पुष्पशब्दाग्रे धनुषि शब्दे प्रयुज्यमाने कन्दर्पनामानि भवन्ति । पुष्पकामुकः । पुष्पधन्वा । पुष्पचाप । पुष्पधर्मा । पुष्पकोदण्डः । पुष्पधनु (न्वा) । लतान्तकामुकः । लतान्तधनु (न्वा) । लतान्तचाप । लतान्तधर्म (मा) । लतान्तकोदण्ड । लतान्तधन्वा । प्रसवचाप । प्रसवकोदण्ड । प्रसवधनु (न्वा) । प्रसूनकामुकः । कुसुमधर्म (मा) । कुसुमकोदण्ड । कुसुमधनु (न्वा) । १० इत्यादीनि ज्ञातव्यानि ।

### स्वान्तमास्वनितं चित्तं चेतोऽन्तःकरणं मनः ।

#### हृदयं विशिखाऽकृतम्-

नव चित्ते । ‘स्यम स्वन ध्वज शब्दे’<sup>१</sup> आद्यूर्वः । स्वनति स्म, आस्वनति स्म इति स्वान्तम्, आस्वान्तम् । ‘गत्यर्था०’<sup>२</sup> निष्ठा क्त । ‘वा ३हृष्यमत्वरसधुषाऽस्वनाम’ एव त्वे विभाषयेद् १५ भवति । वेद् । ‘पञ्चमो०’<sup>३</sup> । ‘मनोरनुव्वारो० तुटि०’ । मनोऽये० ‘क्षुभिवाही०’ त्यादिना त्वे नेट् । कथि-तत्वकथयेनेऽपि परत्वात्पूर्वोक्तप्रोक्तयो परोक्तविर्बलवान् इति वचनात् । अनेन सूत्रेणायमेव विकल्पो भवति । मनोऽभिधानेऽपि परत्वादयमेव ४विघिर्मवति । चेतति चित्तम्<sup>४</sup> । चेतति जानाति अनेनात्मा चेतस् सान्तम् । अन्त, निश्रय, क्रियतेऽनेन, अन्त करणम्<sup>५</sup> । मन्यते तु धृते नेन सान्तम् मनस् । ब्रह्मधार्ये हति हृदयम् । ‘हनो० दोऽनुतश्च’ । दान्त च हृद । विगत (ता नष्ट (ष्टा) शिख (खा) यस्य तत् विशिखम्<sup>६</sup> । आ समन्तात् कूर्यते आकृयते (आकृतम्) । तथा चाष्टसाहस्र्याम्<sup>७</sup> — “ज्ञाताकृतेनाकारेणोति मानसम्” ।

#### मारस्तत्रोद्भवो मतः ॥ ८१ ॥

तत्र चित्ते उद्भवो मारो मत कथित । स्वान्तमभवः । स्वान्तज । आस्वनितज । चित्त ममव । चित्तज । चेतसमभव । चेतोजः । अन्त करणमभव । हृदयसमभवः । हृदयजः । विशिखसमभव । २५ विशिखज । आकूनसमभव । इत्यादीनि कन्दर्पनामानि ज्ञातव्यानि ।

#### मौर्वी जीवा गुणो गव्या ज्या-

पद्मगुणे । मूर्वति हिनस्यनया मूर्वा । तदाख्यस्य तृणस्य विकारो मौर्वी । धनुरनया जीवतीति

<sup>१</sup> का० स० ४।६।४३। <sup>२</sup> का० स० ४।६।१७। <sup>३</sup> का० स० ४।६।१५। ‘पञ्चमोपधाया तुटि चागुणे’ इति पूर्णे सूत्रम् । <sup>४</sup> का० स० २।६।४८। <sup>५</sup> का० स० ४।६।९३। <sup>६</sup> आस्वनितमित्यत्र मनोऽवैद्यपि परत्वात् “वा स्प्यमत्वरे” ति वेद् । आद्यूर्वकत्वाभावे तु स्वान्तमित्यत्र “क्षुभिवाही०” त्यादिनेट्-प्रतिषेध । तेन स्वान्तमित्येकमेव रूपम् । आद्यूर्वकत्वे तु आस्वनितमास्वान्तमित्यमित्याशय । <sup>७</sup> ‘ज्यनुव्वस्यमतिव्विद्विषजार्थेभ्यः क्त’ इति का० १।६।६६। सूत्रेण ज्ञानार्थत्वादवृत्तमाने क्त । <sup>८</sup> अन्त शब्दस्यात्राबिकरणशक्तिप्रधानरेफान्ताव्ययत्वेनान्तो निश्रय इति ध्युत्पत्तिर्न युक्ता । अन्तर्गत करणम्, करणानामन्तर्गत वेति ध्युत्पत्तिर्नव्या । <sup>९</sup> का० उ० स० २।२६। <sup>१०</sup> विशिखशब्दस्य हृदयार्थे न किम-प्यन्त्र प्रमाणमुपलब्धम् । अथोमुखपुण्डरीकाकारत्वाद्धृदयस्य शिखारहितत्वं कथञ्चिन्नेयम् ।

जीवा । गुणते अन्यस्यतेऽनेन गुण । पुसि । गोन्यो हिता गव्या ॥ जीयतेऽनया ज्याऽ ॥ बाणासनम् । दृणा ।

### अलिर्भूङ्गः शिलीमुखः ।

**ब्रमरः पट्पदो ज्ञेयो द्विरेफश्च मधुव्रतः ॥ ८२ ॥**

सम भृगे । अलति मण्डयति पुष्पजाती । अलिः । मधुना विभर्यात्मान भृगः । ४३-  
५ भृगाङ्गनि एतेऽङ्गप्रत्ययान्ता निपात्यन्ते । शिलीसदश शिलीसदश वा सुखमस्य शिलीमुख । भ्रमर्-  
रातीति निश्चक्ष्या भ्रमर । ‘शकन्धवादय’ ॥ शकन्धुप्रभृतीनाम अकारस्य लोपो भवति । आदिशब्दान्-  
नकारस्य लोपः । उणादौ ‘भ्रुमु चलने’ । भ्रमतीति भ्रमरः । ‘देविवृष्टिजठिभ्रमिवासिन्योऽुर’ ।  
पट्पदानि वरणा अस्य पट्पद । हौ रेकौ यस्य द्विरेफः ॥ मधु व्रतयति सुहृके मधुव्रत । मधुकर ।  
पुष्पलिहृ । इन्दिनिर । पट्चरणः । पट्चिप्र । चञ्चरीक । भसल । रोलम्ब । देश्याम् ।

१० **मौर्वादिप्रान्तमल्यादिकन्दर्पस्यैक्षवं धनुः ।**

इक्षाविंशति गंक्षवम् । अलिमौर्वा (कम) । भृग्मौर्वा (कम) । शिलीमुखमौर्वा (कम) ।  
भ्रमरमौर्वा (कम) । पट्पदमौर्वा (कम) । द्विरेफमौर्वा (कम) । मधुव्रतमौर्वा (कम) । अलिजीवा (वम) ।  
भृग्जीवा (वम) । शिलीमुखजीवा (वम) । भ्रमरजीवा (वम) । बट्पदजीवा (वम) । द्विरेफजीवा (वम) ।  
मधुव्रतजीवा (वम) । अलिगुण (णम) । भृग्गुण (णम) । शिलीमुखगुण (णम) । भ्रमरगुण (णम) ।  
१५ पट्पदगुण (णम) । द्विरेफगुण (णम) । मधुव्रतगुण (णम) । अलिज्या (ज्यम) । भृग्ज्या (ज्यम) ।  
द्विरेफज्या (ज्यम) । मधुव्रतज्या (ज्यम) । इत्यादीनि कन्दर्पशिलीमुख (धनु) नामानि जेवानि ।

### हेतिरखाऽयुधं शस्त्रम्—

तत्वार शस्त्रे । द्विनेति अनया हेतिः । छियाम् । ११ सातिरेनिज्जितिथृथ । एते  
क्षिप्रत्ययान्ता निपात्यन्ते । अस्यते त्रियतेऽनेनेति अख्यम् । आयुतेऽनेन आयुधम् । उमयम् ।  
२० शस्त्रेऽनेन शस्त्रम् । १२ ‘नीदापशसुगुयुजस्तुतुरसिसिन्मिहपतशनहा करणे’ धनु । त्रमात्र । ‘व्याघ्रनम्’  
इति सपरगमनम् । ननु अन्येऽप्रतिपदाभावात् पृनि प्रत्यये इडागम कथ भवति । आगमशास्त्रमनियमित  
वचनात् शस्त्रातोः पृनि प्रत्यये दृढ़ न भवति । ‘युग्म’ १ पत्रे इति जापकादेव (दा) ।

**पुष्पाद्यस्त्रः स्मरे मतः ॥ ८३ ॥**

पुष्पाद्यायत अख्यपर्यायं पु शरपर्यायेतु तथा चापर्यायेष्वपि स्मरनामानि भवन्ति । पुष्प-

१ गोन्यो बाणेन्यो हितेत्यर्थ । २ जिनाति जीयतेऽनया । ‘ज्या वयोहानौ’ । ‘अन्येष्वपि  
दृश्यते’ इति ड । ३ अल भूषणादौ । सर्वधातु+य दृन् । ४ का० उ० ११४८ । ५ का० स० वृ. ।  
६ कातन्त्रोणादौ नोपलव्वम् । ७. भ्रमरपदे रेकदयसत्वाद् द्विरेक । ८ कन्दर्पस्य धनुरैक्षवम् । इक्षुदण्ड-  
निर्मितम् । अत एव काम इक्षुघ्नेत्यन्यते । मौर्वादिय शब्दा अते यस्य, अलि, अलिपर्याय आदौ यस्येष्वा  
तदधनुरिति याश्रुतपाठार्थ । अन्यपत्रेण धनुर्विशेषणतया अलिमौर्वीकम् भृग्मौर्वीकम् इत्यादि  
टीकाया वनव्यम् । वस्तुतस्तु मौर्वादिप्रान्तमल्यादिरिति पाठो युक्त । तत्र पदार्थयोजनाऽपि सातु मगच्छ्रूते ।  
अत्यादि कन्दर्पस्य मौर्वादि धनुश्च ऐक्षवम् दृश्यर्थ । तदन्तम्—‘मौर्वा रोलम्बमाला वनुरय विशिद्वा  
कौसुमा पुष्पकेतो’ इति साहित्यदर्शणे । टीकैवा तु यथाश्रुतपाठानुगामिनी । ९ ‘हि गतो वृद्धौ च ।  
इय व्युत्पत्तिरग्निशिलायथं बोध्या । शस्त्राये ‘हन् हिसायाम्’ हन्यतेऽनयेति सुवच्चम् । १० का० स० ४४४७३ । ११. का० स० ४४८६१ व्यञ्जनमस्वर परवर्णे नयेत् । १२ का० स० १११२१। इति सकारस्य  
परगमनम् । १३ का० स० ८० ८०। १४। ३३।

देति । पुष्पाङ्क । पुष्पायुध । पुष्पशङ्क । सुप्नोहेति । सुप्नोऽङ्क । सुपनश्चायुध । सुपनश्च । लतान्तहेति । लतान्ताङ्क । लतान्तायुध । लतान्तशङ्क । प्रसवाङ्क । प्रसवायुध । प्रसवशङ्क । उद्गमहेति । उद्गमायुध । उद्गमशङ्क । प्रसनहेति । प्रसनास्त्रः । प्रसनायुध । प्रसवशङ्क । कुसुमहेति । कुसुमायुध । कुसुमशङ्कः । इत्यादिकानि नामानि ज्ञातव्यानि ।

### ध्वजं पताका केहुरच चिह्नं तद्वेजयन्त्यपि ॥ ५

पञ्च पताकायाम । ध्वजते (ति) ध्रुयते ध्वजः ॥ १०८ ध्वजमस्त्रियाम् ॥  
वर्तिश्च । पताकादांडे ध्वज दृत्यन्यः । पत्यते शियते वातेन पताका । वलाकादय ॥ ११—‘वलाकापिनाक-  
पताकाश्यामाकशलाका’ एते अकप्रत्ययान्ता निपात्यन्ते । पताका च । छियाम् । कीयते मैन्यमनेन केतुः ।  
‘केत्यादय — केन्त्रुद्रत्वाप्तुपीत्वेष्टुवहतुजीवात्’ एते तुनप्रत्ययान्ता निपात्यन्ते । चह परिकल्पने ।  
चहयति (अनेन) चिह्नम् । विजयतेऽनया वैजयन्ती ॥ ११० जयन्ती च । छीद्रो । वैजयन्तः । जयन्त ।

### तत्तदन्तो झापायादिः शम्भोर्विघ्नकरः स्मरः ॥ ११ ॥

भपव्वज । भपपताक । भपकेतु । भपचिह्न । भपवैजयन्ति । पड़क्षीणध्वजः । पड़क्षीण-  
पताक । पड़क्षीणकेतु । पड़क्षीणचिह्न । पड़क्षीणवज्यन्ति । सफरव्वज । सफरपताक । सफरकेतु ।  
सफरचिह्न । सफरवैजयन्ति । अनिमिप वज । अनिमिपपताक । अनिमिपकेतु । अनिमिपचिह्न ।  
त्रनिमिपवैजयन्ति । त्रनिमिप वज । त्रनिमिपताक । त्रनिमिपकेतु । त्रनिमिपचिह्न । मीन- १११  
पताकः । मीनकेतु । मीनचिह्नः । मीनवैजयन्ति । पाठीनव्वज । पाठीनपताक । पाठीनरेतु । पाठीनचिह्न ।  
पाठीनवैजयन्ति । शम्भोर्विघ्नकर । हरविघ्नकर । इत्यादिनि भरनामानि ज्ञातव्यानि ।

### कौश्येयकासिनिस्त्रिशकृपाणः करवालक ।

### तग्वारिमण्डलाग्रं खङ्गनामावलि विदुः ॥ १२ ॥

अष्टे व्यट्टे । कुक्षो मव कोक्षेयकः ॥ १२१ कौक्षेय । अन्यते क्षियतेऽभिमि । निकान्तस्त्रिशतोऽ २०  
हुलिन्यो निर्स्त्रिशः । तालव्यान्त । शबून् हनु कल्पते याचते कृपाणः ॥ १२२ कृपे काणः ॥ १२३ करे वलते  
करवालः ॥ १२४ करपाल । तरति (तग) ल्लवमान वारि यत्रेति निष्कृत्य तरवारिः । मण्डल वर्तुलमग्र  
यस्य तन्मरणडलाग्रम । खण्डित परमर्मायनेन खङ्ग । ‘खण्डिगक्’ ॥ १२५ स्त्रीज्ञा । ऋषि । चन्द्रहास ।

अक्षौहिणी वलानीकं वाहिनी साधनं चमूः ।

ध्वजिनी पृतना सेना मैन्यं दण्डो वस्थिनी ॥ १३ ॥

१३

द्वादश सेनायाम । अद्वाणा रथानामूहिनी अश्वौहिणी । ‘अवस्यौत्तमूहिण्याम् ॥ १४ अौत्तम  
अथवा धात्वर्थेन साध्यने भाष्यकर्ता श्रीमद्भरकीर्तिना । अश् व्यासो । अश्वुने व्यानोतीति अश् । ॥ १५ वृत्-

२ “वज गतौ” । पचात्रच् । २. अम० को० २।१०।१ ३ का० ३।४०। ४ का० ३।४१। ५ का० ३।४२। ५ विजयते विजयन्त, विजयशाली पुरुष । ओणादिको भक्तप्रत्यय । भस्यान्तादेश । विजयन्तस्येय पताका वैजयन्तीति । ६ ते ते वजपर्याया अन्ते यस्य भपादिमीनपर्यायादादे यस्य  
इदृशस्तथा शम्भुविनकरश्च स्मर कामः । तेऽपि स्मरपर्याया । तद्यथा भप वजेत्यादि । ७ कुलकुत्ति-  
श्रीवान्य व्राद्यस्लङ्कारेषु” पा०स० ४।२।६। इति खङ्गर्थे दक्षज् । ८ कृपा तुदति कृपाण इत्यपि ।  
९. का०उ०स० ५।१७। १० “वल वेष्टने” ज्वलादित्वाण्णः । वलन वालो वेष्टनम । करे वालो यस्य, करेण  
वलयने बोभयमप्यन्यन्त्र । ११ का० उ० ३।४० ५।५२। १२. का०स० ३।१७। १३. का०उ०स० ४।५३।

वदिहनिमनिकम्यशिकजिभ्य स.” स प्रत्ययः । “छूशोश्च” य । “यदो क रसे” अक् ष । “३कषसयोगे ज्ञ.” । अत्र इति जातः । ऊहन ऊह । ऊहो विद्यते यस्या सा ऊहिनी । अभाणामूहिनी अद्वौहिणी । “समासान्तसमीपयोरसुवादेः” अस्यार्थः समासस्य अन्ते समासस्य समीपे च नकारस्य पूर्वपदस्थात् निमित्तात् (परस्य) गो भवति वा । इदानीम् अद्वौहिणोप्राणं क्रियते । यद्वारतम्—

५

“एको रथो गजस्त्रैको नरा । पञ्च पदातयः ।  
त्रयस्त्र तुरगास्तज्ज्ञैः पत्तिरित्यभिधीयते ॥  
पत्त्यंगैङ्गिरुणैः सर्वैः क्रमादाख्या यथोत्तरम् ।  
सेनामुखं गुल्मगणौ वाहिनी पृतना चमूः ।  
अनीकिनी”

१० पत्तेस्त्रिगुणं सेनामुखम् । गजा ३, रथा ३, अश्वा ९, पदातय १५ इति सेनामुखम् । गजा ९, रथा ६, अश्वा २७, पदातय ४५ इति गुल्मम् । गजा २७, रथा २७, अश्वा ८१, पदातय १३५, इति गण । गजा ८१, रथा ८१, अश्वा २४३, पदातय ४०५ इति वाहिनी । गजा २४३, रथा २४३, अश्वा ७२६, पदातय १२१५, इति पृतना । गजा ७२६, रथा ७२६, अश्वा २१८७, पदातय ३६४५ इति चमूः । गजा २१८७, रथा २१८७, अश्वा ६५६१, पदातय १०९३५ इत्यनीकिनी । दशानी”-  
१५ किन्योऽक्षौहिणी । गजा २१८७०, रथा २१८७०, अश्वा ६५६१०, पदातय १०९३५० । बलं मवृणोति परभूषि बलम् । उभयम् । अनिति प्राणिति तृष्णस्वनै न नीवते परामय वा अनीकम् । वाहा अश्वा सन्त्यस्या वाहिनी । साध्यते (अनेन) साधनम् । परान् शत्रून् चमति ग्रस्ते चमूः । “कृषिचमितनिधनिविधिसर्जित्यज्ञिभ्य ऊः ।” चमूश्च । ज्वजाः सन्त्यस्या ज्विनी । नायक पिपर्ति पृतना । अद्वैः सिनोति बन्नाति सेना । “मिनोतेन॑” । सेनाया स्वार्थं यग्नि सैन्यम् । दाम्यति दण्ड । वरुथो रथ-  
२० गुप्तिरस्यस्या वस्थिनी । पताकिनी । चक्रम् । अनीकिनी । “गूढः । तन्त्रम् ।

कदनं समरं युद्धं संयुगं कलहं रणम् ।

संग्रामं सम्परायाजी संयदाहुर्महाहवम् ॥ ८७ ॥

एकादश युद्धे । कद्यते कदनम् । समियुति प्रतिविकला भवन्त्यत्र नरा समरम् । युध्यतेऽ  
(त्रा) रिमिर्युद्धम् । भटा सयुज्यते मिलन्त्यत्र संयुगम् । कल मुग्रा वाक्यं हस्त्यत्र कलहः । रणिति  
२५ दुन्दुभयोऽत्र रणम् । सप्रस्यन्ते सत्वान्यनेनेति संग्रामः । पुषि । सपरैति मृत्युत्र सम्परायः । भटा अज्यते  
क्षियन्तेऽत्र आजिः । स्त्रीत्रोः । सयतन्तेऽत्र तान्त संयत । महोश्चासो आहव । “महाहव । तम् आहुः

१ का० सू० ३।६।६० । २ का० सू० ३।८।४।३ ‘कषयोगे ज्ञ’ । का० रू० पू०  
२५६ सू० । ४. प्रथम् श्लोको महाभारत उपलब्धते । तस्योपलब्धिस्तु द्वितीयव्याये पञ्चदशश्लोकवेन ।  
इतरत्तत्र नोपलब्धते । तत्र “एको रथः” इति श्लोकानन्तरम् — “पत्तिन्तु त्रिगुणामेतामगु सेनामुख  
उधा । त्रीणि सेनामुखान्येको गुल्म इत्यभिधीयते । त्रयो गुल्मा गणो नाम वाहिनी तु गणाङ्गय । स्मृता-  
स्तिस्त्रस्तु वाहिन्यः पृतनेति विचक्षणैः ।” चमूस्तु पृतनस्तिस्त्रस्तिस्त्रश्चमवस्त्रवनीकिनी । अनीकिनीं दशगुणा  
प्राहु सेनामुख उधा । ॥ इति । श्लो० १६, १७,१८ । ५ अभिं० चिं० २।४।३ । ६. का० उ० सू० १।३।१।  
७ का० उ० सू० ६।३।६ । ८. गूढशब्दस्य सेनार्थेऽन्यत्र प्रमाण मृग्यम् । ९. “कद वक्त्वये” । कद्यते  
विक्लृयते नेनास्मिन्वा । करणोऽधिकरणे वा लुट् । १० सङ्ग्राम युद्धे । सङ्ग्रामयन्तेऽत्रेति । हेमचन्द्र ।  
सङ्ग्रामण सङ्ग्राम इति रामाश्रम । ११ आद्ययन्ते योद्धारोऽत्रेत्याहव ।

ब्रुवन्ति । आयोधनम् । जन्यम् । प्रवनम् । प्रविदारणम् । मृद्यम् । आस्कन्दनम् । सख्यम् । समीकम् । अनीकम् । विग्रहः । समुदाय । अभ्यागम । सस्फोटिः (ट.) । समितिः । समित् । दूष्टम् । सगर्देः । सगरः ।

गजो मतझजो हस्ती वारणोऽनेकपः करी ।

दन्ती स्तम्बेरमः कुम्भी द्विरदेभमितझमाः ॥ ८८ ॥

शुण्डालः सामजो नागो मातङ्गः पुष्करी द्विपः ।

करेणुः सिन्धुरः—

५

विशतिर्गजे । गजति मावति गजः<sup>१</sup> । अच् । मतझादैर्जाती मतझज । <sup>२</sup> सतमीपञ्चम्यन्ते जनेऽ<sup>३</sup> । हस्ती विशतेऽस्य हस्ती । “जातो तु दन्तहस्ताभ्यां कराच्चैव इनेव हि” । वारथति परान् शत्रून् वारण । न एकेन पित्त्यनेऽपः । करोऽस्त्यस्य करिन् । इदन्तोऽपि करि । दन्तो विशतेऽस्य <sup>४</sup> दन्ती । स्तम्बे नृणे रमते स्तम्बेरमः । “<sup>५</sup> स्तम्बकर्णयो रमित्यो” लच् । कुम्भो विशतेऽस्य कुम्भी । हौ रदौ यस्य द्विरद । एति गच्छति शत्रुसमुखमितीभ । “इणा” यथत् भग्रत्ययो भवति स च यथत् । मित गच्छतीति मितझमाः । “गमेरच्<sup>६</sup>” खप्रत्यय । “हस्ता रुपोमोन्त<sup>७</sup>” शुण्डा लाति गजातीति, शुण्डालास<sup>८</sup> । साम्न<sup>९</sup> सामवेदाज्जात सामज । नगे पर्वते भवो नागः । मन्यते जनेन मातङ्गः । पुष्कर विशतेऽस्य पुष्करी । दाया पित्ति द्विपः । करोति कार्यं करेणु । “दृक्षत्र्यामेणु”<sup>१०</sup> <sup>१५</sup> आयामेणुः प्रत्ययो भवति । स्यन्दते सवति मः स्मिन्धुर<sup>११</sup> । दन्तावल । पद्मी<sup>१२</sup> । पीलु । कालिङ्ग ।

तेषु यन्ता याता निषाद्यपि ॥ ८९ ॥

त्रयो हस्तिपकं । यच्छतीति यन्ता । यातीति याता । निषीदति इत्येवशीलो निषादी । गजयन्ता । गजयाता । इम्तियन्ता । इम्तियाता । इत्यादीनि जातव्यानि । अपिशब्दात्—आषोरण । इत्पि । इस्त्यारोहः<sup>१३</sup> । गजाजीव । महामात्र ।

२०

नागाद्यरिः कण्ठी<sup>१४</sup> (णिः) रवो मृगेन्द्रः केसरी हरिः ।

२१

चत्वारः सिहे । नागारि । गजरिपु । मतझावैरी । इस्तिद्विट् । वारणवैरी । अनेकपसप्तन । करिपितु । दन्तिवैरी । स्तम्बेरमपितुः । कविच्छदश्यते ईटग पाठः । कुम्भवैरी । इमवैरी । मतझशत्रुः । शुण्डालरिपु । सामजद्वेषी । नागारि । पुष्करिपिः । द्विपवैरी । करेणुरिपु । सिन्धुरवैरी । इत्यादीनि पर्यायनामानि सिहस्य ज्ञातव्यानि । कण्ठे रवो ध्वनिर्यस्य करणीरव ।

२५

<sup>१</sup> गजति मावति गर्जति वा गजः । २. का० स० ५।३।१। ३ का० स० २।६।१५। दृक्तिः । ४ का० स० ४।३।१। ५. का० उ० स० २।२। ६ का० स० ६।३। ४५। ७ का० य० ४।१।२। ८ शुण्डालस्त्यस्त्यपि । ‘प्राणित्यादातो लजन्तरस्याम्’ पा०स० ५।२।१। ९। इति मत्वर्थयो लच्चप्रत्यय । ९ सामवेदो हि गीतपरः । तत्स्वरेण समाकृष्टा इमितिनो बद्धा अभवन । बद्धाश्राकृष्ट जनपदे समानीता । गीतमूढा यतो बद्धसमानीता । अत एव सामजा इत्युन्यन्ते । इति सङ्कृति । प्रमाणान्तरमपि मृग्यम । सामवेदमुच्चारयन् विधिग्रन्थान् सर्वज । साम्ना सह जातत्वात्सामजा इति । १० का० उ० स० २।६। ११ स्यन्दधातोरकर्मकत्वात्सवति मदमित्यर्थश्चिन्तनीय । १२ अत्र कल्पदुकोष १५।१४। १३ प्रमाणम्—“करी मतझजः पद्मी सूर्यकर्णो लतारस” । इति । १४ लक्ष्मी भद्रभियाज्ञकण्ठरव इति पाठ प्रतिभाति । वर्णागमो गवेन्द्रादावित्येकरस्य इकार इकारश्च विधेय ।

“‘वर्णागमो गवेन्द्रादौ सि हे वर्णविपर्ययः ।  
बोहशादौ विकारस्तु वर्णनाशः पृष्ठोदरे ॥’”

इत्येन एकारस्य ईकार । मृगाणा चतुष्पदाना मध्ये इन्द्र. मृगेन्द्र । केसरा. स्कन्धकेशा-  
सन्त्यस्य केसरी । क्रमप्राप्ते हरति ३हरि । पञ्चानन । हर्यक्ष । नखरामुष । मृगरिपु । सिंह ।

#### ५ व्याघ्रश्चमृः शार्दूलः-

त्रयो व्याघ्रे । व्याजिग्रति प्राणान् उगादते व्याघ्र । चमति अति पश्चन् चमूर । परान्  
शृणाति हिनमिति शार्दूल । दीपी । पुण्डरीकः । तरक्षु । चित्रकाय । मृगरिः ।

**गरभोऽष्टापदोऽष्टपात् ॥ ६० ॥**

त्रयोऽष्टापदे । शृणाति हिनस्ति शरभ । “ऐक्षुग्लिगर्दिरासवलिवहिंशाभ” । अष्टां  
१० पदान्त्यस्य अष्टापदः । अष्टां पादा यस्यामां अष्टपान ।

क्रोडो वराहो दंस्ती च धृष्टिः पोत्री च शृकरः ।

श्रष्टा ( पट ) शृकरे । पत्वल सक्रमति क्रोड ॥ १ वराहान्ति वराह २ । दशा सन्त्यस्य दप्त्री ।  
वर्षतीति धृष्टिः । शृष्टिव । पूढ़ पवने । पू । भा० । पूर्ण पवने वा । कै० । उभयवदी । पूर्वोन्नेति पोत्रम्  
“३हलशूरकरया पुवः” पूर्न । त्रमात्र । नाभ्यन्तुगुण । मि० नप० । पौत्रमस्त्यस्य पोत्रो । सते प्रचुगा-  
१५ पत्वानि, श्वयति वर्षते वा गीनत्वेन सूकर ४ । शृकरश्च । दन्त्यतालव्य । कोल । किं । किरिच्च ।

**उष्टो मयः शृंखलिकः कलभः शीघ्रगामुकः ॥ ६१ ॥**

पञ्चोष्टे । उष्टये दक्षते मरी उष्टु । “‘सर्वधातुन्य पूर्न’” । मयते गच्छति मयः १ । मर्यते  
इत्येके । शृङ्खल वन्नवन्मस्य शृङ्खलिक २ । क शिरो रसते उन्नमयतीति कलभ । करभश । शीघ्र  
गच्छतीति शीघ्रगामुक । दासेक । दीर्घजद्व । ग्रीवी । रवण । धू प्राको ( धूपक ) ।

२० कौलेयकः सारमेयो मण्डलः श्वा पुरोगतिः ।

जिह्वापो ग्रामशार्दूलः कुकुरो गत्रिजागाः ॥ ०२ ॥

नव सारमेय । कुले यह मव कौलेय १० ( यक ) । सरमाया अपत्य सारमेग । मण्ड लाति  
मरण्डल । चारादीन श्वयति गच्छति इवा । श्वानोऽदन्तोऽपि । पुरो गच्छति पुरोगति । १० जिह्वा शरीर

१. ‘पृष्ठोदरादय’ इति शा० न० २०२१७२। कारिका । २ प्राणान् इरतीत्येता-  
वानेवान्यत्र । ३. यद्वा शारयतीति शार । किं । दूयते इति दूल । अन्तर्भावितिणिजयो दूदू । शार-  
वासौ दूलश्चेति विग्रह । ४. का०उ०त०००० ३११२ । ५ “कुड घनत्वे” । क्रोडन घनत्व सौऽस्यास्तीति क्रोड ।  
“अर्श आश्च” इति रामाश्रम । ६ वरमाहन्तीति वर आहारो यस्तेति वा पृष्ठोदरादित्वात् । ७ का०स००  
४६।१२। ८ सुव प्रसव करोतीति । शकोऽस्त्यस्य शूकर वररोमत्वात् । शूक राति वा । शृङ्खलिक  
करोति वा । ९ वष्टि इन्द्रिति कार्यकिवृद्धादन मरुभिं वा इति उष्टु । “सर्वधातुन्य पूर्न” इति का० उ०  
१२६। स्वे दुर्गसिंह—“वश कान्तौ” । वष्टिति उष्टुः करभः । अस्य इन्द्रनन्तस्य सम्प्रसारण निपातना-  
न्यन्वच्च । दत्याह । १० का०उ०म० १३९ । ११ मीनायहीन् मय । ‘मीज् हिसायाम’ । पचाश्च ।  
दति वा । १२ शृङ्खलमस्य बन्धन करमे” पा० स० ५०।३९ । इति कन् । तेन शृङ्खलक हात साधु ।  
“न तु शृङ्खलक काष्ठमयै स्थापादचन्धनै” । इति अभिं च० । १३ “कुलकुक्षिग्रीवान्य श्वास्यलङ्घारेपु”  
पा० स० ४०।१२।१६ । इति श्वार्थे दक्ष । १४ जिह्वा रसनया विबतीति विग्रहः सुवच्च । जिह्वा शरीर  
पत्तीत्यपि सम्भवति ।

पाति रक्षति जिहाप । ग्रामाणा शारूलो व्याप्र ग्रामशारूल । कुक् शब्द करोतीति कुक्कुर १ । कुर् शब्दे । कुकुरश्च । रात्रौ जाग्रति रात्रिजागर । लेङ्वह । उक्कण । भषण । मृगदश । शालावृक् ।

हेम चाषापदं स्वर्णं कंनकार्जुनकाञ्चनम् ।

सुवर्णं हिरण्यं भर्मं जातरूपं च हाटकम् ॥ ६३ ॥

तपनीयं कलाधौतं कार्तस्वराशिलोङ्घवम् ।

५

पञ्चदश स्वर्णे । हिनोति वर्धतेऽनेन हेमन् । नान्तम् । अदन्त हेम च । अष्टसु लोहेमुपद प्रतिष्ठास्य अष्टापदम् । “अथनः<sup>२</sup> सज्जायाम्” इति दीर्घं । शोभनो वणाऽस्य स्वर्णम् । उकारलोपः । अथवा समासे वर्णस्य वा वलोपमादुः । यथा पञ्चाणी मन्त्रः । कनति दीर्घते कनकम् । ‘कनिचनिभ्यामक<sup>३</sup>’ । कनी दीपिकान्तिगतिपु । अर्जुं सर्ज अर्जने । अर्जतीत्यर्जुनम्<sup>४</sup> । ‘अकृत्वृत्यमि’- दार्यर्जिभ्य उनः<sup>५</sup> । कात्रति शोभा बन्नाति काञ्चनम् । शोभनो वणा यस्य सुचरणम् । उभयम् । पुण्यं जिहाते हिरण्यम् । अथवा ओहास्त्वागे । हीयते हिरण्यम् । ‘होऽहिरश्च’ अस्मादन्य प्रत्ययो भवति हिरादेशश्च । भ्रयते धार्यते नान्तम् भर्मन् । अदन्त च भर्मम् । जातरूप यस्य जानरूपम्<sup>६</sup> । लीबे । नवा च ‘यशस्तिलके—“अमङ्गल्यहोऽुपि जातरूपस्त्वह ।’ हटति हाटकम् । हट दीपा । अग्निना तायते तपनीयम् । कला धावति गच्छति कलधौतम्<sup>७</sup> । कृतस्वराकरे भव कार्तस्वरम् । शिलाया दापाणाङ्घवा यस्य शिलोङ्घवम् । शातकुम्भम्<sup>८</sup> । गाङ्गेयम् । कुरुम् । चामीकरम् । महारजनम् । रक्मम् । रुमम् । जम्बुनदम् । कल्याणम् । गिरिक । चन्दवसु च ।

१०

११

१२

२५

### रूपं रजत गुलिका-

त्रयो रूपे । रूपयते जना मुहूर्तेऽनेन रूपम्<sup>९</sup> । जन रजति रजतम् । रजयते हेमा रजत वा । गुडि रक्षायाम् । गुडिति रक्षति आपद समाशाद् गुलिका । गुडिका च । कलाधौतम् । तारम् । सितम् । दुर्वर्णम् । खर्जरम् । शवतम् ।

शुक्रिज माँकिं तथा ॥ ६४ ॥

द्रौ माँकिके । शुक्र्या जलादियानोपकरणश्चविशेषाद्वातम् शुक्तिजम् । मुक्ताना समृहो माँकिकम् । समृह॑ये इकण् ।

वित्तं वस्तु वसु द्रव्यं स्वार्थं ग द्रविणं धनम्-

कस्वरं

२५

दश धने । विन्दति पुण्यकृत वित्तम् । धात्रयेन वृत्पत्तिः क्रियते॒मरकीर्तिना । ‘विद्लु लाभे । विद् । वित्ते॒ स्म सुन्धयते॒ (स्म) वित्तम् । निष्ठाकः । ‘भित्तर्णवित्ता<sup>१०</sup> शकलाधर्मण्मोगेतु’ वित्तमिति

१. कुक् इति शब्द कुरति उच्चारयतीति विग्रह । इगुपधत्वात्कप्रत्यय । यदा कोक्ने उच्चादिकमादत्ते कुक् । ‘कुक् आदाने’ । ग्रिप् । कुरति शज्जायते कुर । कुक् चामौ कुरश्रेति विग्रहः । २ पा० स० ६।३।१२५ । ३ का० उ० स० ३।४६ । ५ अर्जयते पुण्यैर्जुनम् । ५ का० उ० स० २।६० । ६ का० उ० स० ३।३ । ७ अकृतकरूपमित्यर्थ । अथवा प्रशस्त जात जातस्तपम् । प्रशस्ताया रूपप्रत्यय । ८ मुदत्तमुनवर्णने आ० । ९ हाटकाकरप्रभवत्वाद् वा हाटकम् । १० कला सुवर्णकलिका धौता गता धावति गच्छति वा यस्मादिति कलधौतम् । ११. रूप रूपक्रियायाम् । प्यन्त । अच्च यत् । १२ का० स० ४।६।१।१४।

निपातः । निपातस्येऽन् भवति । “दाहस्यै च” तो नो न भवति । वसति सुखमनेन वस्तु । ‘कमि-  
मनिजनिविशिष्यश्च’ एव्यस्तुन् प्रत्ययो भवति । वसति सुखमनेन वस्तु । “पयैसिवसिइनिमनि-  
त्रपीन्दिकन्दिविभवश्यश्च” एव्य एकादशम् उ प्रत्ययो भवति । द्रूयते गम्यते द्रव्यम् । पर स्यति  
अन्तं नयति अथवा पुण्य स्वनिति स्वः<sup>५</sup> स्वम् । उभयम् । पुण्यकृतमिर्यति अर्थम् । गुणान् राति इः ।  
“राते<sup>६</sup> डैँ ।” छीत्रा । द्रूयते गम्यते द्रव्यिणम् । दधाति धारयति सारत्व धनम् । कश गतौ । कशतोत्त्वेव  
शील कस्त्वरम् । “कसिपिसिथासीशस्थाप्रमदा च” वक्रप्रत्ययः । युम्न । सारम् । स्वापतेयम् । शू-  
कथम् । रिक्यम् । हिरण्यम् । विभवः ।

तत्पति प्राहुः कुवेरं चेकपिङ्गलम् ॥ ६५ ॥

वैश्रवणं राजराजमुत्तराशापतिं तथा ।

१० अल्कानिलयं श्रीदं घनपर्यायदायकम् ॥ ६६ ॥

सत कुवेरे । तस्य पतिः तत्पति त कुवेरं प्राहुद्रुवन्ति । वित्तपति । वसुपति । वस्तुपति ।  
द्रव्यपति । स्वपति । ग्रथपति । रा(रे)पति । द्रविणपति । धनपति । कस्वरपति । इत्यादिपर्यायनामानि  
कुवेरस्य जातव्यानि । कुत्सितो वेरो देह कुबजत्वाद्यस्य स कुवेर । पिङ्गलेकनेत्रवादेकपिङ्गलः । विश्र-  
वसोऽप्यमणि शिवादित्वात् । राणांशो वैश्वरणः । राजा यद्वाराणा राजा राजराज । उत्तरगशाया पति  
उत्तराशापतिः । अलका निलयो यह यस्य अलकानिलय । श्रिय दयते श्रीद । धनपर्यायदायक ।  
धनदायक । धनद । वित्तदायकः । कित्तद । वसुदायक । वसुदः । द्रव्यदायक । द्रव्यद । स्वदायक ।  
स्वदः । ग्रदायक । ग्रदः । द्रविणदायक । द्रविणदः । कस्वरदायक । कस्वरटः ।

राष्ट्र जनपदो निर्गो जनान्तो विषयः स्मृतः ॥

पञ्च जनपदे । राजते राष्ट्रम् । तथा च सोमनीतौ—“पशुधान्यहिरण्यसपदा राजते  
 २० शोभते इति राष्ट्रम्” । जनी प्रादुर्भवे । जन् । जायते कश्चित्तमन्ये प्रयुक्तजते । “धातोश्च हेतौ” इन् प्रत्ययः ।  
 अस्योप० दोषं । जानिरिति जातम् । “जनिब्योश्च” हस्तः । जनि जातम् । जनयन्ति प्रजा धनमिति  
 जना । “अच् पचादिष्य” अच् प्रत्यय । “कारितस्याना०”<sup>१५</sup> कारितलोप । पद गतो । पट् । जनैर्वर्णाश्रम-  
 लक्षणै॒ पद्यत गम्यते प्राप्यते आश्रीयत इति जनपद । “अच् पचादे”<sup>१६</sup> अच् प्रत्यय । जनपद इति जात ।  
 २५ तथा च सोमनीतौ—“जनस्य वर्णाश्रमलक्षणस्य द्रुत्योत्पत्तेचो स्थानांमन्ति जनपदः”<sup>१७</sup> निर्गम्यते  
 यस्मिन्निति निर्ग । “निर्गो”<sup>१८</sup> देशोऽधिकरणो इति डप्रत्यय । देशादन्यत्र निर्गम्यते यस्मिन्निति निर्गमनो  
 गिरि । जनानामन्तो निकटे जतान्त । पित्र बन्धने । “धात्वादे”<sup>१९</sup> प सः” सिंविषु० । विपिष्ठन्ति  
 अस्मिन्निति विषय । “पुसि सजाया॑” श्रः ‘नाम्य०”<sup>२०</sup> गुणः । “ए॑ अ॒” अय् तथा । च सोमनीतौ—  
 “विविधवस्तुप्रदानेन स्वामिनः सद्यनि गजान नवाजिनश्च सिनोति बधनातीति विषयः”<sup>२१</sup>

पूः पुरी नगरं चैव पद्मनं पुटमेदनम् ॥ ६७ ॥

४ का० सू० ४८६।१०। २ का० उ० सू० १।२७। ३. का० उ० सू० १।६। ४ 'पोडन्त-  
कर्मणि'। वप्रत्यय। 'स्वन शब्दे' डग्रत्ययो वा। ५ का० उ० सू० २।२७। ६ का० सू० ४।४।५।  
७ जन० सम० १।८ का० सू० ३।२।१०। ८ का० सू० ३।४।६।७। १० का० सू० ४।२।५।८। ११ का०  
सू० ३।६।४।१। १२ घञ्येऽविधानम्, पुरिसंजाया घः इति कर्मणि कप्रत्ययो वप्रत्ययो वा वक्तव्य।  
न तु पचाद्यन्, तथ्य कर्तरं विधानात्। १३ जन० सम० ५। १४ हेणश० ५।१।१।३।३। १५. का० सू० ३।८।८।  
१६ का० सू० ४।५।६।६। १७ का० सू० ४।५।१।१। १८ का० सू० १।३।१।२। १९ जन० सम० ३।

षट् (पञ्च) नगरे । पूँ पालनपूरणयोः । पूँ क्रै० । पृष्ठातीयेवशीला पूँः । ‘किञ्चित्पुरुष्विभासाम्’ किपु । “उरोष्योपवस्थं च” उर् । पुर् जातम् । “नामिनोर्वैर०” पूर् । वेलोप४ । सि । ‘व्यञ्जनाच्च’” सिलोप । “रेषोर्विवर्जनीयः” रस्य विसर्गः । पूँ । अदन्तः । पुर पुरी च । इदन्तोऽपि पुरि । नगाः सन्त्यत्र, ग्राम्यत्वं नन्यत्यत्र वा नगरम्० । क्लीबे । नगरी च । नानादिरंदशागताना विजिजा भाण्डानि पतन्त्यत्र पत्तनम् । पट्टन च । अत्र स्मृतिमेद—

“पट्टन शकटैर्गम्यं घोटकैर्नौभिरेव वा ।  
नौभिरेव तु यद्गम्य पत्तन तत्प्रचक्षते ॥”

पुटा वासा मिवन्तेऽत्र पुटमेदनम् । क्लीबे । अधिष्ठानम् । निगमः । दङ्कु । स्थानीयम् ।

### वक्त्रं लपनमास्यं च वदनं मुखमाननम् ।

पणमग्ने । वच परिभागणे । उच्यतेऽनेन वक्त्रम् । ‘सर्वधातुभ्यः० धून्’ । रप् लप् जलप् व्यक्ताया १० वाच्च । लायतेऽनेन लपनम् । युट् । अःयतेऽमिन्नास्यम्० । १० कृत्यल्युटो बठुल्’मिति ष्यच् । वद व्यक्ताया वाच्च । उद्यन्तेऽनेन वदनम् । महति मुख्यति भौतेण वा मुखम्० । खन्यते वा मुखम् । उणादा । मुख २ ख तक्तियाम् । चौरादिक्वादिन् । मुख्यति अन्नादिवादनेनेति मुखम् । मुखेः० ११ को मुखिष्च’ । मुखे क प्रत्ययो भवति धातोर्मुखिष्च । इकार उच्चारणार्थः । आ अनिति श्वसित्यनेन आननन् । तुण्डम् ।

श्रवणं श्रोत्रं श्रवश्चापि कर्णं चैव श्रुतिं विदुः ॥ ६८ ॥

पञ्च कर्णे । श्रूयतेऽनेन श्रवणम् । श्रूयतेऽनेन श्रोत्रम् । क्लीप । श्रणोत्यनेन सान्तम् श्रवः । क्लीबे । करोति शब्दावधानं कर्णः० १३ । कर्णयन्ति वा कर्णे । लिङ्गं कर्णमेदे । श्रूयतेऽनेन श्रुतिः । नियाम । विदुः कथयन्ति ।

### दग्धाक्षिं चक्षुर्नयनं दृष्टिनेत्रं विलोचनम् ।

सप्त नेत्रे । दृश्यतेऽनेन दृक् । तालव्यान्तः । अश्रू व्यान्तौ । अशनते व्यानोन्यनेनामा घटादीन-२० र्थानिति अश्विति । ११ अशिकुपिण्या सिक् । चष्ट हृदयाकूत सान्तम् चक्षु । १२ ऋषपविचक्षिजीव-तनिधनिष्य उम्० । नीयते चिन्त विपर्ययु अनेन नयनम् । दृश्यते प्रकटायांन्या दृष्टिः० । नीयतेऽनेन दृश्य नेत्रम् । उभयम् । विशेषेण लोक्यते अवलोक्यतेऽनेन विलोचनम् । अक्षम् । तागका । ज्योति ।

कटाक्षं केकरापाङ्गं विभ्रमस्तस्य वैकृतम् ॥ ६९ ॥

तस्य नंवस्य वक्त्रे पट् (पञ्च) । कटयतीति १२ कटाक्षम् । उभयम् । के (शिरमि) २५

१ का० सू० ४।८।५७। २ का० सू० ३।५।४३। ऋूकरास्योत्वम् । ३ का० सू० ३।८।१। इनि दीर्घ । ४ का० सू० ४।१।३। ५ का० ग० २।१।४। ६ का० सू० २।१।६। ७ ‘नगामु-पाण्डुम्यश्वेति’ पा० सू० ५।२।१०। वार्तिकेन मत्वर्थ्ययोः रः । अथवा नश् धातोर्णाणादिकोऽप्रत्ययः शस्य गत्वे च । ८ का० उ० ग० ८।३। ९ आस्यन्दतेऽप्लादिना प्रस्तव्यत्रेति । १० ‘कृत्यल्युटोऽ-यश्वापि’ इति का० सूतम् । ४।५।१२। टीकोक्त्यथाश्रुतस्त्रन्तु पाणिनीयम् ३।३।१९। ११ खन्यतेऽ-वदायते फलादिकमनेनेत्यपि । ‘दिन्यनेमुट् चोदातः’ उ० अचूलं च डित् मुडागमश्वेत्यन्यत्र । ‘मुटि-तानि खानोन्द्रियाण्यनेत्येकं’ इति ज्ञार० स्वा० । १२ का० उ० सू० ६।६५। १३ टीकोक्त्विग्रहं करोतेरणादिको णग्न्यन्ययः । कीर्त्यते शब्दग्रहणाय त्रिष्प्यते, कीर्त्यते शब्दोऽस्मिन्निति वा, किरति शरीरे सुखमिति वा । १४ का० उ० सू० ६।५७। १५ का० उ० सू० २।४६। १६ कटेऽप्तिशयितेऽक्षिणी यत्र, कट गण्डमज्जति व्यानाति वेति रामाश्रम । कटे आक्षिपतीति ज्ञारत्वा० ।

किरति विक्षेप हितपतीति (कर्षतीति) के कर । न पाति कामिनम् पाङ्ग । उभयम् । विभ्रमण विभ्रम । विकृतस्य भावो वैकृतम् ।

दन्तवासोऽधरोऽप्योष्टे वर्णितो दशनच्छदः ।

५ चत्वारश्चतुर्ये ओष्ठे । दन्ताना वासो दन्तवासः । अवति शोभामधरः । 'अषो' भवोऽधरी  
वा । ओषान्या सहितवाघरै वा । अद्वोऽयोष्मावे वर्तते' । उपति दहति सपत्नीदृद्यमोष्टः । उष्यते  
तीक्ष्णाहारेण्योग्यो वा । वर्णित कथित । दशनस्य छदो 'दशनतच्छद ।

शिरोधरो गलो ग्रीवा कण्ठश्च धमनी धमः ॥ १०० ॥

पद्मं गते । शिरो धरति शिरोधर । शिरोधरा च । गलति मौजन गल । एणाति गिरति वा  
ओवा । उणादो गृश्मेद् युणातीति ग्रीवा । ‘र्शर्वजिह्वाग्रीवा’” एते क्षप्रत्ययान्ता निपात्यन्ते । कणति  
१० करठः । ‘करेषु’” अस्माद्प्रत्ययो भवति । धम् । सौत्रो धातु । धम्येऽनया धमनिः । इदन्त ।  
ख्यामी । धमनी । धमति धमः । मन्या । कन्वरा ।

**दोर्देषा च भुजो वाहः-**

चन्वारो चाहौं । दम्यते विनीयते परोऽनेन दोः । सान्तम । “दमेडास्” । दूपयति दुष्ट या इति  
दोषा । आदन्त । अध्ययः । न व्यवते । मुड्यतेऽनेन भुज । निपातनात् चजोः कगत्व न भवति । नामिन  
इति गुणश्च न भवति । भुजन्युज्जीवा पाणिरोगयोः इत्यन्मिश्रयेन निपातनात् । सुजा च । वहल्यनेनेति  
बाहुः । “बहिस्वदि” (रहि) तलि पश्चिम्य उण् । प्रकोष्ठ ।

पाणिर्हस्तः करस्तथा ।

त्रयो हस्ते । पणायते व्यवहरत्यनेन पाणिः । ५० ग्रजितन्यतिरशपणिः ॥५१॥  
भवति । हस्ते हस्तः । ५१ हसेत् कीर्तयते जनेन करः । शयः । शम ५२ इत्यन्यः । पञ्चाखः ।

२५

प्राह्वर्द्धशिरोऽमश्च-

बाटशिरसो अस दृति सज्जा प्राहुः कथयन्ति । अस्यते भागेणामः ॥ १ ॥ स्कन्धश्च ।

हस्तशाखा कराङ्गलिः ॥ १०१ ॥

द्वै अद्गुल्याम् । हस्तस्य शाखा इव हस्तशाखा । आकुञ्जनादिकर्मणि अद्वृति गच्छ्र्यति  
अद्गुलम् । छीकलीबे । अद्वृती । करस्याङ्गलि<sup>13</sup> कराङ्गतिः । एवमद्गुरम् । अद्गुरी ।

२५

नासा ग्राणम्-

१ अपाङ्गतीत्यपाद् । “अगि गतौ” । ग्रन् । २ “अवो भव” इत्यार्थ्य “वर्तने” इत्यन्तं त्रीर्मामिभाष्यमत्रोदत्तम् । तद्राण्ये “ओष्ठाधरो तु” इत्यमरोत्तमूलपदस्य व्याख्यालप्यम् “ओष्ठाया सहितवधरे” इति वाक्यमन्धानुसरणेनात्रोदृतमपस्तुतमिति विवेक । ३ दन्ताशङ्खान्तेऽनेनेति तदशय । पुसि सज्जाया घः । ४ का० उ० सू० २।२।५ का० उ० सू० १।४।२।६ का० उ० सू० २।३।१।७ का० सू० ४।६।६।४।८ का० उ० सू० १।३ । ९ का० उ० सू० ८।६।१० का० उ० म० ८।२।७ “मृगवाहस्यपिदमिल्लूप्यस्तः” इति पूण्य सूत्रम् । ११ अत्र प्रमाणम्—“पाणि-शयः शमो हस्त” इत्यमरमाला । “पञ्चशास्त्रः शय शमः” इति अभिं चिं । १२ अस्यते समाहन्यते इत्यर्थः । “अस समघाते” । अस धातुशुरुदिः । यदा “अम गतौ” अमति अस्यते वा अस । औणादिक सनप्रत्यय । १३ अद्गुल इत्यत्र “अङ्गे रुल” का० उ० सू० ६।४।८।४ इत्यङ्गधातोरुलप्रत्यय । अङ्गुलिशब्दं तु “अङ्गयत्त्वामुलीयि” का० उ० ३।३।० इत्युलिप्रत्ययः । त्रियामी । अङ्गली इत्यपि ।

द्वौ नासिकायाम् । नासते शब्दायते नास्यतेऽनया वा नासा<sup>१</sup> । नेस्ना<sup>२</sup> च<sup>३</sup> जिघ्रत्यनेन घाणम् । हीने । सिद्धनी । नासिका । घोणा ।

### उगे वक्षः

द्वौ मुजमव्ये । अर्थते गम्यते उर<sup>४</sup> । ४ “अर्तेंसुश्र” अस्मादसुनप्रत्ययो भवति अस्य उरादेशो भवति । शु गतौ । अस्य धातों प्रयोग । वक्ति वार्णी वक्षः । ५ “वचेः” सोऽन्तश्र अस्मादसन प्रत्ययो भवति सोऽन्तः । अकार उच्चारणार्थः । ६ “चर्वगस्य किः” । “निमित्तादि” त्वादिन पत्व च ।

### कुक्षिः स्याज्ञठरोदरम् ।

त्रयो बठरे । कुपति (कुष्णाति) निर्जर्गत्याहार कुक्षिः<sup>८</sup> । पुमि । कुच्छम् । हीने । जपति जठरम् । अथवा जठ सौत्रोऽय धातु । उणादौ निपातोऽस्ति । उनति क्लेदयत्याहारमुदरम् । एते उभयम् । पिचण्डम् । तुन्दम् ।

१०

स्तनः पयोधरकुचौ वक्षोज इति वर्णितः ॥ १०२ ।

चत्वार कृक्षायाम् । स्तन्यते वालैः ७ स्तनः । पयो धरतीति पयोधर<sup>१०</sup> । कोचते छी मृद्युमानेऽत्र कुच्यते मर्दनेन आकुलीकियते वा कुचः । कूचश्र । वक्षमि जातो वक्षोज । उरसिजः । वक्षोऽह ।

१५

### कटिनितम्बं श्रोणी च जघनं-

चत्वार कट्याम् । कटयते वस्त्रैराच्छायते कटि । कटी । कट । कटम् । नितरामतिशयेन तम्यने काड्यते<sup>११</sup> नितम्बः । श्राशीयते कामिभिः श्रोण । नदादिवादीः श्रोणी । उदन्तोऽपि श्राणिः<sup>१२</sup> । छियामी । श्रोणी । इन्ति चिन्मिति जघनम् । १३ “हनेर्जघथ” । चकारात् काङ्गीपदम् । कलत्रम् । कडत्रम् । जघनम् । ककुञ्जाती । आरोहः । कटीरम् । त्रिकस्थानकम् । स्थानपदाभावोऽपि त्रिकम् । फलक च ।

### जानु जहु च ।

२०

द्वौ जानो । गन्तु जायते जानुः<sup>४</sup> । १४ “कृवापाजिमिस्वदिसायशूद्दसनिजनिचरिचटिन्य उण्” । जहाति<sup>५</sup> जहुः । श्रीवान् । जहा<sup>६</sup> ।

चलनं चरणं पाढं क्रमोऽहिश्च पद विदुः ॥ १०३ ॥

१ “णाम् शब्दे” । नाम् धातु । अच्च धनु वा । २ नेदमतोऽन्त्यत्र समुपलब्धम् । ३ अर्थते गम्यते वलेनेति शोष । अथवा उरम् वलार्य कण्डवादि । उरस्यति वलमाधते उर । विष् । ४ का० उ० स० ४१६७। ५ का०उ०स० ८६२। ६ का०स०० ३१६५५। “चर्वगस्य किरसवर्णे” । इति पूर्ण यत्रम् । ७ का० स०० ३। १८। ८ “निमित्तात्प्रययविकारागमस्य स पत्वम्” इति पूर्णं सूत्रम् । ९ “कुप निष्कर्षे” “श्विशकुपिंया सिक” का०उ०स०६४७। १० “स्तन गदी शब्दे” स्तनति कथयति यौवनोदयम् । भृत्यते वर्णते कामुकैर्वै स्तन इत्यन्यत्र । ११ धरतीति धर । पचायन् । पयसो धरः पयोधर । इति ग्रोध्यम् । टीकोक्तविग्रहं तु कर्मण्यसिं पयोधार इति स्यात् । १२ तम्ब गतैः नितम्बति गच्छतीति, निमृत तयते कामुकैः निमृत ताम्यति सुरतसमर्दाद्वा नितम्ब इति रामाश्रम । १३ श्रूयते किङ्किरिणध्वनिरत्र “शु श्रवणे” श्रोणादिको णि । १४ हेमचन्द्र । “श्रोण मङ्ग्याते” श्रोणति विविधशरीरावयवै सङ्ग्रातो भवतीति श्रोणिः । “सर्वधातुम्य इन्” इति रामाश्रम । १५ का०उ०स०११। १६ नात्र कोपान्तरप्रमाणमुपलब्धम् । १७. यद्यपि जानोरघ आगुल्कान्त जहा, जहाजघनयोः सञ्चिर्जनुरिति भेद । तथापि जहासामीप्याद् भेदाविवद्या जानु-पर्ययो जडेत्युक्तम् । तत्र भेदस्तु न वित्तर्त्यः ।

षट् चरणे । चाल्यते चलनम्<sup>१</sup> । चरत्यनेन चरणम् । पद्यतेऽनेन पादः । घञ् । दान्तोऽपि गद् । क्मु पदविक्षेपे । क्राम्यत्यनेनेति क्रमः । ‘अहि गतौ<sup>२</sup> । इदनुब्रह्मत्वात्मागमः अहन्यनेनेत्यहिंः । ‘<sup>३</sup>अंहेरिः’ अहंधातोरिप्रत्ययो भवति । अद्विश्व । पद्यते पदम् । क्लीवे ।

### शिरो मूर्धोत्तमाङ्गं कम्-

५ चत्वारो मस्तके । शु हिसायाम् । शीर्षंते हिस्यते शिर । “<sup>४</sup>उपिरजिशृङ्ख्यो यज्वन् ए+योऽस्त् प्रत्ययो भवति स च यज्वन् । तेनागुण । अनुषङ्गलोप । मूर्छा मोहसमन्द्वयाया ।” मूर्छन्त्य-त्राहता, प्राणिनो मूर्धा । <sup>५</sup>पृष्ठादय—“पूषन् अर्थमन्मप्जननुक्त्वात्मातरिश्वन्मक्त्वेदन्स्नेहन्-मूर्धन्युषन्” एते कन्यन्ता निपात्यन्ते । उत्तम च तद् अङ्गम् उत्तमाङ्गम् । कै गै शब्दे । कायतीति कम् । शीर्षम् । मस्तक । ‘कन्याङ्गं च नानार्थे ।

### प्रारम्भं प्रेरितेरितम् ।

त्रयः प्रेरणे । प्रारम्भते प्रारम्भम् । “<sup>६</sup>शक्तिशिप्वर्वग्न्ताच्च” यः प्रारम्भ । ईर गतो कम्पने च । प्रेरयंते प्रेरितम् । ईरितम् । “नपु सके भावे च ।”

साम्प्रत सरस्वतीनामानि प्रारम्भन्ते आचार्यश्रीमद्भरकीर्तिना-

वाग्वचो वचनं वाणी भारती गीः मरस्वती ॥ १०४ ॥

१५ सप्त वाण्याम् । उच्यते वाक् । “वचिप्रच्छिद्रशुप्रज्ञा विवृदीर्षश्च” ए+य. शिप्प्रत्ययो भवति दीर्घश्वरम्यैपाम् । वन्नि वच<sup>८</sup> । “<sup>९</sup>सर्वधातु-योऽस्त्” । उच्यते वचनम् । वाण्यने वाणि<sup>१०</sup> । लियामीः । वाणी । विभर्ति जगद् धारयति, भरतो व्राणा तस्येय भारती । तथा च—“आत्मनि मोक्षे व्याने वृत्तो ताते च भरतराजस्य ।

ब्रह्मेति गीः प्रगीता न चापरो विद्यते ब्रह्मा ॥”

२० गीर्यते उच्चार्यं रान्त गीः । सर प्रसरणमस्त्वा सरस्वतीः । व्राणी । तयाहि—“गीर्गीः कामदुघा सम्यक् प्रयुक्ता स्मर्यते बुधैः । दुष्प्रयुक्ता पुनर्गी वं प्रयोक्तुः संबं शसनि ॥

सिहद्विपघने गर्जः—

सिहे कण्ठीरवे, द्विपे गजे, घने में च गर्ज<sup>११</sup> शब्द कथ्यते । गर्जन गज ।

### हेषाऽश्वे

अश्वाना शब्दे हेषा । हेपणम् । हेपा हेपा च ।

वृंहितं गजे ।

गजशब्दे वृंहितम् । वर्हणम् ।

स्फीत्कृतं धेनुकलभे—

१ चलत्यनेनेति चलनमिति सुवचः । २ अत्राभिधानचिन्तामणि, प्रमाणम्—‘चरण नमणः पाद, पदोऽहित्वलन क्रमः’ । इति । ३।२८०। ३ का० उ० सू० ४।५। ४ का०उ० सू० २।५। ५ अत्र प्रमाणान्तरामाद् । वराङ्गु कमनीयाङ्गुमिति वा स्यात् । ६ का०सू० ६।२।१। ७ का०उ० सू० २।२।३। ८. उच्यते वच इति कर्मणि विग्रहो युक्त । ९ का० उ० सू० ४।५। १० “वण शब्दे” चुरादि । ११. सिहगजमेषध्वनौ गर्जशब्द प्रयुक्त्यते । एव वद्यमाणतद्व्यवहार्णा सर्वत्र योज्यम् ।

धेनुकलम् शिशुवत्से स्फीत्कृत<sup>१</sup> स्फीत्शब्द कथ्यते ।

स्तमितं जलदे तथा ॥ १०५ ॥

जलदे मेरे मेवाना शब्दे स्तनित कथ्यते । स्तन्यते स्तनितम् ।

स्यन्दने चीत्कृतं मन्त्रे भट्टे च हुङ्कृतं तथा ।

स्यन्दने रथशब्दे चीत्कृतं कथ्यते । मन्त्रे भट्टे च हुङ्कृतः कथ्यते । हु मन्त्रे, हु परिप्रयने ५  
हु सत्य सुदु ते भयादो रादसोऽयम् । कुत्सने हु निर्लंजा । अनिच्छायाम हु हु मुख ।

मीत्कृत मणितं कामे-

कामे कन्दर्पभोग-तावशब्दे स्फीत्कृत मणितम् । सीतिक्यते सीत्कृतम् । मण्यते मणितम् ।

स्वनकृतं शृङ्खलापुधे ॥ १०६ ॥

शृङ्खलाऽपुधे खत्रकृतम् । सुगमम् ।

१०

मीत्कृतं तुलाकोटिन् पुर-

त्रयं खीणा चरणामरणे । मञ्जि मै त्र । मञ्याकर्पति चित् मञ्जीरम् । ग्रथवा मञ्जु मञ्जु-  
मीरयति मञ्जीरम् । तुरकुनेजङ्घाया कोटिरव तुलाकोटिः<sup>२</sup> । झोगति नौतीति नूपुरम्<sup>३</sup> । शर्द्दिना ।  
रादकृकः । हसकम् । पदादृदन् । कलापी नानाय ।

तत्र मंसृतम् ।

१५

तत्र तम्भिन् मञ्जीरके तच्छब्दे ससृत कथ्यत ।

आङ्कृतं चाथ मरुति-

मरुति वाया तच्छब्दे आङ्कृतं कथ्यते ।

क्रेङ्कृतं क्रौश्चहंसयोः ॥ १०७ ॥

क्रौश्चव तस्थ्र क्रौश्चहसो तयो क्रौश्चहंसयो क्रेङ्कृतशब्दो मतः कथित । तथा<sup>४</sup> चामरमिह— २०  
'निपादर्पभगान्वारषड्जमध्यमवैवता ।

पञ्चमरुचेत्यमां सप्त तन्त्रीकण्ठोत्थिताः स्वराः ॥

तया च भरतनाटके—

<sup>५</sup> “पड्ज मयुग ब्रुवते गावस्त्रृपभभाविण ।

आजाविक तु गान्धार क्रौञ्चः क्रणति मध्यमम् ॥

२५

पुष्पसाधारणे काले विकः कृति पञ्चमम् ।

धैवत हेषते बाजी नियाद वृ हते गजः ॥

नासाकण्ठसुरस्तालुजिङ्घादन्ताश्च सप्तशन् ।

पञ्चम्य सजायते यस्मान्स्मात्पद्गत इति सृत ॥”

१ नवप्रसृता गो धेनु त्रिशब्दो हस्तिशावक कलमस्तयो शट्, स्फीत्कृतमुच्यते इति  
शब्दार्थः । टीकास्वारम्यनु गोवत्सशब्द स्फीत्कृतमित्येव प्रतिभावति । अत्र कोशान्तरप्रमाणाभावात्त्रवि-  
प्रयोगादर्शनाच्च मूलशब्दार्थाऽनुसरणमेव शरणम् । २ तुला तुलया वा कोट्यति । कुट प्रतापने चुरादि ।  
अच ह । यदा तुलाकार कोटिरघ्रमस्येति रामाश्रमः । ३ तुवन नूयते वा न् । एतत्वने । किन् ।  
तुवि पुरति नूपुरम् । पुर अग्रगमने । इगुपवेति क । ४ शब्दमेदप्रसङ्गाद् ग्रन्थान्तरोक्तमन्यशब्दसंभद्र  
स्वरमेद च ह । ५ अम० को० १।७।१ । ६ ‘पड्ज’ इत्यार्थ्य “इति सृत” “इत्यन्तं तथा च  
भरतनाटके” इत्येव टीकायामुपन्यस्तः पाठः “निपादर्पभगान्वार”—इति द्विग्रस्वामिमाध्येऽमरेऽविकल  
उपलभ्यते ।

**प्रतीतं संस्तुतं लब्धं दृष्टं परिचितं स्मृतम् ।**

पट् स्मृते । प्रतीयते प्रतीतम् । षुड् स्तुतौ । षुड् । “धात्वादेषः सः सः ।” स्तु सम्पूर्वं । सम्यक्-  
प्रकारेण स्तूयते स्म स्तुतम् । लभ्यते स्म लब्धम् । परिचिते स्म परिचितम् । स्मर्यते स्म स्मृतम् ।

**संस्थितं दशमीस्थं च परासुं च मृतं विदुः ॥ १०८ ॥**

५ चत्वारो मृते । सतिष्ठते स्म संस्थितः । सम्पूर्वकस्तिष्ठति । दशमीं तिष्ठतीति दश-  
मोस्थ । तथा च—

“प्रथमे जायते चिन्ता द्वितीये द्रष्टुमिच्छति ।  
तृतीये दीर्घनि श्वासश्वास्तुर्थं भजते उवरम् ॥  
पञ्चमे दद्यते गात्रं षष्ठे भुक्तं न रोचते ।  
सप्तमे स्यान्महामूर्छा उन्मत्तत्वमथाष्टमे ॥  
नवमे प्राणसन्देहो दशमे मुच्यते उसुभिः ।  
एतैवर्गं, समाक्रान्तो जीवस्तत्त्वं न पश्यति ॥”

दशाना पूरणी दशमी तत्र तिष्ठतीति वा दशमीस्थः । परागता असबोऽस्य परासु । ग्रिथते रम  
मृतं विदु कथयन्ति ।

१५ **खेदो द्वेषोऽप्यमर्षस्च रुट्कोपक्रोधमन्यव ।**

१५ सप्त क्रोधे । खिद परिवाते । तुदादौ खिन्दति । दैन्ये स्थादिपाठात् खिन्ते ( तत खेदन )  
खेदः । भावे घन् प्रतय । द्विप् आप्रीतौ आदादौ । द्वेषण द्वेषेष । मूप तितिक्षायाम । चुरादौ । शक  
मूप क्षमायाम् । दिवादौ विभागित । मृतु सहने वार्षा परस्मैपदी । अमर्पणम् अमर्पः । कुप कुप रुप रोपे ।  
गोपण रुट् । सप्तदादित्वाद्युवे क्विप् । कोपन कोप । कोधन क्रोध । मन जाने । मन्यते<sup>२</sup> मन्युः ।  
“<sup>३</sup> जनिमनिडिस्मयो यु ” । एयो युग्रययो भवति । उगादित्वाद्योरनादेशो न भवति ।

२० **हर्षः प्रमोदः प्रमदो मुक्तोपानन्दसुत्सवः ॥ १०९ ॥**

२० सप्त हर्षः । हर्षण हर्ष । प्रहर्षश्च । प्रमोदन प्रमोदः । मदी हर्षे । प्रमदन प्रमदः । “‘मदः  
प्रसमोहर्षें’ प्रसमोहर्षपदयोर्मदेरल् भवति हर्षार्थं । मोदन मुद् दान्त त्रियाम । तुरु तुरुः । तोषण  
तोष । आनन्दम् आनन्दः । पु मि । त्रन्दि समृद्धा । उत्सवनम् उत्सव । प्रीति । उत्कर्ष । उद्दव 。”

**कृपाऽनुकम्पानुकोशोऽहन्तोक्तिः करुणा दया ।**

२५ पठ दयायाम । क्रप कृपायाम । क्रपण कृपा । “‘पानुबन्धमिदादिम्योऽद्’ इत्यद् । ‘क्षेषे  
सम्प्रसारणम्’ इति परमूत्रेणाद् सम्प्रसारणं च । स्वमन्ते<sup>४</sup> क्रप कृपायाम इति जापकात् सम्प्रसारणम् ।  
‘स्त्रियामादा ।’ अनुकम्पनमनुकम्पा । अनुकोशन्त्यनेन अनुकोश । पुसि । न हन्तोक्ति । अहन्तोक्ति ।  
करोति विपाद चित्त किरति वा करुणा । उणादौ इकृत् करणं । क्रियते करुणा । ‘अकृत्वृत्यमिदाय-

<sup>१</sup> द्वेषपर्याये खेदपाठात्रिन्तनीय । खेदपर्यायस्तु “शोक शुक् शोचन खेद.” इति  
अभिं चिं । क्रोधपर्यायस्तु—“कोपक्रोधाऽमर्पणोपत्रिधा रुट्कुबौ स्त्रियौ” इत्यमर. । २ मन्यते त्या-  
ज्यत्वेनेति शेष । ३ का० ३० सू० ४।१। ४ का० सू० ४।५।४।५ । ५ उद्बवशब्दस्योत्सवार्थं प्रमाणम्—  
‘उद्बवो यादवमिद महे च क्रतुपावके’ । इति मेदिं को० वा० व० ३२ श्लो० । ६ का० सू०  
४।५।८।२ । ७ “क्षेषे सम्प्रसारणं च” पा०गण सू० ३।३।१०।४।८ कातन्मतमत्र स्वमतम् । पाणिन्यादि-  
मूत्र परमतम् । ८ का० ३० सू० २।६।० ।

जिंच्य उनः” एव्य उनः प्रत्ययो भवति । दयन दया । दय दानगतिहसादानेषु । भिदाद्वद् ।

### शेषुषी धिष्ठीणा प्रज्ञा मनीषा धीस्तथाऽशयः ॥ ११० ॥

पद् बुद्धौ । शे इत्यव्ययम् । मोह । न मुण्णाति शमयति इति शेषुषो । धृष्णोत्थनया धिष्ठीणा<sup>१</sup> । प्रज्ञान प्रज्ञा<sup>२</sup> । मनुते जानात्यत्या मनीषा । मनम ईपा मनीषा वा । “हल॑लाङ्गुलयो-रीपे मनसश्च” इत्यनेन अन्यस्वरादेलोप । अत्र मलोपश्च । चक्राग्विकाराण्डोपचाराण्डा सलोप । ५ स्मृध्यै चिन्तायाम् । ध्यान धी<sup>३</sup> । सम्पदादित्वाण्डावं क्रिप्<sup>४</sup> । ‘यावो सम्प्रसारणम्’<sup>५</sup> अनेनैव सम्प्रसारण दीर्घत्वं च । प्र० सि । “रेकनोर्विसर्जनीय” । याशेने तिष्ठति मर्भमत्राशय । तथा-प्रेज्ञा । प्रतिभा । शुद्धिः । मति । मेधा । सख्या । सवित्तिः । उग्लविव ।

### प्राज्ञमेधाविनौ विद्वानभिरूपो विचक्षणः ।

पण्डितः सूरिसाचार्यो वाग्मी नैयायिकः स्मृत ॥ १११ ॥

१०

दश शिरुपि । प्रजानात्ति प्रज्ञ । प्रजादित्वाण्डं प्राज्ञ । मेधात्यस्य मेधावी । माया-मेधामत्रो विन्<sup>६</sup> वाविकागत्यर्थे एवने विभाषया विभाषिता<sup>७</sup> । शेषेभ्यो मनुष्यित्वं । मतिमात् । बुद्धिमात् । विद जाने । विद । वेति जानानीति विद्वान् । वर्तमाने शा० शत्रु० । १० अन्वित० अदादि० । “वेते<sup>८</sup> शतुर्वसु०” । शत्रु० स्थाने वसु । नदादेशात्तद्वद्वन्ति इति वचनात् वसो शत्रु० विद्वावेन सर्वधातु-त्वात् अत्तीण्ण०<sup>९</sup> वशेसैकम्वरातामिद्वस्मै अनेनैकस्वरत्वात्याम् इद् न भवति । विद्वन् सजातम् । १५ “मिः । १११ सान्तमहतोनोपयाया” दीर्घ० । विट्पोडपि । अभिगत रूप येनाभिरूपः । रूप विद्या ।

“कोकिलाना स्वरो रूप नारीरूप पतिव्रता ।

विद्या रूप कुरुपाणां क्षमा रूप तपस्विनाम् ।”

चक्र धातुर्विष्पूर्वः । विविध चण्टे विचक्षणः । नन्दादेशु०<sup>१०</sup> वांग्न । ११२२० खत्वम् । विचक्षणो विद्वान् इत्यनेन विचक्षण इति निपात । निपातस्य फल ख्यादशो न भवति । पण्डा बुद्धि । २० पण्डा मजाताऽस्येति परिण्डत । ११३ तारकितादिर्शनात्सजातेऽर्थे इतच् । ११४ द्रवर्णवर्णं आकार-लोपः । मि । रेक । पद् प्राणिगर्भविमोचने । सते बुद्धि सूरि॒ः । ११५ भूत्वदिम्य कि॑ प॒य क्रिप्रय-यो भवति । को यण्वदर्थ॑ । ११६ आचर्षते आचार्य॑ । “चरेराटि चागुरौ॒” । तथा चोक्स॑— इन्द्र-नन्दिनीतिशास्त्रे-

“पञ्चाचाररतो नित्य मूलाचारविदश्रीणाः ।

२५

चतुर्वर्णस्य सङ्घस्य य स आचार्य इप्यते॑॥”

१ शेते इति शेषोहै । विच् । नमुण्णातीति, मूलविभुजादित्वात्क । गारादिटा० । शमे वस्मै एत्वाऽप्यासलोपे उगितश्चेति डीपि शशमेति शेषुषीति क्षी० स्था० । २ धिष्प शब्दे॑ । देवेशीति । क्षी० स्था० । ३ प्रज्ञायनेऽनयेत्यन्यत्र । ४ का० रु० पूर्वा० २८ स० । ५ न्यायतेऽनया धीस्तियन्यत्र । ६ “सम्पदादिम्य क्रिप्<sup>११</sup>” का० रु० उ० ८०५ स० । का० रु० मा० ६५८ स० । ८ का० य० २१३।६३ । ८ का० स० गदा०१५ । अत्र दुर्गृहिनि । १० वर्तमाने शनृटानशाव-प्रथमैकाधिकरणामन्वितयो॑” । का० स० ४।४।२ । ११ “अन्विकरण, कर्तरि॑” का० स० शा० ३।२ । १२ “अदादेलु॑ग्विकरणस्” का० स० ३।४।१२ । १३ “शत्रुवसु॑” । का० स० ४।४।४ । १४ का० स० ४।६।७।६ । १५ का० स० २।४।७।८ । १६ का० स० २।४।४।८ । १७ का० रु० पू० ५०८ । १८ का० स० २।६।४।४ । १९ का० उ० ३।५।३ । २० का० स० ४।२।१४ । २१ नीतिसा० १५ रु००० ।

प्रशत्ता वागस्त्वम् वाग्मी । न्याये विचारे नियुक्तो नैयायिकः । धीर । लब्धवर्ण । विपश्चित् । ब्रुद्ध । आमरूपः । सन् । मनीषी । ज्ञ । दीपत्र । कोणिद । प्रब्रुद्ध । सुधीः । कृती । इष्टि<sup>१</sup> । कवि । व्यक्तः । विशारदः । सख्यावान् । मतिमान् ।

### पारिपद्यो बुध सम्यः सदः संसत्सभोचितः ।

५ पट् समापुरुषे । परिपदि सभाया भव पारिपद्य । यण् । बुध अवगमने । बोधतीति बुधः । सभाया सातु सम्य । कुशलो योग्यो हितश्च सातुरुच्यते । सदसि उचितो योग्य सदउचित । ससदुचितः । सभोचितः । समापद् । समाप्तारां । सामाजिक ।

### परिपत्सभाऽस्थानपती—

त्रय सभायाम् । परिपीदन्त्वस्या परिपद् । सह भान्त्यस्या सभा । आसमन्तात्स्थीयते<sup>२</sup>  
१० मिन् आस्थानपती ।

(अधिपति राजा) पति —आस्थान सभा इत्यादिपर्यायनामतोऽधिपति पतिरित्यादिपर्याय शब्देषु सत्यं गजो नामानि भवन्ति । परिषदधिपति । परिपत्पति । सभाधिपति । सभापति । आस्था-नाधिपति । आस्थानपति ।

### राजमूर्यो नृपक्रतुः ॥ ११२ ॥

१५ मण्डलेश्वरप्रजाया (प्रयाजे) ढाँ । पुन् अभिप्रवे । पु । “धात्वाऽ” स । राजन्पूर्व राजा सोतव्यो राजा सूत्ये वा यस्मिन्निति राजमूर्य । “४राजमूर्यच्च” । व्यण्ग्ययान्तो निरान् । वृपाणा गजा कतु नृपक्रतु । तथा च ‘स्मृतो—

“गोसवे मुरभि हन्याद्राजमूर्ये तु भूमुजम् ।  
अश्वमेवे हय हन्यात् पौण्डरीके च दन्तिनम् ॥”

### विष्ट्रं मल्लिकार्णीठमासन्दीमासन विन्दु ।

२० पडासने । न्तून् आच्छादने । विपूर्व । विस्तरण विष्ट्र, । ‘त्वर॒ बृद्धग्मिश्वामल् ।’ अल् । नाम्यन्तगुणा । ‘वाऽनुसानः’ । सज्जाया सम्य पृथम । “७त्वर्गस्य पृथ्वर्गाद्वर्ग ।” मल्ल्यते धार्यते मल्लिका । पेट्टीति पीठम् । ‘पृष्ठोदरादिन्वाहीर्व । आ समन्नात्सीदति तिष्ठत्यस्यामासन्दी’ । आस्थते

१ ऋत्र प्रमाणम् अभिं चिं ३५० । ‘विट्वान् सुची’ कविविचक्षणलब्धवर्ण जः प्रामरूप-कृतिकृष्यभिरुपधीग । मेधाविकोविदविशारदसूरिदोपज्ञा प्राजन्णितमनीविशुवप्रबुद्धा ॥ व्यनो विपश्चित्सदूर्यावान् सन्” इति । २ “अधिपती राजा” इति प्रतीकमाश्रित्य व्याख्यादर्शनादय मूल-पत्राश इति । न भ्रमितव्यम् । पूर्वापर्यादयोर्मत्ये तसमावेशामःमवात् पदक्षरवेन स्वतन्त्रपादत्वा भावात् अत्र राजवर्णनस्याप्रसगत्वाच्च । एव च समाप्रसन्नैन तदधिपते राजव्यपदेशार्थ-टीकाकर्तुविशेषवच्चनमित्यत्र दुक्त नाति । ३ का० स० ३१०२८८ ॥ ४ का० स० ४२०४१ ॥ ५ ‘स्मृतो’ इत्युक्तम् । ग्रमविकल श्लोको यशस्तिलक आ० ७ का० ३० श्लो० ३ उपलम्यते । ६ का० स० ४५०४१ । ७ सा० स० ३८०४४ ॥ ८ शा० स० २२०१७२ ॥ ९ ‘आस उपवेशने’ । अब्दायः पा० उ० स० ४१६८ ॥ इति द्रष्टव्यो भवति, अमागमष्टित्वं च । टित्त्वान्डाप् । तथा चोक्तम्—“स्याद् वेत्रासनमासन्दी” इति ३३८८ । अभिं चिं ।

उपविश्यते उस्मिन्नासनम् । “<sup>१</sup>कृत्युटोऽन्यत्रापि च” युट । विदुः कथयन्ति ।

### विष्टयं भुवनं लोको जगत्-

चत्वारो जगति । <sup>२</sup>विष्टपत्त्यत्र विष्टपम् । भूतानि भवन्त्यस्माद्गुब्बनम् । लोक्यते लोक । गच्छतीयेवशील जगत् । “<sup>३</sup>युतिगमोद्देहं च” विवेप । गमो द्विर्वचनम् । अन्यासमकारलोप । ‘ कर्वगस्य चवर्गः’ गस्य ज । ज गम् जातम् । <sup>४</sup>पञ्चमो । दीर्घ । ‘<sup>५</sup>यममनतनगमा कौ’ पञ्चमलोप । ५ आन् अत् । “<sup>६</sup>धातांस्तोऽन्तं पानुवन्धे” तोऽनुत । वेलाप । सि । नपु मकम् ।

तस्य पतिजिनः ॥ ११३ ॥

तस्य भुवनस्य पतिजिन कथयते । अनेकभवगद्वयसनप्रापणहृत् न कर्मारातीन् जयतीति जिन । “<sup>७</sup>इण्णशजिवृष्टियो नक्” । विष्टपति । लोकपतिः । जगतपतिः । इन्यादीनि जिनस्य पर्याय-नामानिशातव्यानि ।

१८

वर्षीयान् वृषभो ज्यायान् पुस्त्राय प्रजापतिः ।

ऐश्वाकुः (कः) काश्यपो ब्रह्मा गौतमो नाभिजोऽग्रजः ॥ ११४ ॥

द्वादश वृपमे । व्रतिशयेन तुद्वो वर्षीयान् । “<sup>१</sup>प्रियमिथरम्भिरोहबहुलगुरुवृद्धनप्रदीर्घ-वृन्दारकाणां प्रवस्तुवर्वहिगर्वित्रिवृष्टिवृन्दा” । वृपण श्रीहिमालदणोपत्थमेण मातीति <sup>२</sup>वृषभ । “<sup>३</sup>ऋषिवृष्टिया यज्वत्” । आन्यासमः प्रत्ययो भवति स च यज्वत् । अयमेषा मध्ये प्रकृष्टो <sup>१५</sup>वृद्धः प्रशाय्यो वा ज्यायान् । “वृद्धम्य <sup>४</sup> च ज्य,” वृद्धशवदम्य ज्यादेशो भवति । पृष्ठ पालनपूरणयो । पृष्णाति पालयनेति पुरु । “<sup>५</sup> इपिवृष्टिभितिगविभृदिप्य कुः” एवः कुपत्ययो भवति । अस्मिन्नहनि श्रद्धा<sup>६</sup> । इदमोऽद्वावो वश परविधि “सत्योऽद्या<sup>७</sup> निपात्यन्त इति वचनात् । ( आदो भव आद्य ) प्रजानाम् इद्वरयेन्द्रचक्रवर्त्यर्दीना पति स्वामी प्रजापति । इदु इन्द्रायाम् । वाङ्मयते लोकै ऐश्वाकः<sup>८</sup> । तथा चाप्येषां महापुराणे —

२०

“अङ्गुनाश तदेक्ष्यूर्णा रससंग्रहणे नृणाम् ।

इद्वाकुरित्यभूद्वो जगतामभिसम्मतः ॥”

काश्य वृत्तिशयेन यातीति काश्यपः । तथा च महापुराणे —

“काश्यमित्युच्यते तेजः काञ्चयपस्तस्य पालनान् ।”

त्रुहीति ब्रह्मा ।

२५

१ का० सू० ४।५।१२ । २ “षष्ठ्य स्तप प्रतिपाने” अम० को० क्षी० स्वा० भाष्य एवोपलायते न तु पाणिनिधानुशास्त्रे । ३ विशन्त्यत्रेति रामाश्रमः । विशन्त्यस्मिन् जीवाजीवा इति हेमचन्द्र । ४ का० सू० ४।४।४८ । ५ का० सू० ३।३।१३ । ६ का० सू० ४।१५४ । ७ का० मू० ४।१।६९।८ का० सू० ४।१।३० । ८ का० सू० ४।१।३४<sup>९</sup> । वेलोंगोऽपुकस्य इति पूर्णं सत्रम् । १० का० उ० सू० २।५।१ । ११ पा० सू० ६।४।१५७ । १२ वृपेण भातीति विग्रहे आनोऽनुपमगो क । भा दासौ । वर्षति धर्मामृतमिति विग्रहे “ऋषिवृष्टिया यज्वत्” इत्यभ । “वृषु सेचने” । १३ का० उ० मू० ३।१३ । १४ हेश० उ० ४।५।३ । १५ का० उ० सू० १।१० । १६ अत्र आद्यशब्दो न त्वयशब्द । तेनादो भव आद्य इति युक्तः प्रतिभाति । १७ का० सू० २।६।३।७ । १८ इक्षणाम् आ ( रमापर्वणम् ) अङ्गीति इद्वाकः । तत्र प्रमाणमाद—‘अङ्गुनाश्चेति’ सदृशत ।

### अमरकीर्तिविरचितभाष्योपेता

“आत्मनि मेरो ज्ञाने वृत्तौं ताते च भरतराजस्य ।

ब्रह्मेति गीः प्रगीता न चापरो विश्वेते ब्रह्मा ॥”

अत परो ब्रह्मा नाम्नि । गोतमो गोत्रवतगद् गौतमः । आवे महापुराणे—

“गोः स्वगः स प्रकृष्टात्मा गोतमो भिमतः सताम् ।

स तस्मादगतो देवो गौतमश्रुतिमन्वभूत् ॥”

नाभेर्जनो नाभिज्ञः । अत्रे जातोऽग्रजः । अदृष्टवात् ।

**मन्मनिर्महात्मवीरो महावीरोऽन्त्यकाश्यपः ।**

**नाथान्वयो वर्धमानो यतीर्थमिह साम्प्रतम् ॥ ११५ ॥**

सती समोचीना मतिर्थम्य स सन्मति । महापुराणे—

१० “तत्सन्देहे गते ताभ्या चरणाभ्या च भक्तिः ।

अस्तावि सन्मनिर्वेषो भावीति समुदाहृत ॥”

( मध्यने पूज्यने इति महति ) । महती पूजा यस्य स महति । विशिष्टम् उन्डायमन्माविनीम् ईम् अन्तरद्वा समवसरणानन्तचतुष्यलक्षणा लक्ष्मी राखादते इति वीर । वीर इति नाम कस्माऽज्ञानम् ? जन्माभिषेके चालवृशरीरदर्थनादाशङ्कितवृत्तेनिर्दस्य सामर्थ्यख्यापनायै पादाङ्गुणे मेरुसचालनांदन्ते ए

१५ वीरनाम कृतम् । महावीरो वीर महावीरः । तथा च बृहत्प्रतिक्रमणभाष्ये—

“कुमारकाले आमलकीकीद्वाया कीड़तः सङ्कमदेवेन विमानस्त्वलनाङ्गवत्पो (ज्ञो) दनार्थ महाफटाटोपेषत भयानक सर्परूप विकृत्य वृक्षो वेष्टिनः । भगवाँनस्मान्मस्तकादिपादन्यास कृत्वा वृक्षादुर्त्तराण । ततस्तेन महावीर इति नाम कृतम् ।” अन्त्य काश्य नेत्र पातीति अन्त्यकाश्यप । तत परस्तीर्थकरा नास्ति । नायोऽन्वयो यस्य स नाथान्वय । तथा च —

२० “चत्वारः पुरुषंशजा जिनवृपा धर्माद्यस्ते पुन-

नेपिश्रीमुनिसुवर्णो हरिकुले वीरोऽनुथ नाथान्वये ॥

गेयाः सप्रदशाधिका जिनवरा इक्ष्वाकुवशोद्धवा

प्रोद्यन्मोहविनाशनैरुक्तिपुणाः सङ्घस्य सन्तु श्रिये ॥”

अत्र समन्ताद् प्रदद परमातिशयप्राप्त मान केवलजान यन्यासौ वर्धमानः ।

२५ वष्टिपाणुरिलोपमवाग्योस्पसर्गयोः ।

आप चंच हलन्तानां यथा वाचा निशा दिशा ॥’

इत्यवश्वदस्याकारलोप । तथा ऋषित्र प्रयक्षवेदी —भगवतो हि गर्भवितारादो पित्रे-द्रादिविनिर्मिता विशिष्टा पूजा रत्नवृष्टि स्वयं च अद्विद्वयादिक दृष्ट्या वर्वमान इति नाम कृतम् । इह अस्मिन् पञ्चमकाले यस्य तीर्थं यनीर्थम् साम्प्रतम् अधुना वर्तते ।

३० सर्वज्ञो वीतरागोऽहन् केवली धर्मचक्रभृत ।

**तीर्थङ्करस्तीर्थकरस्तीर्थकृदिव्यवाक्पतिः ॥ ११६ ॥**

नव जिनेन्द्रे । जा अवदोषने । जा । सर्वज्ञः । सर्व जानाति वेतोति सर्वज्ञ । “आतोऽनुग्रह-गर्तक” अप्रत्यय । “के॒ यष्वद्योक्तवर्जम्” इति यष्वद्भावात् आलोपः । विशिष्टा ई तर्ता प्रति इतः प्रातोः आरिहननाऽग्नोहनन (स्य) मावाच परिप्राप्तानन्तचतुष्यस्वरूप सन् हन्त्रनिर्मिता-

पतिशयवर्तीं पूजामहतोति अर्हन् । वानिक्षयजमनन्तजानादिचतुष्य विभूत्यात् यस्येति वाऽहन् । त्रिकाल केवलज्ञानमस्त्यस्य केवली । जिनभर्मचक महामारुक्त तीर्थकृदग्रे निराधारतया विद्वान्काले गगने गच्छत् सर्वजीवदयामृचक रन्मयमापुधविशेष विभर्ति तद्वाऽनुभवतोति धर्मचक्रभृत् । तीय द्वादशानुशास्त्र करोतीता तीर्थङ्करः । तीर्थ करोतीति तीर्थकृत । दिव्यवाचाम्यतिः दिव्यवाक्पर्ति । तथा चोक्तम् —

‘यत्सर्वात्महित न वण्णसहित न स्पन्दनापृद्य

५

ना बाढ़काक्लित न दोपमर्लन न वासरुद्धकम् ।

शान्तामर्षविष सम पशुगणः सकर्णित कर्णिभि-

स्त्रद्व मर्वविद् प्रनष्टविपदः पायादपूर्व वच ॥”

चेलं निवसनं वामश्वीरमम्बरमंशुकम् ।

वड् वस्त्र । चिल्यते वस्यनेन चेलं चैल च । निवसन्त्यनेन निपस्तन, विवसन, वन च । १०  
वस्यते उनेनाहु वास । सान्तम । चिनोति उपार्त्यति सारता चीरम्, चीवर च । अम्बने गच्छति शोभा-  
मनेन अम्बरम् । उमयम् । अग्न्तुकारयति अशुकम् । क्लोवे । कर्टम । आच्छादनम् । वस्त्रम् । मिचयः ।  
प८, पटन, पटी । पोत । प्रावर । प्रावार । सव्यान च ।

वस्त्राद्यन्तः दिगाद्यादिसज्जितो वृपमेश्वरः ।

वस्त्राद्य वस्त्रपर्याया अन्ते दिगादयो दिक्पर्याया आने यस्य तत्सज्जितो वृपमेश्वर । वस्त्रादिक १५  
नाम अन्ते दिगादिक नाम आदौ यथा —दिक्चेल । दिग्वासा । दिग्वसन । दिगम्बर । दिगशुकः ।  
दिग्वस्त्र । काष्ठचेल । काष्ठानिवसन । काष्ठावासा । काष्ठाचीर । काष्ठाम्बर । काष्ठाशुक ।  
ककुचेल । ककुचिवसन । ककुचासा । ककुचीर । ककुचम्बर । ककुचशुकः । ककुचस्त्र । आशाचेल ।  
आशानिवसन । आशावासा । आशाचीर । आशाम्बर । आशाशुक । आशावस्त्र । दक्षकन्याचेल ।  
दक्षकन्यावासा । दक्षकन्याचीर । दक्षकन्याम्बर । दक्षकन्याशुकः । दक्षकन्यावस्त्र । हरिच्चेल । हरिचि- २०  
वसन । हर्दिवासा । हरिचीर । हरिम्बर । हरिशुक । हरिद्रूष । इत्यादीनि वृपमेश्वरनामानि  
शातव्यानि ।

कुङ्कुमं रुधिर रक्तम्—

तथः कुङ्कुमे । कास्थने जनै कुङ्कुमम् । रुधिर आवरण । रुणद्वि रुधिरम् । “तिमिरुधि-  
मन्दिरुचिशुषिष्य किर” । रज्यतेऽनन रक्तम् । २५

कस्तूरी मृगनाभिजम् ॥ ११७ ॥

द्रौ मृगमंड । के स्त्रयते कस्तूरी । मृगनाभेज्जातम् मृगनाभिजम् । मृगनाभीज च ।

कर्पूरं घनमारं च हिमं सेवेत पुण्यवान् ।

कुपू सामर्यं । कल्पने कर्पूर । “कुपेरुप्रत्ययः ।” “नाम्यन्तगुणः ।” “कुपे” गोल । कवन,

१ कुपयने आदीयते कुड़कुमम् । कुकु आदाने । “कुदवुकोर्नुम च” भो० उ० इति उपक प्रत्ययो नुमागमश्च । इति गमाश्रम । कुकु कातीति क्षीरस्वामी । २ का० उ० श०२३। २ तथा चोकम-  
मेदिन्याम् ता० व० श्लो० ४६ । “रन्तोऽनुरक्ते नील्यादि रज्जिते लोहिते त्रिपु । कलीबन्तु कुड़कुमे ताम्रे प्राचोनामलकेऽसूजि” । इति । ४ के शिरसि स्त्रयते प्रशस्तधायत्वेन मन्यते इन्यर्थ । विकसति मोगनन्यम स्या इति श्री० स्वा० । “कम गतौ” कसति गच्छति गधोऽन्या इति रामाश्रम । “अवर्तपिङ्गादिभ्य उरो-  
लचौ” । पा० उ० ४१०। इत्यम्बर । पृष्ठोदरादित्वातुट्, गोरादित्वान्डीप् च । ५ “वर्जिग्रुपिमिपिङ्गा-  
दिभ्य उरोलौ” इति का० उ० ३१०। ६ नाम्यन्तयोर्धातुविकरणयोर्गुण” का० स० ३५१।  
७ का० स० ३६१।

सन्यम् । उणादयो हि बहुलम् तेन-

“१ क्चित्प्रवृत्तिं क्चिदप्रवृत्तिं क्चिद्द्विभाषा क्चिदन्यदेव ।  
विधेर्विधानं बहुधा समीक्ष्य चतुर्विधं बाहुलकं वदन्ति ॥”

वनस्येव सारोऽस्य धनसारः । हि गता । हिनोतीति हिमप् । “३ इन्द्रियुषिव्याधूहिम्यो  
५ मक्” । चन्दसज्ज । सिताभ्रः । हिमवालुक ।

### समालम्भोऽङ्गरागश्च प्रसाधनविलेपनम् ॥ ११८ ॥

चत्वारो रागे । सम्यक् प्रबारेगालयते ४ समालम्भ । अङ्गस्य रागोऽङ्गरागः । प्रकर्पण  
रा यते मण्डने प्रसाधनम् । विलायते निलेपनम् ।

### भूषणाभग्णं रुच्यम्-

१० त्रय आभरणे । तसि भूष अलङ्कारे । भूषते मण्डनेन भूषणम् । आ समत्वाद् भ्रियते शोभा  
धार्यते उनेन आभरणम् । रोचते रुच्यम् । अलङ्कार । परिकार । मण्डनम् ।

### माल्य मालागुणघञ्जः ।

चत्वार गुणमालायान । मालैव माल्यम् । चातुर्वर्णादिवाचयण् । माल्यते नार्थते माला ।  
अथवा मालान्ति पुष्पाण्यत्र माला । त्रियान । गुणतीति गुणः । “नाम्युपधीकृगृजा” क । सूज्यते  
१५ स्त्रक् । ‘कृत्विगृदयुक्तमिति’ साधु ।

### मेखला रमना काञ्ची ।

त्रय काञ्च्याम । मेहनस्य एव त्रय मा लानीति निर्णिः । मिनोति प्रक्षिपति कामिचित्तमिति  
वा मेखला<sup>१०</sup> । रसति शब्द कोतीति रसना<sup>११</sup> । रस कान्तो ( शब्दे ) सात्रो त्रुय वानु । श्रोणी शोभा  
कचति( काञ्चते )<sup>१२</sup> बन्नातोति कविः । त्रियामी । काञ्चो । तनकी । कलाप । कटिग्रन्तम् । सरसनम् ।  
२० शिङ्गिनी<sup>१३</sup> च ।

### हेमपर्यायसूत्रकम् ॥ ११९ ॥

हेमशब्दात्सूत्रशब्दे प्रयुज्यमाने मेखलापर्यायनामानि भवन्ति । हेमसूत्रम् । अष्टपदसूत्रम् ।  
स्वरूपसूत्रम् । कनकसूत्रम् । श्रुत्युनसूत्रम् । काञ्चनसूत्रम् । हिरण्यसूत्रम् । जातरूपसूत्रम् । शातकुम्भसूत्रम् ।  
हाटकसूत्रम् । कलधोतसूत्रम् । तपनीयसूत्रम् । कार्तव्यसूत्रम् । इत्यादीनि जातव्यानि ।

### श्रोणीविम्बं कटीसूत्रं मानसूत्रमिवादितम् ।

त्रय पट्टुसूत्रे । श्रोणा कट्या विम्ब प्रच्छादक श्रोणोविम्बम् । कटी सूत्रयति वेष्टयतीति

१ शा०४ १।३।१४।१ अन कारिकारूपेण पठित । २ हिनोति गन्धुतीत्यर्थ । कार्पूरस्याशूल्प-  
तनस्वभावात् । हन्ति श्रोणामिति रामाश्रम । ३ का० उ० १।५५ । ४ आलन्यते विलायते इत्यर्थ ।  
५ का०४० ४।२।५।१ । ६ का०५० ४।३।७।३ । ७ मध्य गति लातीति पृष्ठोदादिवानमेखलेति रामाश्रमः ।  
मुहु स्वलतीति नैमचन्त । मीयते प्रक्षिप्यते इति त्रीम्बा० । ‘मित्र न्वलन्चैच्च’ २।३।१७। सर० क० ।  
८ अशुते कटिम अश्नाति कामिचित्त वेति गमाश्रमहमचन्द्रौ । ‘ग्रो रश्च’ इति यूशादेशश्च । ९ ‘काचि  
दीमिवन्धनयो’ । ‘नर्वधातुन्य इन’ । १० शिङ्गिनी नूपुरम् । मेखलापर्याये तत्पाठोऽयुक्तः । तदुक्तम्—  
‘नपुरन्तु द्वाकोटि’ पादत कट्काङ्गुदे । मङ्गीर हसक शिङ्गिनी—अभि० चि० ३।३३०।

**कटीसूत्रम् ।** मान प्रमाणीभूत सूत्रयतीति मानसूत्रम् । केचिद् रागसूत्र पठन्ति पट्टसूत्र च ।

**मदिगं मध्यमेरेयं शीघ्रु कादम्बरीमिगम् ॥ १२० ॥**

**प्रमन्ना वारुणी हालां मधुवारां सुरां विदुः ।**

एकादश मये । मात्रयनया मदिरा । मधिष्ठा च । मयतेऽनेन मध्यम् । ‘यमिकदिगदा त्वनुपसर्गे’ । इगाया ग्रामसीमायाम सावु पेरेयम् । शेरतेऽनेन शीघ्रुः । ‘३ शीटो तुक्’ । शीटो(ओं)गित्येकं ५ पठितत्वात् शीघ्रपत्रने<sup>३</sup> क इति व्याख्यत । अथवा पीतेऽत्र जनः शेते शीघ्रुः । उभयम् । तालव्यः । कुत्सित नीलमध्वर यस्य स कदम्बरो बलदेवः । तस्येय प्रिया कादम्बरी । कुत्सितमध्वते यात्यनया वा कादम्बरी । एति परिग्राम्यत्यनया इरा । आत्मा प्रसोदयनया प्रसन्ना । आदन्त । वर्मणम्यापत्य वारुणी । जहाति लज्जामनया हाला । स्त्रियाम् । मतु वारयतीति मधुवारा । मुवति गृते भव सुरा । तथा द्विसन्धानभाष्ये—“अतिप्रलापभावेन समुद्रमथनान्निष्कासिता सुर सुरा ।” १०

“लक्ष्मीकोस्तुभपारिजातकसुरा धन्वन्तरिश्वन्द्रमा

गाव्र कामदुष्टाः सुरेश्वरगतो रम्भादिदेवाङ्गना ॥

अश्वः सप्तमुखः सुधा हरिधनु शङ्खो विषचाम्बुद्धे ।

रत्नानीनि चतुरुश प्रतिदिन कुर्वन्तु ते मङ्गरम् ॥

विदु कथयन्ति । मतु । आम्ब । परिगुता । स्वादुग्मा । शुण्डा । गन्धोत्तमा । माधवक । १५

माधव । कल्य कल्या । कल्य, कल्या । परिश्रुत । तान्त नियाम । तालव्यदन्त्य । छारहृण । कापि-शायनम् । शुद्धीकरु । मात्तीकरु ।

### शृण्डामवः—

मयविशेषा द्वा । मुन्व(न)न्ति तृपि गच्छन्त्यनया शुण्डा (८२) ने पातुमनिगम्यते वा शुण्डा” । श्रीओ । शुण्ड । आमते जनयति मदम् आम्ब । पुनि । २०

**तद्विधायी शृण्डो गद्येत मध्यपः ॥ १२१ ॥**

द्वा कल्यपालके । शुण्डाया मये भव शृण्ड । मय पित्रि पाययतीति वा मध्यपः ।

**सक्तोऽक्षद्यृतपानेषु विचित्रा शब्दपद्मिः ।**

त्रयो मवासने । अक्षेषु अनेषु सक्त अक्षसन्त । अतसन् । पानेषु सक्त पानसन् । विचित्रा नाना प्रकारा शब्दाना पद्धति अणिः शब्दपद्मतिर्वर्तते । अक्षशोण्ड । अक्षधूतं । अदक्षितव । “४सप्तमा २५ शृण्डै । व्याल, अधि, पट्ट, पण्डित कुशल, चपल, निपुण, स्वेत्यादि शृण्डादिराकृतिगण ।

### मर्पिहैयज्ञवीनाज्यं—

रियः सर्पिषि । सत धातव सर्पन्त्यनेन सान्त सपः । कलीवे । ‘५अर्चिणुचिरचिह्नसुपि-छादिल्लिद्य इसि’ । सूलू गतौ । ह्यो गोदोहस्य विकारो हैयज्ञवीनम् । दद हैयज्ञवीन व्यातनदिन-गोदोहे मञ्जतम् । उक्त च—

“ ततु हैयज्ञवीन यद्द होगोदोहोद्व घृतम् ।” ३०

१ का० स० ८।२।३।२ का० उ० स० ८।३।३।३ सीयुरिति दन्त्योऽुयन्यत्र पाठ ।  
४ “शुण्डा हाला हारहूर प्रसन्ना वारुणी सुरा ।” अभिं चिं ३।५६।५ ५ शुण्डाशब्दो मर्दिरात्राची पानमदस्थानमपि । तटुकम—“शुण्डा हाला हारहूरम्” अभिं चिं ३।५६।७। “शुण्डा पानमदस्थानम्” अभिं चिं ३।५७।६ शुण्डाया मदिरापानागारे भव इति रामाश्रम । “शुण्डा मदिरा उस्त्यस्येति ज्यो त्वनादित्वादण्” इति हैमचन्द्र ।७ पा०स० २।१।४।८ का०उ०स० २।१।४।८।९ अम० का० २।१।५।२।

तथा चाशाभरमहामिषके—

“आयु पीयूषकुण्डे रस्तिमणिखनिभि शेषुषीबलिलकन्दे-  
मेधासस्याम्बुश्वाहैर्वरफलतरुभिन्ने त्ररत्नाधिदेवैः ।

निष्टुतैर्घागपेयप्रचुरमधुरिमस्नेहधूमोऽुपि येषा

५

कुर्मे हैयज्ञवीनैः स्तपनमपनय ध्वानतभानोर्जिनस्य ॥”

वीयते क्षिप्यते पित्तमनेनाज्यम् । तथा क्षीरस्वामिनि—“आ अञ्जनीयमाज्यम्” ।  
‘‘आड्यूर्वादज्जे, सज्जायाम्” वयप् । धृतम् । आधार । स्पृश्यम् । याज्यम् । हविः ।

दुग्धं क्षीराऽमृतं पयः ॥२२॥

चत्वारो दुग्धे । दुह प्रप्रणे । दुह्यते दुग्धम् । धर्लु अदने । सौत्रोऽयम् । धस्यते क्षीरम् ।  
१० ‘धसेः<sup>३</sup> किंच’ ईरमात्र । ‘गमहनजनेत्युपधालोप । ‘अश्वोपेक्षशिग प्रथम’ क । “शासिवसि-  
वसाना च’ प्रत्यम् । कृपूषयोगे च । “ध्यज्ञनमस्व<sup>४</sup>” । उणादौ क्षिणु क्षणु हिसायाम् । क्षणीति  
क्षीरम् । ‘‘क्षीरोशोग्गमोरगम्भीरा’ एते ईरप्रत्ययान्ता निपायन्ते । न ध्रियनेन अमृतम् ।  
अव्रगभरकारित्वात् । वीयते वा सरमत्वात् पयः । यस्त्रू । उधस्यम् । स्तन्यम् । पौयूष, पूयूप च ।

उदधिन्मथितं तक्रं कालशेयं पिवेद् गुरुः ।

१५ चत्वारस्तके । उदकेन श्वयति वर्तते उदधिन् । तान्तस्तालव्यमध्य । मध्यते (स्म) मथितं धोल च । तत्रतिद्रव गच्छति तक्रम् । उभयम् । ‘‘तक्रं विभागभिन्नं तु केवल मथित स्मृतम्’ इति धन्वन्तरिं । कलशर्या गर्गर्या भव कालशेयं पिवेत् गुरु । तत्कालान गरिष्ठम् । अरिष्ठम् । दण्डाहतम् ।

प्रायो वयो दशानेहा पूर्णे यौवनकं विदुः ॥१२३॥

२० तारुण्यं यौवनं च

‘‘अष्टौ तास्थे । प्रकर्षण पग्लोकमेत्यनेन प्राय<sup>५</sup> पुसि । मात्तोऽपि प्रायम् । वयते चयः<sup>६</sup> । दशनि चुम्बनि स्त्रीमुख दशा । न उद्देहते<sup>७</sup> नेष्टत अनेहा । अनेहसोऽसरमोऽङ्गुरस<sup>८</sup>” एते सन प्रत्ययान्ता निपायन्ते । ईह नेष्टायाम् । पूरी अत्यायने दिवादौ ग्रात्मनेपदी । अदन्ताना प्राक् तृ(क्र)तीयः परम्पैषदी । पूर्यने कश्चित्, पूर्यति कश्चित् । इन्द्र चुग्यापेक्षया वा । “‘कारित० कारितलोप । उभयथा २५ पूरि जातम् । पूर्यते स्म पूर्णः । निष्ठात् । ‘‘दान्तगान्तपर्गाद्यत्सप्टल्लवशमाश्चेनन्ता’ इत्यनेन पूर्णंति निपातः । यूना भावो यौवनम् । स्वार्थं क । यौवनकम् । ‘‘युवादित्वाद्वेषण् । वृद्धौ । तस्याम्य

१ पा० स० ३।१।०९ । वार्तिकम् । २ पा० उ० स० ३।३।२ । ३ का० स० ३।६।४।३ । ४ का० स० ३।८।० । ५ का० स० ३।८।२।७ । ६ का० र०० प०० स०० २।५।६ । ७ “ध्यज्ञनमस्वर पर वण नयत” का० स० ३।१।०।१।८ का० उ० स०० ३।४।६ । ८ अत्र प्रायादयोऽनेहोऽन्ताश्चत्वागो वयोवाचका । पूर्णपूर्वका एते चत्वारो यौवनकतारुण्ययौवनानीति त्रय । एष च सन तारुण्ये इति वर्तु युक्तम् । १० प्रकर्षण शरीरस्य क्रमेणायते गच्छति इति है० च० । ११ शरीरस्य क्रमेण विवन्ति वय, बान्धादीनि दश्यन्ते दशा इति है० । १२ नाहन्ति नागच्छुति नाहन्यने नागम्यते वैति रामाश्रम । ‘नग्याहन एह च’ इति सायु । १३ का० उ० स०० ४।१।८ । १४ का० स०० ३।६।४।४ । १५ का० स०० ४।६।१।० । १६ है० श० ७।१।६।७। युवादेषण् इति सूत्रम् ।

भावस्तारणम् । भावार्थे यण् । युनो भावो यौवनम् ।

अन्यो वार्दीनः स्थविरो मतः ।

त्रयो वृद्धे । अन्ते भवोऽन्यतः । वृद्धे नियुक्तो वार्दीनः<sup>१</sup> । तिष्ठतीति स्थविरः<sup>२</sup> । गति-  
भृग्मतः कथितः । प्रव्याप्तः । यातयामः । दशमीत्यः । जरनः । जरठः । जीर्णः । वृद्धः ।

**वशोऽन्योऽन्ववायः स्यादाम्नायः संततिः कुलम् ॥ १२४ ॥**

पद् वशे । उश्यते काम्यते जनेन वंशे<sup>३</sup> । पुसि । अन्वयते सन्ततिरत्रान्वयः<sup>४</sup> । अन्ववेत्य-  
पत्यमत्रान्ववाय । आम्नायते आम्नाय<sup>५</sup> । सम् सम्यक् प्रकारेण तनोति विस्तारवतीति सन्ततिः<sup>६</sup> ।  
सन्तनन वा सन्तति । कु (को)लति सर्वं भवन्यत्र कुलम् । उभयम् । गोत्रम् । आभिजन ।

ओधो वर्गश्च सनातनः

त्रय समूहे (वशस्यावान्तरवर्गभेदे) । ओद्वते ओद्वतः<sup>७</sup> । वृज्यते विजातीयेन पृथक् क्रियते १०  
वर्ग । मन्तन्यते सन्तानः । विक्र । निकाय । निवह । विसर । वज । पुञ्ज । समूह । सञ्चय<sup>८</sup> ।  
समुदय । समुदायः । सार्थ । यूथ । निकुरम्ब । कटम्बम् । पृग्म । राशि । चय । समवाय । मण्डलम् ।  
चक्रवालम् । जालम् । स्तोम । व्यूह ।

**काव्यमेव कविस्थितिः ।**

द्वौ काव्ये । कवेभाव काव्यम् । तथा च यशस्तिलके—

“दुर्जनानां” विनोदाय बुधाना मतिजन्मने ।

मध्यस्थानां न मौनाय भन्ये काव्यमिदम्भवेत् ॥”

कवीना स्थिति कविस्थिति ।

पद्मिवर्ग प्रारम्भते श्रीमद्भरकीसिना—

**हमो मरालशक्राङ्गः**

१५

२०

त्रयो हसे । विम हन्ति खण्डयति, चारुगत्या हन्ति गच्छति वा हसः । हन्ते<sup>९</sup> स । मरं  
मलं कमलमण्डिततडागमियर्ति गच्छतीति मरालः । चक्रमद्विति चक्राण्डानि वा यस्य चक्राङ्गः ।  
मानसांका । श्वेतच्छुद ।

**हंसवाहः सनातनः ॥ १२४ ॥**

हसशब्दाद् वाहशब्दं प्रयुज्यमाने त्रिवर्णो नामानि भवन्ति । हंसवाहः । मरालवाहः । चक्राङ्गः<sup>१०</sup> ॥ २५  
वाह । इत्यादीन शातव्यानि ।

**मयूरो वर्हिणः केकी शिखी प्रावृष्टिकस्तथा ॥**

**नीलकण्ठः कलापी च शिखण्डी—**

अद्वै मयूरे । मद्या रौति मयूर । मीनाति वाऽहीन् मयूर । उणादौ । मीत्र् हिसायाम् । मथते

१ अत्रान्यत्प्रमाणे नोपलब्धम् । २ यौवनमतिकम्य तिष्ठतीति ह० च० । “अजिरशिशिरेत्यादि  
पा०उ० १५३ इति किरप्रत्ययो उगागमो हस्तव्य च । ३ “वश कान्तौ” घञ् । तुम । वस्यते कन्यतैऽनेनेति  
स्वामी । ४ अन्ववेति अन्वीयते । अन्वय । “इण् गतो” । अच् । इत्यन्यत्र ५ अत्र प्रमाणम्—‘आम्नायः  
कुल आगमे उपदेशो’ इति हैम । ३पा११। ६ सन्तन्यते सम्यग्विस्तारयतीति रामाश्रम । ७ आ ऊहते ।  
ऊह वितके । न्यद्व्यक्तादित्वाद् हस्यघ । ८ आ० १ श्लो० २५। ९ का० उ० सू० ८५। ‘वृत्तविद्व-  
निमतिकस्यशिकपेभ्य स.’ । इति ।

इति मयूर । “मथते रुग्मे खौ” । ग्रहमस्यास्ति वर्ही । “फलं बहर्यामिनच्” । केका वाणी अस्यस्य केकी । शिखाऽस्त्यस्य शिखो । प्रादृष्टि वर्षाकाले प्रुन् प्रावृष्टिकः । नील कण्ठे यस्य म नीलकण्ठ । कलापोऽस्त्यस्य कलापी । शिखण्डोऽस्त्यस्य शिखण्डो । प्रचलाकी । सर्वाशन । शिखाबल । श्याम-कण्ठ । चन्द्रकी । शुक्रापाणी ।

५

तत्पतिरुद्धः ॥ १२६ ॥

तस्य पतिस्तत्पतिरुद्ध कार्तिकेय । मयूरशब्दात् पतिशब्दे प्रयुज्यमाने कार्तिकेयपर्यायनामानि भवन्ति । मनूरपर्ति । बृंणपति । केकिपति । शिखिपति । प्रावृष्टिपति । नीलकण्ठपति । कलाखिपति । शिखण्डिपति । इत्यादीनि ज्ञतव्यानि ।

## वरटा वारली हंसी-

१०

त्रयो हसमार्यायाम । वर विशिष्टमटनि गच्छति वरटा । वरलस्य भार्या वारली । स्वार्येण्डणि । वरला च । हन्तीति हसी ।

कोक ईहामृगो वृकः ।

अजातिक कोकते आदत्ते कोकः । ईहा मुरोऽस्य ईहामृगः । ईहा मृगयते वा ॐ ईहामृगः । कुक वृक आदाने । वर्कते वृकः । अग्ण्यव्याप्ति ।

१५

## हरिणो मृगश्च पृष्ठतः-

त्रयो मंग । गोनेन द्वियते हरिण । व्यामैमृग्यते मृगः । पर्वति मिच्चति मृगेण पृष्ठत । तान्तोऽपि पृष्ठत् । एग । कुरुङ् । कुरुङ्म । सारङ् । क्षश्य । रिश्य । क्षुप्यश्च । रुरु । न्यहु । वात-प्रमी । शम्बर । शब्ल । कुप्पणमार । कलमारोऽपि ।

तदङ्गः शर्वरीकरः ॥ १२७ ॥

२०

हरिणपर्यायादङ्गपर्याये प्रयुज्यमाने चन्द्रस्य नामानि भवन्ति । हरिणाङ् । मृगाङ् । पुष्टनाङ् । इत्यादीनि ज्ञतव्यानि ।

पन्नगोऽहिर्विपधरो लेलिहानो भुजङ्गम ॥  
नागोगगौ फणी मपः-

नव सर्वे । पञ्चाणि न गच्छतीति पन्नगः । न भ्राण्णनपादित्यस्योपलक्ष्यत्वात् । अहन्य ( नेऽ ) २५ हि । “अहिंकर्मयोर्नलोपय” नलोपय । विप धरति विपधर । निलेहेति लेलिहान । भुजान्या गच्छति भुजङ्गम । न गच्छतीति ‘नाग । उरसा गच्छतोत्युरग । “‘उरो विहायसो रुग्विहो च” । उरो विहायमोरुपदयोर्गमन् सजाया खो भवति तयोश्च उरविहाय यथासग्य भवत । फणाऽस्त्यस्य फणो ।

१ का० उ० सू० ६।४० । २ पा० ५।३।२२ वार्तिकम्—“फलबहर्यामिनच्” । ३ ईह्या महताऽयासेन मृग्यते आनेदीक्रियते द्वन्द्यन्यत्र । ४ वर्कतेऽजादिकमादते, वृणेनि वा वृकः । ५ रामाश्रमस्तु—‘पृष्ठता विन्दवो विन्दुसदशलवणान्यस्य पृष्ठत । अर्श आदत्त इत्याह । पृष्ठतो विन्दुचित्र इति द्वा० स्वा० । ६ पन्न पतित यथा स्थ तथा गच्छतीति रामाश्रम । सर्वपन्नयोरिति वार्तिकन इ । ७ का० उ० सू० ६।४। किम्ययो नलोपय । अहि गतो । अहिति वेगेन गच्छति । ८ मुश लेदील्येवशीलो लेलिहान । लिहेयद्भुगन्तात्—“तान्त्रीच्यवयोवचनशक्तिपु चानश्” पा० स० ३।२।१२६। इति चानश् । ९ सुजेन कौठिल्येन गच्छति, सुज इव गच्छति वेत्यन्यत्र । “गमश्र” का० सू० ६।३।४६। इति । “विहङ्गतुरुड़, भुजङ्गश्र” का० सू० ६।३।४६। इति खचि, डे च, सुजङ्गम, सुजङ्ग इति । १० नगे पर्वते भवो नाग । अथवा न गच्छतीत्यग, न अग, नाग इत्यन्यत्र । ११ का० सू० ४।३।४६।

सर्पति गच्छति सर्पः । पृदाकुः । भुजग । आशीविष । चक्री । व्याल । सरीसूप । कुण्डली । गूढपात् । द्विरसन । चक्षुःश्वा । काकोदर । दर्वाकर । दीर्घपृष्ठ । दन्दशूक । विलेशय । भोगी । जिङ्गग । पवनाशन । गोकर्णः । कुम्मीनम । कञ्जुकी । राजसर्प । भुजद्वासुक् । दक्षुति ।

तद्वैरी विनतात्मजः ॥ १२७ ॥

तस्य पञ्चगस्य वैरी शत्रु विनतात्मज गरुड । पञ्चगवैरी । अहिरिपुः । विपवराराति । ५  
लेलिहानरिपु । भुजद्वासत्रु । नागद्विट । भुजद्वासत्तन । कणिद्विट् । सर्पहृत । सर्पदेवी । हत्यादीनि  
गरुडनामानि स्यु ।

सुपणो गरुडस्ताक्ष्यो गरुत्मान् शकुनीश्वरः ।

इन्द्रजिन्मन्त्रपूतात्मा वैनतेयो विपाशयः ॥ १२८ ॥

नव गरुडः । शोभन म्वर्णमय पर्याप्त्य सुपर्णा । तथा च—“सुपणो” हेमफक्षत्वात् ॥ डी. १०  
विद्यायसा गतो । गरुत्पूर्व । गरुद्विः पद्मैर्यते गरुडः ।

‘३ वर्णागमो गवेन्द्रादौ मिहै वर्णविपर्यय ।

पोडगादौ विकागस्तु वर्णनाशः पूपोदरे ॥’

टन्यनेन श्लोकेन गरुत्सब्दस्य तकारस्य लोप । लत्वे गहल । गकटब्र । तुनस्यापय ताक्ष्यः । १५  
गरुत पक्षा सन्त्यस्य गरुत्मान् । शकुनीना विहृदानामीवरं स्वामी शकुनीश्वरः । इन्द्र जितवान्  
इन्द्रजित् । मन्त्रेण पृत पवित्र आत्मा यम्य स मन्त्रपूतात्मा । विनताया अपय धैनतेय । विप  
क्षयनीति विषद्वय । काढ्ययनन्दन । विषयुरथः । पञ्चगाशन । नागान्तक ।

खमिन्द्रियं हृषीकं च थो (सो) तोऽक्षं करणं विदुः ।

पाडिन्द्रिये । स्वर्गमोक्षो खनति विदाग्यतीति खम्<sup>३</sup> । इन्द्रस्यात्मनो लिङ्मिन्द्रियम्<sup>४</sup> ।  
हृष्यति हृष्ये प्रानोति विपयेतु शब्दपर्शरूपरसगन्वेतु हृषीकम् । शुणोत्यनेन सान्तम् शोत् । २०  
तालव्यादिः । अक्षोति विपय व्यानोति अक्षम् । कियते मनोऽनेन विषयेतु करणम् । शेव  
[विपयि] । कग्रलम्<sup>५</sup> ।

पुण्यं भाग्यं च सुकृतं भागधेयं च सन्कृतम् ॥ १२९ ॥

पञ्च पुण्ये । पुण शोमे । पुणति शोभने पवते वा ‘पुणम् । ‘पर्जन्यपुण्य’ । भगस्यैश्वर्या  
देविन् [कागणम्] भागम् । भागमेव भाग्यम् । “भागाग्रम्” । सुदृक्षियते सुकृतम् । २५

“ ऐश्वर्यस्य समग्रम्य धर्मस्य यशसः श्रियः ।

वैराग्यम्याद्य मोक्षस्य पण्णा भग इति स्मृतिः ॥”

१ द्वी० स्वा० मा० १११२९ । २ शा० सू० राग१७२ । अत्र कारिकारूपेण पठित ।  
३ वन्यत, तत्तदिन्द्रियाविष्टानस्य खानसदशन्वदशनात्, खम् । ‘खनु अवदारणे’ । डप्रत्यय इत्यन्यत्र ।  
४ इन्द्रियमिन्द्रियलिङ्मित्यादिना घन् । घन्येय । ५ तालव्यशोतशशब्द कर्णेन्द्रियवाचकः । दन्त्यमोतशशब्द  
इन्द्रियवाची, सोऽत्र पठितव्य । तदुक्तम्—‘हृषीकमद्व करण सोत् व्य विषयेन्द्रियम्’ अ० च०  
‘सोत् इन्द्रिये निम्मगारणे’ । इत्यमर ३।३।२३। ६ नात्रान्यत्प्रमाणमुपलब्धम । क्लिष्टसमाधान-  
प्रकाग्मन्तु—कमिति सुखार्थकमव्ययम्, तस्य चल साधनमिन्द्रियमिति । ७ पुणतोति पुण । ‘पुण शुभे  
कर्मणि । इगुपवेति कः । पुणमहंति पुण्यम् । ‘तदर्हति’ । पा० सू० धा१६३ । इति यत् । पुनाति  
पवते वेत्यन्यत्र । ८ काल उ० सू० ३।४ । ९, श्लोकोऽय विष्णुपुराणस्थत्वेनोहिलिखित अम० को०  
द्वी० स्वा० भाष्ये । १।१।१३।

भगव्येद भाग भागमेव भागधेयम् । ‘नामरूपभागेऽस्यो धेयः’ ॥ ६ ॥ सत्त्वमीचीन क्रियते ( स्म ) सत्त्वतम् ।

अघमंहश्च दुरितं पाप्मा पापं च किञ्चिषम् ।  
वृत्तिनं कलिलं हेनो दुष्कृतम्

५ दश पापे । न जहाति प्राणिनम् अवधम् । अहति गच्छति नरकादिकमनेन अ ह । सान्तम् ।  
दुरितम् । दूर् सौत्रोऽय धातु । पाति सुगतेर्वार्यति पापम् । पु सि । “सर्वधातुभ्यो मन् ।” पाति सुगत-  
र्वार्यति पापम् । “पाते: प.” । निन्यत्वेन कल्प्यते मुद्दर्मुदः । किरति सङ्गतिं वा किल्विषम् । “किल्विषा”  
व्यथिषां एतौ टिप्रत्ययान्तौ निपात्येते । उज्यतेऽपनीयतेऽनेन वृजिनम् । कलयति कलिलम् ।  
“कलेरिलः” । एति गच्छति [सुखम्] अनेन एन् । सान्तम् । दुष्क्रियते सम दुष्कृतम् । तम । कल्नम् ।  
१० कलमषम् । अशुभम् । प्रतिकट्टम् । पङ्कम् । किष्वम् । मल । अनेकार्ये ।

तञ्जयी जिनः ॥ १३० ॥

तस्य पापस्य जर्या तज्जर्या । अघजर्या । दृरितजर्या । पापजर्या । इत्यादोनि जिनस्य नामानि भवन्ति ।

सदनं सत्र भवनं धिष्यं वेशमाथ मन्दिरम् ।  
गोहं निकेतनागारं निशान्तं निवृतं गृहम् ॥ १३२ ॥  
वस्त्यावसथावासं स्थानं धामास्पदं पदम् ।

1

१ पा० स० ५।४।३५। वार्तिकम् । २ अद्यते गच्छति दानादिनाऽप्यम् । “अयि गतो” ।  
पचाश्च । आगमशास्त्रस्यानिष्टव्यक्ति तुम् । ३ दुष्टमिति गमनमनेनेति रामाश्रम । ४ का० उ० स०  
२।५।५ । ५ ‘किल्विपाव्यथिष्ठौ’ का० उ० स० १।२।६ । ‘बृजा वर्जने’ । बृजे किञ्चेतीनच्च । बृज्यते  
बृजिनमित्यपि । ७ कलयति जनयति दुःखमिति शेष । ८ का० उ० स० ४।२।८ । ९ का० उ० स०  
३।६।० । १० “तिमिरधिमदिमन्दिवधिरुचिशुपिण्यः किरः” का० ३० स० १।२।३ । ११ का० स०  
४।२।६।० । इति निर्देशाद् गेह हिति निपात । १२ आ अहंति अद्यते वाज्ञा चाकुलक आरप्त्यय । “अगि-  
गतौ” आद्यपूर्व । नलोपश्च । १३ निशाया अन्तोऽनेत्यन्यत्र । निशायाम् अभ्यन्ते गम्यते स्मेति रामा-  
श्रम । “अम गतौ” । कः । १४ “आस्पद प्रतिष्ठायाम्” पा० स० ६।१।८।६। इति मुट । १५ का० स०  
४।५।३।५ । १६ आपस्त्यायन्ति सट्टावीमवन्त्यत्र पत्त्यम् । “स्थै शब्दमदृघयोः” ।

वासे साधु ३वस्त्यमिति श्रीभोजः । शीर्यते हिस्यते शीतावत्र शरणम् । आलीयते जनेनाप्राक्षयः । पुसि ।  
विवुः कथयन्ति । पुरम् । कुलम् । सत्त्यायः ।

### खेयं खातं च परिखा

त्रय परिखायाम् । खनु अवदारणे । खन् । खन्यते खेयम् । “आत्खनोरिच्छ” ४ यप्रस्ययो  
नकारस्येकार । “अवर्णाइवर्णे ए” अवर्णेवर्णयोरेकार । खन्यते [स्म] खातम् । परिखायते परिखा । ५  
वप्रं स्याद् लिङ्कुट्टिमम् ।

द्वौ प्राकारे । शुल्कादिक वपन्यत्र वप्रम् । धूल्या कुट्टिम धूलिकुट्टिमम् । बद्भूमिकम् ।  
धूलिकुट्टिमम् ।

### प्राकारः परिधिः सालः

त्रयो दुर्गे । प्रकुर्वन्ति तमिति प्राकार ६ । “अर्कर्तरि च” कारके सशायाम्” घन् । परि १०  
समन्ताद् धीयते परिधिः ७ । इयति तनूकरानि स्वनगरपर्यत शाल सालं८ च ।

### प्रतोली गोपुराकृतिः ॥ १३४ ॥

द्वौ विशिखायाम् । प्रविशन् जन प्रतोल्यते परिमीयतेऽत्र प्रतोली । गोप्यते रक्ष्यते गोपुर  
तस्याकृति गोपुराकृतिः ९ ।

### प्रासादसौधहर्म्याणि

त्रय सधे । प्रासादश्च सौधं च हर्म्यं च प्रासादसौधहर्म्याणि । प्रसीदन्त्यस्मिन्नयनमनासीति  
१५ इतानाद् । “अर्कनिं च कारके सशायाम्” । सुवाया लिंताया भव “सौधम् । चन्द्रकरान् इर्ति  
हर्म्यम्” ११ ।

### निर्वृद्धो मत्तवारणः ।

द्वौ अगाश्रये । निर्वृद्धते निर्वृद्धूः । मत्ता प्रमादिन पतन्ती वार्यन्तेऽनेन मनवारण । २०

### वातायनं मतालम्बम्

द्वौ गवान्ते । वातस्यायन मागो वातायनम् । उभयम् । मतमर्मीष्म आलम्बम् मतालम्बम् ।  
जालम् । जालम् ।

### आलम्ब्यसुखमासनम् ॥ १३५ ॥

राजामवष्टुम्भे द्वौ । आलम्ब्यस्य अवलम्बनस्य मुवम् आलम्ब्यसुखम् । सुखेनास्यते आसनम् । २५

### ममः सवर्णः सज्जातिः सदृशः सदृशः सदृक् ।

### तुल्यः सधर्मस्त्वं तुला कक्षोपमा विधा ॥ १३६ ॥

१ यत्पि मूले वस्त्यशब्दो नास्ति, तयापि पाठभेदात् “निशान्तवस्त्यमदनम्” २१२५।  
इत्यमरे वस्त्यशब्दपाठात् टीकाकृता तदपि विग्रहीतम् । २ का० सू० ४।२।१२। ३ का० सू० १।२।२।  
४ प्रक्रियते इन्ति कर्मणि घन् । इति रामाश्रम । ५ का० सू० ४।५।४। ६ परितो धीयते वेष्ट्यते  
नगरमनेनेति रामाश्रम । ७ दन्त्यपाठे तु स्त्वयते सालः । “स्तल गतौ” । घन् । ८ पुरुषारन्तु गोपुर  
भट्टचित्तम्, तस्याकृतिरिवाकृतिर्यस्यास्तमदशीर्थ । ९ का० सू० ४।२।१। १० सुवाया लित. सोधः ।  
शेषेतुग् । ११ इर्ति मनासि हर्म्यमित्यन्यत्र । प्रासादसौधहर्म्याणामत्राविशेषणोपादानम् । पर तदविशेषां  
न विस्मर्तव्य । तदुक्तम्—“हर्म्यादि धनिना वास प्रामादो देवभूजाम् । सौधोऽङ्गी राजमदनम्”  
२।२।१।०। इत्यमरः ।

१ एकादश समाने । समान मातीति॒ समः । समान सटशो वर्णोऽत्य सवर्ण॑ । समाना शाति॒ अस्य सज्जार्ति॑ । समान इव दश्यते सदृक्ष॑ । “३समानान्ययोश्च” सक्र॒प्रत्यय॑ । शस्य च पत्वम् । “षटो॑ ४ कर्से॑” दश्य कर्त्वम् । “कपयोगे॑” कृ॒ ॥ ५ समान इव दश्यते सदृग्यः । “६समानान्ययोश्च टक्र॒प्रत्यय॑ । अमात्र॑ । कानुबन्धत्वाद्गुणनिषेध॑ । दानुबन्धत्वान्नादौ पञ्चत । “दक्॑ “दश” इति॑ समानस्य सभाव॑ । समान इव दश्यते सदृक्॑ । “७समानान्ययोश्च” क्षिप्॑ । तुलया समितस्तुदयः॑ । समानो धर्मो॑ यस्य नन्धर्म॑ । समान रूप यस्य स सरूपः॑ । “८रूपनामगोत्रस्थानवर्णवयस्सु” इति॑ समानस्य सादेश॑ । तोलन तुला॑ । “९तोलेष्वच्च” अड॒प्रत्यय॑ । ओंकारस्याकारश्च॑ । कपति॑ कक्षा॑ । उपमा॑ । वधा॑ । प्ररब्ध॑ । प्रकाश॑ । प्रतिम॑ । मन्त्रिभः॑ । प्रकार॑ ।

विन्मान्यो विद्यमानश्च गुरुस्थानाम्बुजाननाः॑ ।

१० सिंहादीनि॑ च पर्यायमुपमानेषु योजयेत् ॥ १३७ ॥

योजयेत् जोट्येत् । पर्यायं॑ विशेषणम् उपमानेषु॑ । वित्सम॑ । वित्सवर्णः॑ । वित्स-  
जाति॑ । वित्सदक्षः॑ । वित्सदशः॑ । वित्सदृक्॑ । वित्सम॑ । वित्सरूप॑ । वित्सुल्य॑ । वित्सक्षः॑ ।  
अनेन प्रकारेण मान्यविवरमानगुरुस्थानाम्बुजाननसिहादिशब्दा॑ उपमानेषु॑ प्रयोजनीया॑ ।

व्यपदेशो॑ निभं॑ व्याजः॑ पदं॑ व्यतिकरश्छलम्॑ ।

१५ छङ्ग॑

सम॑ कैतवे॑ व्यपदेशन॑ व्यपदेशः॑ ॥ १ पुसि॑ । निर॑ अतिशयेन माति॑ निभम्॑ ॥ २ व्यजयेत्॑ व्याजः॑ ।  
पुसि॑ । पद्यते॑ गम्यते॑ कैतवेन पदम्॑ । व्यतिकरण॑ व्यतिकरः॑ । छलति॑ छलम्॑ । क्लीबे॑ छादयनि॑  
छाद्य॑ ॥ ३ नान्तम्॑ । क्लीबम्॑ । कैतवम्॑ । कूटम्॑ । उपाधिः॑ । मिपम्॑ । लन्द्यम्॑ ।

वृत्तान्तमुत्प्रेक्षा॑ शब्दमन्यं॑ च निर्णयेत् ॥ १३८ ॥

२० दा॑ वार्तायाम्॑ । वृत्तम्य॑ चरितस्थान्तो॑ वृत्तान्त॑ ॥ ४ उत्प्रेक्षणम॑ उत्प्रेक्षा॑ । वार्ता॑ । प्रवृत्ति॑ । उदन्तः॑ ।

१ अत्र समादय॑ सरूपान्ता॑ नव॑ समाने॑ । तुलाक्षोपमा॑ विधा॑ इति॑ चत्वारम्बुलायामिति॑  
पार्यवयेन॑ वक्तव्येष्पि॑ सदृशाऽभिमायेण॑ तदाह॑ । क्लिच्छिर्भिते॑ पाठः॑ । परन्तु॑ तुलार्थकविधाशब्दोऽत्र युक्त॑ ।  
एव॑ च त्रयोदश॑ इति॑ वक्तव्यम्॑ । अभिधापाठे॑ तु॑ “उपमाऽभिधा॑” इत्यनयोरुपमावाचकन्ये॑ मति॑ “एकादश॑”  
इति॑ सदृच्छुते॑ । २ सकारे॑ परे॑ समानस्य॑ सादेशविधायकवचनाभावान्समान॑ मातीति॑ विग्रह॒धिन्त्य॑ ।  
‘सम॑ वैकलये॑’ समति॑ वैकलव्य॑ करोतीति॑ सम॑ । सम॑: समान्य॑ वैकलव्य॑ करोत्येव॑ । पचाद्यच्च॑ । ३ “कर्मणु॑  
पमान॑ त्वदाद॑ दशष्टक॑ नक्ता॑ च” का० सू० ४।३।३५। अत्र॑ त्रुति॑ । ४ का० सू० ३।३।४।५ का० रू०  
४०।२५६। सू० ६ “समानान्ययोश्चेति॑ वक्तव्यम्॑” इति॑ वार्तिकूलपणोपलम्यते॑ । २।६०। काशिकायाम्॑ ।  
मातन्त्रसन्तुत॑ नैतादशमुपलब्धम् । वृत्तिरूपीदशी॑ काव्य॑ नास्ति॑ । काशिकाया॑ टीकीकृत्वचनसाम्येष्यर्पि॑ प्रत्य-  
पत्वहरणाम्य॑ नास्ति॑ । ७ “दग्धशदृक्षेषु॑ समानस्य॑ स॑” का० सू० ४।३।६५। = का० सू० ४।२।३५।  
त्रुति॑ । ८ “ज्योतिर्जनपदरात्रिनामिनामगोत्ररूपस्थान॑ र्णवयोवचनबन्ध्यु॑” इति॑ पा० सू० ६।३।८५।  
१० वाचनिक॑ नैतत्॑ अतुलोपमाव्यामिति॑ जापितमिति॑ प्रतिभाति॑ । ११ व्यपदिश्यते॑ व्यपदेशोऽतद्वृपम्य॑  
तादूपम् । १२ नि॑ नितरा॑ तदिव॑ भाति॑ निभम॑ इत्यन्यत्र॑ । १३ व्यजन्ति॑ विक्षिपन्ति॑ अनेन॑ व्याजः॑ । “अज॑  
गतिद्वेषण्यो॑” । प्रत् । १४. छूति॑ छुनत्ति॑ वस्तुतन्वमनेनेति॑ वा॑ । छो॑ छोदने॑ । क्ल॑ प्रत्यय॑ । १५. छादते॑  
स्वप्नमनेन॑ छुदम् । मनिन्॑ । हस्वः॑ । “छुद अवारणे॑” । चुगदिः॑ । १६ लक्ष॑ शब्दोऽप्ययम् । १७ वृत्तोऽनुस-  
धानीयो॑ गवेषणीयोऽन्त॑ समाप्तिर्यस्येति॑ रामाश्रमः॑ ।

व्रातः<sup>१</sup> पूर्णः समाजश्च समूहः सन्ततिर्ब्रजः ।  
 अयुहो निकायो निकुरम्बं कदम्बकम् ॥ १३६ ॥  
 ओघः समुदयः सङ्घः मङ्गातः समितिस्तति ।  
 निचयः प्रकरः पड़क्ति:

विशतिस्समूहे : वृणोति छादयति व्रातः । पूज्यते पूज्यते वा पूर्णः ३ सर्वीयते समाजः ४ घर् ।  
 समूहते सम्यग् दौक्यते समूहः । सतन्यते सन्तति । व्रजस्यत्र व्रज । उमयम् । विशेषणे उद्यते व्यूह । ५  
 निचीयते तुमो निकाय । कायश्च । निकोर्यते निकर । समन्ताचिकुरन्ति"वदन्ति (छिन्दित) निकुरम्ब ।  
 कुर्सितम आभरते कदम्बम् । स्वार्थे के कदम्बकम् । द्वा कलावे । उद्यते ओघः ६ "ध्यद्वादीना" हश्च वा ।  
 समुदीयते त्र समुदय ७ । समुदायश्च । सहन्यन्देश्मनवयवा सङ्घ । सहन्यते सघात ।  
 हन्तर्व । इण् गतैः समपूर्वैः । समश्वेता समितिः । स्थिता कि । तनन तति । निचीयते तुमो निचय । १०  
 उच्चय । प्रचय । सत्रय । प्रक्रियते प्रकर । पञ्च विस्तारवचन । पञ्च । उदनुवन्धाना धानुना नलीयो  
 नास्तीति । पञ्चन पट्टक्ति । स्त्रिया कि ।

पश्नां समजो व्रजः ॥ १४० ॥

पश्ना व्रज समूह समज कथ्यते । अज ज्ञेयरो । अन् समपूर्वः । समजन समज । 'मुदोरज  
 पगुपु १०' श्रल् । १५

मर्मापाभ्यामासव्रमभ्यर्ण मन्त्रिधि विदुः ।  
 अविदृं च निकटमवलग्नमनन्तरम् ॥ १४१ ॥

नव समीपे । समानोति समीपम् १ । अ+मुपेत्य चास्यते आभ्यास । घर् । आसद्यते स्म  
 आसन्नम् । अर्द गतो याचने च । अर्द अभिपूर्वः अन्यर्थतिस्म अभ्यरण्ण । निष्ठान्त । "सामीप्युभे" २  
 नेट । द्वाह २ स्य च" दक्षारतकार्योन्नत्वम् । "गृष्णः ३ -धातोर्नकारस्य रात्म । ४ "तवर्गस्य०" निष्ठा- २०  
 नस्य शत्वम् । सविदीयते मन्त्रिधि । अ(व)विटुर्नोर्तीति अविदूरम् । "दुनोतेदीर्पश्च ५ दुनोतेश्च प्रव्ययो  
 भवति दीर्घ । रुदु उपताप । निकर्ति निकटम् । (नि)नान्ति कटोऽस्येति व निकट । कटे वर्पाऽवरण्यां ।  
 अवलग्नि (सम) अवलग्नः । न अन्तरम् अनन्तरम् । सनीदिम् । समर्थादम् । आशान् । सदेशम् । उपक-

१ चेतनाचेतनसर्वसमूहे ब्रातादयो विशतिशब्दा प्रयुज्यन्ते । ओघो वर्गत्र सन्तान इति  
 वशस्यावान्तरवर्गभेद इति डष्टव्य । परन्तु व्यवहारे प्रयोगमाङ्गीर्यमपि दश्यते । २ "व्रस् वर्णो" । आतक्  
 प्रत्यय । अन्यत्र तु व्रत्यते एकमिन् राशो नियम्यते उति मुण्डमिति इति ष्यन्तादत्रतर्पज । ब्रातक्षर्जोर्गिति  
 निर्देशाद् दीर्घ । ३ पूज्यते राशित्वेन मन्यते, पूज्यते जनसुदायात् गशिभेदेन निर्वच्यते वा पूर्ण ।  
 "छापूखडिष्य कित्" । उ० स० १२८। इति पृष्ठ पूज्ञो वा किदृग पत्यय । पूज्यते पृगसायुत्वे वर्जि कुर्तेऽपि  
 स्थानिवत्त्वेन ष्यन्ताल्कुत्व तुसाध्यम् । ४ "अज गतिज्ञेपण्यां" । घर् । ५ "कुरु छेटने । बहु-  
 लकादम्बच् । अस्योन्त्वे निकुरम्ब इत्यपि । ६ आद्यूर्वादूहतेर्वन् । "उह वितके । ७ का० स०  
 ४१६।१७ । ८. सम-उदयूर्वक "इण् गतैः" इण्धान् । अलि समुदय । वर्जि समुदाय । ९. "समुदो-  
 गणप्रशसया," का० स० ४।५।६।४। इति हत्तेऽप्रत्ययो धादेशश्च । १० का० स० ४।५।५।१ । ११. सङ्घता  
 आरोग्यमित्रिति विप्रहे समाप्त । अच्चसासान्ति । "द्व्यन्तरश्वसेम्योऽपि हेतु" दत्तीकार । उरनारादयर्ण-  
 मपि समीपम् । १२. का० स० ४।६।७ । १३. का० स० ४।३।१०।२ । १४. का० स० २।४।४ ।  
 १५ "तवर्गस्य पटवर्गाङ्गर्वम्" का० स० ३।८।५ । १६ का० उ० स० ६।५ ।

एतम् । अन्यग्रम् । सन्क्षिप्तम् । आसन्नम् ।

### जित्या हलिर्हेलं सीरं लाङ्गलम्

पञ्च हले । जि जये । जि । जीयते जित्या । “‘जयतेर्हलौ क्यवेव” क्यप् । “धातोऽस्तोऽन्तः पानुवन्धे ।” “३स्त्रियामादा” । हलति हलि । महद्वल हलिर्हयते । भूमि हलति विलिखति हलम् । ५ सीयते बध्यते वरवया सीरम् । लङ्गति भूमिं गच्छति लाङ्गलम् ।

तत्करो बलः ।

हलपर्यायतः करपर्यायेतु बलभद्रनामानि भवन्ति । जित्याकर । हलिकर । हलकरः । सीरकर । लाङ्गलकरः । हलपाणिः । इत्यादीनि ज्ञातव्यानि ।

रेवतीदयितो नीलवसनः केशवाग्रजः ॥ १४२ ॥

१० त्रयो बलभद्रे । रेवत्या दयितो भर्ता रेवतीदयितः । नील कृष्ण वर्ण वसन यस्य स नीलवसन । केशवस्याग्रज केशवाग्रज । कालिन्दीकर्पण । बल । प्रलम्बन ।

अर्जुनः फालगुनो जिष्णुः श्वेतवाजी कपिध्यजः ।

गाण्डीवी कार्मुकी मध्यमाची मध्यमपाण्डवः ॥ १४३ ॥

वृपसेनः सुनिमोक्तो देवत्यारिः शक्रनन्दनः ।

१५ कण्ठशूली किरीटी च शब्दभेदी धनञ्जयः ॥ १४४ ॥

मसदशार्जने । अर्जुन सर्वं अर्जने । अजति (कीर्तिम्) अर्जुन । “४ऋक्तुवृज्यमिदार्यजिन्य उन् । फल निष्पन्नौ । फलतीति फालगुन ।” “पिशुनफालगुने” एतो उनप्रत्ययान्ता निपायेते । जयतीयेते शीलों जिष्णु । “जिभुवो स्तुक्” शेता वार्जिनो यस्य स श्वेतवाजी । कपिवर्णनरा वजे यस्य स कपिध्यज । गा ज्ञावनीयेवशालो “गाण्डीवा” । कार्मुक वनुरमनीय य कार्मुकी । सध्ये साच्यतीति मध्यमाची । मध्यमश्चासो पाण्डवः मध्यमपाण्डव । युधिष्ठिरमीमयो महदेवनकुलयोमन्यर्जुन, तेन मध्यमगाण्डव रक्ष्यते । वपु सिनोति व नातोनि वृपसेन । सुनिमूच्यते शत्रुमि सुनिमोक्त । दु सध्यवात् । देवत्यारि शत्रुदेवत्यारिः । शक्रयेन्द्रन्य नन्दन शक्रनन्दनः अर्जुन कथ्यते । यमस्य पुत्रो युधिष्ठिर । वायोर्भास । दन्तस्यार्जुन ग्रस्तिनीकुमार्यार्जुनकुलमहदेवो पुत्रो । असत्यमेव तत् । कर्णे शूल विद्यते यस्यासो करणशूली । किरीट शेखर विद्यते यस्यासौ किरीटी । शब्दभेदोऽस्यस्य शब्दभेदी ।

१. का० स० ८० ८२०२६ । अत्र तुर्गवृत्ति । २ का० स० ८११३० । ३ का० स० २१४४६ । ४ का० उ० स० २६० । ५ का० उ० स० २६१ । ‘फल निष्पन्नौ’ उनप्रत्ययो गोप्तव्य । फलति कर्मसिद्धिमयते इत्यर्थ । ६ का० स० ४।८।१८ । ७ गा जीवयतीति बोध्यम । विराट्नगरे पाण्डवानुसन्धानाय भीमकर्तृकगवाकमगोर्जुनद्वारारक्षणस्य महाभारतोन्त्वात् । वस्तुतस्तु गाञ्जीव गाण्डीवमिति अर्जुनधनुषो नाम, तदस्यास्तीति गाञ्जीवी इति मत्वर्थीय इन् । तदुक्त कल्पद्रुकोपे— “गाण्डीवो गाण्डीवोऽस्त्रियाम । गाञ्जीवो गाञ्जीवोऽप्यस्त्री” इति १।५।४।८ मूले गाण्डीवीशव्वस्तु गाण्डी ग्रन्थिरस्यास्तीति गाण्डीवम् । ‘गाण्डवजगात्मज्ञायाम्’ पा० स० ५।८।२।१० । इति मत्वर्थीयो व । तदस्यास्तीति मत्वर्थीय इन् । ८ सध्येन वामपाणिनाः पि सच्चते वाणान् वर्तीति सध्यसाची ।

केचित् शब्दवेदीति पठन्ति इत्यपि स्यात् । जि ज्ये । धनपूर्व । धन जितवान् धनञ्जयः । “नाभिन्”  
त्व । “३नाभ्यन्त०” गुणां । “ए३श्रव” । “हस्वा॑रुपोमांन्तः ।” धनञ्जयेति कवैर्नामाभिधानमपि ज्ञातव्यम् ।  
स कथम्भूत ? शब्दवेदी । अतः” परं कोटपि नास्ति । पाण्डवनाम मिष्ठेण स्वनाम रुथितमस्ति ।

### कुरुकीचकयोर्वैरी वायुपुत्रो वृकोदरः ।

कुरुवैरी । कीचकवैरी । कुरुगत्रु । कीचकशत्रु । कुरुरिपु । कीचकरिपु । अनिलसुत । ५  
पवनात्मज । हयादीनि भीमस्य पर्यायनामानि ज्ञातव्यानि । वृकोऽरण्यःवा तद्रन उटर यस्य स वृकोदर ।

### समवर्ती यमः कालः कृतान्तो मृत्युरन्तकः ॥ १४५ ॥

पड् यमे । सर्वेषु तस्म कृत्य वर्तते समवर्ती । नान्त । गिर्षो मित्रे च सम वर्तते इर्वत वा । यम-  
यति निश्चाति प्रजा यमः । यमलजातव्यादा । क्लवति जन्मन् विनाशहेतुत्तेन काल । कृतोऽन्तो  
विनाशो येन स कृतान्त । प्रियतेज्ञेनेति मृत्यु । “‘भुजिर्डो मुक्त्युको’” । अन्त कर्तोति अन्तक । १०  
शमन । प्रेतवर्ति । पितृपति । कीनाश । वृवस्वत । कालिन्दीसादर । धर्मगत्र । दण्डवतः । हपि ।  
दक्षिणापति । शाद्वदेव ।

### तदात्मजो जातरिपुः कौन्तेयो भरतान्वयः ।

### कौण्ड्यो राजयक्षमातुमो योमवंशो युधिष्ठिरः ॥ १४६ ॥

सम युविष्ठिरे । तस्य धर्मस्यात्मजस्तदात्मज । समवर्तिपृत्र । यमोद्दहः । कृतान्तपोत । १५  
मृत्युनन्दन । अन्तकदारकः । इत्यादीनि युविष्ठिरपर्यायनामानि ज्ञातव्यान । नान्य स्वयोत्रस्य रिपुः  
‘जातरिपुः । कुन्त्या अपव्य पुमान कौन्तेयः । भरतोऽन्वयोऽन्वय भरतान्वयः । कुरोरपत्य  
पुमान कौरव्यः । राजमिन्नरेन्द्रैर्यद्यते पूजयते राजयक्षमा ।’ सर्ववातुम्यो मनू” । राजलक्ष्मा चेति  
त्रिचित्पटन्ति । सोमो वशोऽस्य सोमवंशः । युधिष्ठिरः ।

### रथेतार्जुनो शुचिः रथेतो वलक्षं सितपाणदुर्गम् ।

### शुक्रलावदात धघल पाण्डुः शुभ्रं शशिप्रभम् ॥ १४७ ॥

त्रयोदश श्वेता । रथेतो रथेत । अर्ज्यतेऽर्जुन । जोचर्तीनि शुचिः । शुच शोके ।  
श्यायते रथेत । अवलक्षयति अवलक्ष । वलक्ष । सिनोति वधनाति(मन)सित । पण्डते याति  
मनोऽत्र पाण्डुर । अथवा ‘नगरायुगाण्डुम्यो र १ पाण्डुत्वमस्यास्तीति पाण्डुर । पाण्डुर । शोकति  
मनोऽस्मिन् शुक्रला । शुक गत्वा । अवदायते शोक्यते अवदात । धघलति धघल । पण्डते याति २५

१ “नाभिन् त्रृभृजाज्ञातिरिपित्रिमिसहा सजायाम वा० स० ४।३।४४ । २ का० स०  
३।५।१ । ३ का० स०।१।२।४ का० स० ८।२२ । ५ धनञ्जयाप्य कश्चिद्दुद्देशदेवता  
नामीर्य । ६ युक्तो भीमजठराग्नि, स उटरे यस्तेत्यपि । ७ क्लयनीयस्य स्थाने कालयतीति  
वक्तव्यम् । ८ का० उ० स० २।३।२४ । ९ अन्तङ्गोऽन्यतयति, अन्तवत्यन्तक इति यावत् ।  
१० कोशान्तरप्रमाणान्महाभारतादिकथास्वादात् महाकविव्यवहाराच “अजातरिपु” इतिछेदोऽत्र युन् ।  
न जाता रिपवो यस्येति युधिष्ठिरस्य “अजातशत्रु” इति मना । तदुक्तम्—“अजातशत्रु शल्यारिधर्मपुत्रो  
युधिष्ठिर” । अभिं चित्र० ३।३०८ । ११ का०उ०स० ४।२८ । १२ “श्विता वर्णे” । न्वादि० आत्म०।  
पचाश्च । १३ अर्ज्यते सद्गृह्यते जनै । १४ शुच्युज्जवलवर्तना सर्वसद्ग्रहणीयत्वं लोकानुभवसिद्धम् ।  
शोचति निर्मलीभवति शुच । शुच दीप्ते । इकू । १५ श्वेत् गत्वा । श्यायते गच्छति  
नोलादिवर्यविशुद्धत्वम् । ‘दृश्याभ्यामितन्’ । पा० उ० स० ३।३९३ । इतन् । १६ अवलक्षयति अव-  
लक्षयते वा अन्यवयपिक्ष्या उत्कृष्टवेनेति । वष्टि भासुरिरल्लोप इत्यल्लोपक्षे । १७ अवदायते रम ।  
दैप् शोधने । कर्मणि तः । १८ धुनोऽयशोभम् इति इमचन्द । धावति मनोऽत्र । धातु गतिशुद्धये ।  
कलच्, हस्वश्चेतीति रामाश्रम ।

मनोऽस्मिन् पाण्डु १ । शोभते शुभ्रः । शशिन द्व प्रभा यस्य शशिप्रभम् । गौरः । हरिण ।

### कृष्णं नीलासिंहं कालम्

चत्वार कृष्णो । वर्णान् कर्त्तिं कृष्णः । नीलति नीलम् ३ । उभयम् । न सितम् असितम् ।  
क सुवमालाति कालः । कालयति वा मन ४ काल । मेचकम् । श्वामलम् । श्याम च । पालाशम् ५  
५ हरित् । शिखिकण्ठाभ इति दुर्गः ।

धूमं धूमलिप्रभः ।

विशिष्टं कृष्णो त्रय । धूनोति धूमः । पूनोत्यभिभवति गग धूमः । धूमलश्च । अलि-  
वयना यस्य सोऽलिप्रभ ।

**तमोऽन्धकारं तिमिरं ध्वानं संतमसं तमम् ॥ १४८ ॥**

१० ताम्यति मन्दीपवति चकुरत्र तम । मान्तम् । क्लावे । अन्य द्वाट्य प्रात करोतीति अन्ध-  
कारम् । तिम्यते आच्छायतेनेन तिमिरम् । कान्तारे ध्वन्यते ध्वान्तम् ६ । सम सम्यक् प्रकारेण तमः  
सन्तमसम् । ताम्यतीति तमसित्यदन्तम् । क्लावे । अवनमसम् । अन्धतमसम् । तमिरम् । भूल्याया ।  
भूल्याय । उगम्बरम् ।

**लोहितं गङ्ग माताम् पाटल विशदारुणम् ।**

१६ पृहरन्ते ८ । रोहित जायते शाभात्रु लोहित । रजयते रक्तम् ९ । आताम्यते कट्टद्यन्ते  
सर्णेणु आताम्य । पाटयतीति पाटलः । पाटेगत् । विशीयते विशद् । अ॒च्छ्रुति द्यर्थ-  
(ति वा॑) रुण ।

**पीतं गौरं हरिद्राभम्**

२० हरिद्रारकवर्णं त्रय । पोयते मनोऽनेन पीतम् १० । गते गच्छ्रुति वर्णविशेषं गौरः ११ ।  
तथा च नाममालायाम् १२ । ‘गौरं उवेतेतुरुणो पीते विशुद्ध च द्रुमस्यपि । विशदे’ । हरिद्रावत् आमा  
लुविर्यस्य हरिद्राभम् ।

**पालादां हरितं हरित ॥ १४९ ॥**

हरितवर्णं त्रयः । पलाशस्य वर्णस्याय पालाशः । पलाश इत्याह १३ । ‘रूक्षसे । किशुके  
वर्णं पङ्कशास्याय । हरित्यपि’ । हरिति चित्त हरितम् । हरित् ।

१ पन्यते स्तूयते पाण्डु । ‘पनेदीर्घ्य इति दु । इति हमचन्द्र । २ कर्त्तिं मन इति  
रामाश्रम । गृहेष्वर्ण इति नक । ३. ‘रील वर्णं’ । नाम्युपवेति का० स० कः । ४ कालयति मन  
इत्यन्यत्र । ५ अय पाठोऽत्र न युक्त । ‘पालाश हरित हरित’ इति पदास्य टीकायामग्रे द्रष्टव्यः । ६ कृष्ण-  
मिश्रितलोहिते धूमरूपमलशब्दाविति वैशिष्ट्यार्थ । तदुक्तन—‘धूमरूपमला कृष्णालोहिते’ इत्यमरः । १५१६ ।  
७. कान्ताग्रप्रदेशादिपु तमसोऽविच्छिन्नानिवेशात्तदाह—‘कान्तारे व्यन्यते’ इति । सर्वरोगहरतया व्यन्यते  
ध्वान्तमिति हेमचन्द्र । ८ अव द्रा रक्ते, त्रयो विशदारुणे इति वन्दयम् । विशद च तद्रप्यम्, श्वेत-  
विशिष्टकमिन्यर्थ । तदेव पाटलम् । तदुक्तम्—‘श्वेतरन्तसु पाटल’ इत्यमर । ९ “हह वीजजन्मनि  
प्रादुभवि” । ‘हह रश्चलो वा’ । पा०उ०स०३०३१ । इतीतन्, लत्व च वा । १० रजति स्म रजयते स्म  
वा रन्मित्यन्यत्र । ११ पीयते वर्णान् पीत । ‘पीट पाने’ । दि० इत्यपि । १२.गूरते उद्युद्के मनोऽस्मिन  
गौर । ‘गूरी उद्यमने’ । ऋज्रेन्द्र इत्युणादिस्त्रेण व्युत्पादित । ‘गूयते गौर’ इति हेमचन्द्र । ‘गृह-  
मश्लेषणे । १३ अनेऽम० २१४२५ । १४ शा० क० ५२९ ।

### हरिणी लोहिनी शोणी गौरी श्येनी पिशङ्क्षयपि ।

पठु रक्तवर्णे । “श्रेतैतहरितलोहिते यस्तो न.” अनेन ईप्रत्यये तकारस्य नकारन्च । हरिणी । तथा च हलायुधे—“शुकाभा हरिणी स्मृता ।” हरितः च । रोहित जायते शोभाऽन्नं लोहित । रलयोरेक्यम् । “श्रेतैतहरितलोहिते यस्तो न.” अनेन ईस्तकारस्य च नकार । लोहिनी जाता । हलायुधे—

“जपाकुसुमसकाशा लोहिनी परिकीर्तिंता”

शोणते शोणी । गते गौरः । नदादित्वादीः । गौरी । श्यायते गच्छति श्रिय श्येनी । हलायुधे—“श्येनी कुमुदपत्राभा ।” श्येना च । पेशति पिशङ् । ईप्रत्यये पिशङ्क्षी ।

**मारङ्गी शवरी काली कल्मापी नीलपिञ्जरी ॥१५०॥**

पठु पञ्च वर्णे । सारथति गमयति [ ब्रह्मवर्णान् ] सारङ्गः । ईप्रत्यये सारङ्गी । शवति याति वर्णान् । शवर शवलङ्घन् । ईप्रत्यये शवरी । कालयति काली । कलयति वर्णान् । कल्मापः । इः कल्मापी । नील गन्धे । नीलति नालम् । ईप्रत्यये नीली । पिञ्जति पिञ्जर । १० ईप्रत्यये पिञ्जरी ।

**परागं मधु किञ्जलकं मकरन्दं च कौसुमम् ।**

पञ्च कुमुदरेणो । परं प्रकर्पमग्यते सम्भाव्यते पुष्पेषु परागः । उभयम् । मन्यते सम्भाव्यते पुष्पेषु मधु । उभयम् । कि जलपति किञ्जलकम् । मङ्गयते मङ्गयते पुष्पमनेन मकरन्दम् । १५ कुसुम-रेण कौसुमम् ।

**उपचाराद्रजः पांशुरेणधूलीश्च योजयेत् ॥१५१॥**

चत्वारो धूल्याम् । २ ज रागे । रजत्यनेन रजः । “उविरिजिग्रन्थो यष्वत्” । नाक धाक पशि नाशने । पशयते पांशुः । “१२ वहिरहितलिपशिन्य उण् ।” रीढ़ गतो । रीयते रेणुः । “दामागीवृत्त्यो तुः” । धूयते धूनोति इष्टि वा धूति । उपचारात् पुष्परजः । सुमनःपाणुः । पुष्परेणुः । लतान्तधूति । २० प्रसवरजः । प्रसूनरेणुः । इत्यादोनि पुष्परजो नामानि ज्ञातव्यानि ।

**कलङ्गावद्यमलिनं किञ्जलकं लक्ष्मं लाञ्छनम्**

**निवोधमधमं पङ्कं मलीमममपि त्यजेत् ॥१५२॥**

१ अत्र षट्खीलिङ्गवाचकं तत्तद्वर्णविशिष्टे इति वस्तव्यम्, न तु रक्तवर्णे । तत्तद्वर्ण-मेदा यथा—हरिणी शुकाभा, लोहिनी जपाकुमुदाशा, शांणी कोकनदञ्जवि, गौरी हरिद्राभा, श्येनी कुमुदपत्राभा, पिशङ्क्षी पीतरक्ता । २ “श्रेतैतहरितमग्निरोहिताद् वर्णान्तो न” ह०शा० २।४।३६ । ३ “श्येनी कुमुदपत्राभा शुकाभा हरिणी स्मृता । जपाकुमुदाशा रोहिणी परिकीर्तिंता ।” इति पूर्णं श्लोकः । ३ हलायु० ४।५३ । ४ हला० ४।५३ । ५ हला० ४।५३ । ६. अत्र षट्खीलिङ्गवाचके तत्तद्वर्णविशिष्टे इति वक्तव्यम् । तद्भेदो यथा—सारङ्गीशम्भरीकल्याण्यश्चित्रवर्णा । काली नील्यावसिते । पिञ्जरी पीतरक्ता । ७ अत्र परागकिञ्जलकशब्दौ पुष्परजोवाचकौ, मधुमकरन्दशब्दौ पुष्परसवाचकौ, कौसुम-शब्दमत्तुभवाचकौ, इति विवेक । ८ परागच्छति परमुक्तवर्षमगति वेति विग्रहः सरल । ९. किञ्चिञ्जलति, “जल अपवारणे” । बाहुलकाल । किञ्चिञ्जलति जडीभवति इति त्री० स्वा० । १० मकरमपि वृत्ति कामजनकत्वान्मकरन्द । “दो अवखण्डने” । कः । मकरमपि अन्दति वधनातीति वा । “अदि बन्धने” । कर्मण्यग् । शकन्वादिः । इति रामाश्रम । ११ का०७० स० ४।५९ । १२ का० उ० स० १।३ । १३ का० उ० स००।२।७ ।

दश कलङ्के । कल्यते लक्षणं कलङ्कः<sup>१</sup> । न वर्यं समीचीनम् अवद्यम्<sup>२</sup> । मल्यते धार्यतेऽपयशो-  
उनेन भलिनम् । किं कुर्तित, जल्पति किञ्चल्कम् । लक्षयति परं नात्म् लक्षम् । लाञ्छयतेऽनेन  
साञ्छनम् । निवृथते निबोधम्<sup>३</sup> । न अः पूर्वो धार । न दधातीत्यधमः । “वर्मसीमाग्रीष्माधमाः”<sup>४</sup> ।  
“पञ्चयते पङ्कम् । मलिना कदवेण मस्यते<sup>५</sup> परिमाणीकियते मलीमसः । तं त्यजेत् सत्पुरुष ।

५

जनोदाहरणं कीर्तिं साधुवादं यशो विदुः ।

वर्णं गुणावलि ख्याति

सप्त यशसि । जनाना लोकानामुदाहरणं, जनेन लोकेनोदाहियते वा जनोदाहरणम् । कृत  
सशब्दे । कृत—“चुरादिश्च<sup>६</sup>” इन् । कृतं कारिते इर् । कीर्ति जात । नामिनोर्धाः<sup>७</sup> । कीर्ति जातम् ।  
कीर्तनं कीर्तिः । “कीर्तीषोः क्तिश्च<sup>८</sup>” क्तिप्रत्यय । कारितलोप । त्रिषु व्यक्तनेतु सज्जातीयाना मध्ये  
१० एकव्यञ्जनलोपम् । एकस्तकारो लुप्यते । सिः । रेक । साधूना सत्पुरुषाणा वादः साधुवाद ।  
कुशलो योग्यो हितश्च साधुरुच्यते । यज देवपूजादिषु । इज्यते यशः । “११ यज शिश्च” अस्मादसन्  
प्रत्ययो भवति स च यण्वत् । जस्य शिः । इकार उच्चारणार्थः । वर्णयते साधुजनेन वर्णं । गुणानामवलि  
श्रेणिः गुणावलि । ख्यायते ख्यातिः । ड्लोक । अभिख्या । समाख्या ।

अवधानं तु साहसम् ॥१५३॥

१५

साहसे द्वौ । अवधीयतेऽवधानम् । अवदान च । साहसे<sup>९</sup> साहसम् ।

प्रेष्यादेशनिदेशाज्ञानियोगाः शासनं तथा ।

षडादेशे । प्रेष्यते इति प्रेष्य । आ समन्ताद् दिशतीत्यादेशा<sup>१०</sup> । निदिश्यते निदिशतीति वा  
निदेशा । आजानातीत्याज्ञा<sup>११</sup> । नियुज्यते नियोगा । शास्यते प्रतिपादते शासनम् । शासु  
अनुशिष्टैः ।

२०

सन्देशः प्रिययोः

बीपुरुषयोः मुखवार्ताया सन्देशा । सन्दिशति<sup>१२</sup> “सन्देशः । अमरसिहनाममालायाम्”<sup>१३</sup>—  
“सन्देशवाग्वाचिक स्यात्”<sup>१४</sup>

वार्ता प्रवृत्तिः किंवदन्त्यपि ॥१५४॥

त्रयो नवीनवार्तायाम् । वृत्तिलोकवृत्त विव्यतेऽस्या वार्ता । “१५ प्रज्ञाश्रद्धाऽर्चवृत्तिभ्यो ण”

१ क ब्रह्माणमपि लङ्कयति हीनता गमयतीत्यन्यत्र । २ न वदितु योग्यमित्यवद्य गर्हम् ।  
“अवद्यप्यवयगर्घ्यपणितव्यानिरोधेषु” इति यत् । ३ नात्र प्रमाणान्तरमुपलब्धम् । निवृथयते  
निश्चयेन ज्ञायते कर्लङ्कजनोऽनेनेति करणे घज् । कलङ्किना राजशासनचिह्नितव्यदर्शनात् । ४. का०  
उ० सू० १५३ । ५ पञ्चयते दुखमनेन । पञ्च व्यक्तीकरणे विस्तारे वा । कर्मणि घज् ।  
६ “मसी समी परिमाणे” । पुषि सज्जाया घ. । यदा मलाऽस्यात्सीति “ज्योस्त्नातमिक्षे”  
त्यादिना मत्वर्थीय ईयस् प्रत्यय । टीकोक्तविग्रहश्चिन्त्य । तत्र मलिमस इत्यापतेः । ७. का० सू०  
३।२।१। ८ कीर्तीषोः किश्चेति निर्देशात् कृतं कारिते इर् । ९ “नामिनोर्धाँकुर्चुरोव्यञ्जने”  
का०सू० ३।८।१४ । १० का०सू० ४।५।८६ । ११ का०उ० सू० ४।६० । १२ सहसि बले भव साहसम् ।  
१३ आदेशनम् आदिश्यते वेति विग्रहः । १४ अत्रापि आशायते आज्ञानं वेति विग्रह । १५ सन्दिश्यते  
इति कर्मणि घज् न्याययः । १६ अम० को० १।६।१७ । १७. पा० सू० ५।२।१०।

स्त्रीकलीवे वार्ते च । प्रवर्तते जनोऽनया प्रवृत्तिः । स्त्रियाम् । किं कुत्तित वदत्यत्र किंवदन्ती<sup>१</sup> । वृत्तान्तः । उदन्तः ।

### कठोरं कठिनं स्तब्धं कर्कशं परुषं दृढम् ।

षड् द्वडे । कठति कृच्छेण जीवति कठोर<sup>२</sup> । कठति कठिनः । स्तम्भोति स्म स्तब्धः । कर्कः सोत्रोऽयं धातुः । कर्कति करोति निर्दयत्वं कर्कशः । परुषति कुप्यतीति परुषः<sup>३</sup> । कुप कुष रष रोषे । ५ दृह दृहि वृद्धौ । दृहति स्म दृढः । “परिवृद्धदौ प्रभुवलवतो” । क्रूरः । क्रखट । खरः । चण्डः । निष्ठुरः । जरठः । मूर्तिमत् । मूर्तम् । प्रवृद्धम् । प्रौढम् । एधितम् । सर्वे त्रिषु ।

### अश्लीलं काहलु फलगु

निस्तारे बचसि त्रय । न श्लीयते न श्लिष्यते सता चित्तम् अश्लीलम्<sup>४</sup> । बचनम् । क शिर आ समन्तात् हलति अशोभमान करोतीति काहलम्<sup>५</sup> । लोहलञ्च । लुह सौत्रः । फल निष्पत्तौ । १० फलति फलगुः<sup>६</sup> । “रजुतर्कुर्वत्पुलुशुरिपुपूशुलघव ।

### कोमलं मृदु पेशलम् ॥ १५५ ॥

त्रयः कोमले । कौ पृथिव्या मलते कोमलम्<sup>७</sup> । मृदु त्रोदे । मृदूनातीति मृदु<sup>८</sup> । पिशति पेशलम्<sup>९</sup> । सुकुमारः । मृदुलम् ।

### प्रत्यग्रं साम्प्रतं नव्यं नवं नूतनमग्रिमम् ।

षड् नवीने । प्रत्यग्रति प्रत्यग्रम्<sup>१०</sup> । सम्प्रति भव साम्प्रतम् । नूशते नव्यम्<sup>११</sup> । नौति नवम्<sup>१२</sup> । नूयते नूतनम्<sup>१३</sup> । अग्रे भवम् अग्रिमम्<sup>१४</sup> । “पृथ्वादिभ्य इमन्वा” । अभिनवम् ।

१ कोऽपि वाद । किम्पूर्वाद् वदेरौणादिको भव व्रत्यय । भन्यान्त । गौरादित्वान्डीष् । इति रामाश्रम । २ ‘कठिचकिष्यमोर’ । का० उ० स० ४।३७ । “कठ कृच्छुजीवने” । ३ वष्टि-भागुरिरल्लोपित्यपेरल्लोपे नत्वपस्येति थीकोक्तविग्रहश्चिन्त्य । रामाश्रमस्तु—“पिर्ति पूरयति अल त्रुद्धि करोति । “पृ पालनपूरणयो” । “पूनहि” इत्यादिना उ० स० ४।७५ । उषच् । इत्याह ।” पृष्णति पूरयति पर कोपेनेति हेमचन्दः । ४. का० स० ४।६।९५ । ५ न श्रिय लातीति अश्लोलम् । कपिलकादित्वालत्वम् । इति रामाश्रमः । न श्रीरस्यास्तीति सिध्मादित्वान्मत्वर्थीयो ल । ६ काहलोऽस्तुवागिति हेमचन्द । ७ फलति विशीर्यते इत्यन्यत्र । ८ का० उ० स० १।१। इन्युप्रत्यय गश्च । ९ कौ पृथिव्या मलते धारयति श्रियम् इत्यर्थ । “मल मल्ल धारणे” पचाश्यच् । परमेव कुमल इत्येव सिद्धति । वस्तुतस्तु ‘कोमल’ शब्दस्य सिद्धि-प्रकारान्तरेणैव साधनीया । कौतीति कोमल इति विग्रहोऽभिधानचिन्तामणौ । काभ्यने जैनैः इत्यन्यत्र । १० मृद्रते इति कर्मणि कु-प्रत्ययो न्याययः । ११ पिंशल्येऽस्तेशेन सर्व करोतीति । श्रीणादिकोऽलच् । रामाश्रमस्तु—“पिश समाधौ” पेशन पेश समाहितचित्तता, सोऽस्यास्तीति सिध्मादित्वादलच् इत्याह । पेशलशब्दस्य दक्षार्थो मुख्यः कोमलाथो गौणः । तदुक्तम्—“दक्षे चतुरपेशलपटवः सूत्थान उप्याश्च” इत्यमरः । २।१०।१९ । “दक्षस्तु पेशलः” । इति अभिभ० चिभ० ३।४८ । १२ “अग्र गतो” । ड । प्रतिनवमग्रमस्येति त्रीरस्वामि-रामाश्रमौ । प्रतिगतमग्रमनेनेति हेमचन्दः । १३ ‘गु स्तवने’ । अचो यत् । १४ नूयते नवम् । अदोदप् । एव कर्मणि विग्रहो युक्तः । १५ नवमेव नूतनम् । “नवस्य नूरादेशस्त्वपूतनपूखाश्च प्रत्यया वा० ५।४।३० । इति तनप् प्रत्ययो नूरादेशश्च । इत्यत्र । १६ ‘अग्रादिपश्चादिङ्गमच्’ वा० इति डिमच् । नात्र पृथ्वादिभ्य । इमन्, तस्य भावकर्मणोर्विधानात् पृथ्वादौ पाठाभावाच्च । सत्यपि । अग्रिमन् इत्य-निष्ठरूपापते ।

नूत्नश्च । एवं त्रिषु ।

**पुराणं जठरं जीर्णं प्राक्तनं सुचिरन्तनम् ॥ १५६ ॥**

पञ्च पुरातने । पुरा भवम् पुराणम् । जठ इति सौत्रोऽय धातु । जठतीति जठरम्<sup>१</sup> । जीर्णते जीर्णम् । प्राक् पूर्वं भवम् प्राक्तनम् । मुष्टु चिर भव सुचिरन्तनम् । प्रतनम् । ग्रस्म् ।

५ भो रे हं हो हयामन्ते

एते शब्दा आमन्त्रणार्थे वर्तन्ते । भू सत्तायाम् । भोः<sup>२</sup> । रेषु स्वगतौ । रे । इनु हिसागत्योः । ह । हु दाने । हो । हि गतौ । हे ।

**कश्चित् किञ्चन संशये ।**

सन्देहार्थे<sup>३</sup> द्वो शब्दौ वर्तन्ते । अविशेषाभिधाने चिद्वनशब्दौ अवगतव्यौ । तथा चोत्तम्— १० “किम् सर्वविभवत्यन्ताचिक्षणो” । कश्चित् । कश्चन । कौचित् । कौचन । केचित् । केचन इत्यादि । क्षिया काचित् काचन इत्यादि । कलावे किछित् । किञ्चन । इत्यादि ।

**‘द्राक्षणेऽह्नाय’ मपदि<sup>४</sup>**

शीघ्रार्थे त्रयः शब्दा वर्तन्ते ।

**निषेधे मा न खल्वलम् ॥ १५७ ॥**

६१ निषेधे चत्वार शब्दा वर्तन्ते ।

**उच्चैरुच्चावचं तुङ्मुच्युन्नतमुच्छ्रुतम् ।**

पङ्क दीर्घे । उच्चीयते उच्चैस्तु । अ-यस्यः । उच्चं च अवच च उच्चावचम् । तुजति दैर्घ्यमादते तुङ्म्<sup>५</sup> । उच्चीयते उच्चम् । उन्नमत्युन्नतम्<sup>६</sup> । उच्छ्रुयते उच्छ्रुतम्<sup>७</sup> । प्राणु<sup>८</sup> तालव्यः । उद्ग्रम दीर्घम् । आयत च ।

२० नीचं न्यगातनं कुब्जं नीचं हृस्य नयेत्परम् ॥ १५८ ॥

पङ्क हत्वे । निचीयते नीचम् । न्यन्तीति न्यक् । आतन्यते आतनम्<sup>९</sup> । कौति व्यावि कुब्ज ।

<sup>१</sup> यद्यपि जरठशब्दो जीर्णे प्रसिद्धो जठरशब्दस्तदरे, तथापि क्रचिजठरशब्दोऽपि जीर्णे पठितस्तदाशयेनाह—जठतीति जठरनिति । यटुकम्—“जठरः कुक्षिवृद्धयो” अनेऽ स० ३५५ । <sup>२</sup> भातीति भोस् । डोसप्रत्यय । यथा—भो भार्गव । रिणातीति रे । विच् । यथा रे चेताः । हं हो, इति पृथक्प्रयोधनद्वयसुक्तम् । परन्तु नाटकादौ ‘ह हो’ इत्यवाङ् एव सम्बोधने प्रयुज्यते । ह जुहोतीति हहो । यथा हहो तिष्ठ सखे । हिनोति हे । ‘हि गतो वृद्धाँ’ । विच् । यथा हे हेरम्ब । <sup>३</sup> अविशेषार्थे इत्याशयः । <sup>४</sup> द्राति द्राक् । “द्रा कुत्साया गतौ” । बाहुलकातकः । अकार इत् । स चासौ क्षणो द्राक्षण । <sup>५</sup> आहवनम् आहाय “इनुङ् अपनयते” । धज् । पृष्ठोदरादित्वाद् वस्य य । <sup>६</sup> सम्प्रयते सपदि । “पद गतौ” । इन् । पृष्ठोदरादित्वात्समोऽन्यलोप । <sup>७</sup> उच्छ्रुति दैर्घ्यं पालयतीति । धज् । कुत्वम् । <sup>८</sup> उच्चमति स्म उच्चतम् । <sup>९</sup> उद्दर्घं श्रयते उच्छ्रुतम् । <sup>१०</sup> प्राणुते दैर्घ्यं प्राणु । “असृङ् व्यातो” । <sup>११</sup> निकृष्टामो लक्ष्मीं चिनोतीति । डः । इति रामाश्रम । निम्नमञ्चति, नीचैरस्यस्य वा । अर्च आदित्वादन् । अव्ययाना भमावे दिलोप । <sup>१२</sup> नात्र प्रसाण्य-मुपलब्धम् । <sup>१३</sup>, कौति व्याधिविशेषं ब्रूते सूचयति । कौ पृथिव्याम् उब्जति ऋजूभवति । “उब्ज आर्जवे” । अच् । शक्त्यादि । कु ईषद् उब्जमार्जवमस्य वैति रामाश्रम ।

न्युवजश्च । निर्चीयते नीचैस् । हरति हस्त ।

**अमा सह समं साकं मादै सत्रा सजूः समाः ।**

अष्टौ साधै । अमति अमा । सह हन्ति गच्छति सह । सह मिनोति समम् । सह अक्ति गच्छति साकम् । सह ऋद्धम् साद्धम् । सह त्रायते सत्रा । उपी प्रीतिसेवनयो । जुप् सहपूर्व । सह जुषते सजूः । किंच वेलोपः । सि । व्यञ्जः । सिलोप । समन्ति समा । सह मान्ति वर्तन्ते ऋतवो ५ यामा वा । स्त्रीबहुत्वे ।

**सर्वदा सततं नित्यं शश्वदात्यन्तिकं गदा ॥१५६॥**

पद् नित्ये । सर्वस्मिन् काले सर्वदा । ‘काले कि’ सर्वयदेकान्येभ्य एष दा’ । सतत्यनेम् सततः सन्ततम् च । नियच्छति नित्यम् । श्रमतीति शश्वत् । अत्यन्ते नवमात्यन्तिकम् । सदा इति निपात । सर्वशब्दात्परो दाप्रत्ययो मवति सर्वस्य समावश्च । सर्वस्मिन् काले सदा । मना- १० तनः सदातनम् । त्रिवम् । शाश्वतम् । शाश्वतिकम् । अनश्वरम् । अविनश्वरम् । सर्वे त्रिपु ।

**वियोगं मदनावरथां विग्रहं पल्लकं विदुः ।**

चत्वारो विरहे । वियोगत वियोग । मदनम्य वन्देयस्यावस्था मदनावस्था । विरहण विरहः । मल मल्ल धारणे । मल्लस्थाने चित्तपल्ल इति पठन्ति । पल्लते पल्ल । स्वार्थ क पल्लक ।

**प्रेमाभिलापमालभ्य रागं स्नेहमतः परम् ॥१६०॥**

पञ्च स्नेहे । प्रियम्य भव कर्म वा प्रेमा । प्रिय ॥ स्थिरेति प्रादेश । अभिलाष्यते तुभिलापः । लय श्लेषणकीडनयो । आलभ्यम् ॥ १ ॥ ‘मक्षिहिपवर्गान्ताच्च’ । रञ्ज रागे । रञ्ज् । रञ्जन रागः । भावेष्म् ॥ २ ॥ रञ्जेर्भावकरणयो । पञ्चमलोप । अस्योऽदीर्घ । ‘चंडीं ‘कंगो तुट वानु- वन्धयोः ।’ जकारगाकार । प्र०सि । रेफः । अथवा रञ्जतेऽनेन राग । ‘व्यञ्जनाच्च ॥ ३ ॥’ करणे षष्ठ् । प्र० २० ‘रञ्जेर्भावकरणयो ।’ पञ्चमलोप । अत्योऽदीर्घ । चंडीं कगाविति जकारगकार । स्निहते स्नेहः ।

**संहितं सहितं युक्तं मंपृकं संभृतं युतम् ।**

**मंस्कृतं समवेत च प्राहुगन्तीतमन्वितम् ॥१६१॥**

- १ न माति सह मापिनामनेस्त्वान्मेयता न गच्छति । डप्रत्यय । कप्रत्ययो वा । २ “व्यञ्जनाच्च” का० सू० २१।४६ । ३ “ममी समी परिमाणे” । सम धातु । पचाश्च । सममिति सान्तम- द्ययम् । महार्थकमत्रोक्तम् । तद्भिन्नः समा शब्दो वर्षव चको न तु महार्थवाचक । तदुक्तम्—‘हयनोऽस्त्री शरत्समा.’ इत्यमरः । यतोऽुभिन्नये एत्यथ प्रामाण्य चित्तव्यम् । सह मानित ऋतवो यामामिति विग्रहोऽपि वर्दधाचकसमाशब्द एव सङ्घच्छते । तत्रैव ऋतुना सहमानात् । ४ का० सू० २।६।३४ । ५ ‘तु विस्तारे’ । कः । ‘समो वा हिततयो’ इति नलोप । ६ त्यम्नेत्रुं वै नियमिति वा० निश्वदात्यप् । नियच्छति नियत मवतीत्यर्थ । ७ अत्र शशतीति वक्तु युक्तम् । शश लुप्तगतौ । ब्राहुलकादवत् । ८ सनातनादिशब्दाना विशेषनिध्नाना यथोक्तशश्वदादिशब्दसमानार्थतया टीककृतोक्तिर्किर्तन सङ्घच्छते । ९ मल्लकपल्लकशब्दयोर्विरहार्थत्वे प्रमाणान्तर नोपलब्धम् । १० पा० सू० ६।४।१५७ । इति प्रादेश । इमनिच्चप्रत्यय । पूर्वादित्य इमनिज्ञा इति । ११ आलभ्यशब्दस्य रागार्थे कोपान्तर- सवादो नोपलब्ध । १२ का० सू० ४।२।११ । १३ का० सू० ४।१।६६ । १४ का० सू० ४।६।५६ । १५ का० सू० ४।५।९९ ।

दश सहिते । सहीयते सहितम् । सहितम् ।

“<sup>२</sup>लुम्पेदवश्यमः कृत्ये तु मृकमनसोरपि ।

समो वा हिततयोर्मासस्य पचि युड्घब्रोः॥”

योजनं युक्तम्<sup>३</sup> । पृची सम्पर्के । पृच् । सम्पृणक्ति स्म सम्पृक्तम् । “शत्यर्थकर्मक०<sup>४</sup>” इति  
५ कर्तरि क्तप्रत्ययः । “चजोः कगो<sup>५</sup>”—चत्य क । अधिभ्यते स्म सम्भृतम् । यौतित्यम् युतम् । स क्लियते  
स्म सस्कृतम् । समवेयते स्म समवेतम् । अन्वीयते स्म अन्वीतम् । अनिष्टतम् ।

**वर्त्माऽध्वा सरणिः पन्थाः मार्गः प्रचरसञ्चरौ ।**

सप्त मार्गे । वर्तन्ते प्रतिपद्यन्ते जना येन तत् वर्त्म । नान्तम् । “<sup>६</sup>सर्वधातुभ्यो मन्” । गच्छति  
अतति चलति अनेन नान्तोऽध्वा<sup>७</sup> । सरत्यनया सरणि । दन्ततालव्यः । सुतिश्चास्त्रियाम् । द्वौ ।  
१० पतन्ति गच्छति अनेन पन्था<sup>८</sup> । नान्त । इन्तोऽपि । पथः । पथ । पथान । पन्थ इत्यपि । एते पुंसि ।  
मार्जनं मार्गयन्त्यनेन वा मार्गः<sup>९</sup> । पुंसि । प्रकरेण चरत्यनेति प्रचरः । सञ्चरत्यनेति सञ्चरः ।  
पद्धतिः । एकपदी । वर्तनी । अयनम् । पदवी । पद्या । निगम ।

**त्रिमार्गनामगा गङ्गा**

मार्गपूर्वं त्रिशब्दे प्रयुज्यमाने गङ्गानामानि भवन्ति । त्रिवर्मा । व्यध्वा । त्रिसरणि । त्रिपथा ।

१५ त्रिपचरा । त्रिसङ्करा ।

**घोपो गोमण्डलं व्रजः ॥१६२॥**

त्रयो गवा स्थाने । घोषन्ते <sup>१०</sup>गावोऽत्र घोप । गवा मण्डलम् गोमण्डलम् । गावो ।  
ब्रजन्त्यत्र व्रजः । गोकुलम् । गोङ्गम् ।

**शृङ्गो द्वितीर्नाथहरिस्तिर्यक्च शृङ्गिगणः ।**

२० पञ्च महिषादिके । पर श्रुणाति हिनस्तीति शृङ्ग<sup>११</sup> (म) । त्रितु । हृष्ट । हरणे । हृ द्विति-  
पूर्व । द्विति चर्मप्रसेवक जलभाण्ड हरति द्वितीरि । “हरते<sup>१२</sup> तिनाथयोः<sup>१३</sup> पशौ” इत्यत्य, ।  
नाम्यन्तगुणः । नाथ स्वामिन हरतीति <sup>१४</sup>नाथहरि । “हरते<sup>१५</sup> तिनाथयोः पशो” । तिरोऽनुच्चयतीति

१ सहीयते इति विग्रहो न युक्त । सम्पूर्वस्य हाकस्त्यागार्थक्त्वात्प्रस्तुतार्थप्रतीते ।  
अतः सन्धीयते स्म सहितम् । सम्पूर्वाद्यात्रः क्लप्रत्यये धात्री हिरिति ह्यादेशः । २ ६।१।१४४  
का० स० । ३ युज्यते स्म युक्तम् । ४ का० स० ४।६।४० । ५. का० स० ४।६।५६ । ६ का० उ०  
स० ४।२८ । ७ अतति सन्तन गच्छति जनांत्र अध्वा । “अत सातत्यगमने” । “वनिस्तर्य  
षः” का० उ० स० ६।५० । इति वनिप्रत्ययः तकारस्य धकारश । “अति बल पथिकानाम् । अनेर्ध  
श्रेति कनिपृ धश्चान्तादेश” । इति रामाश्रम । ८. “पल्तु पतने” । पतेस्थश्रेतीति थोऽन्तादेशश्रेति  
ग्रन्थाशयः । पथन्तेऽनेन । “पथे गतौ” । पथन्तेऽनेन । “पथे गतौ” । पथिमथिम्यामिनि । इति  
रामाश्रम । ९ मृज्यते विनृणीकियन पादै । मृज् शुद्धा॒ वृद्धि॑ । कुत्वं च । मार्यते  
इति वा । “मार्ग अन्वेषणे” । १० वासन्ते शब्दायन्ते इत्यर्थ, “वासू शब्द” । ११ “शृङ्गशृङ्गाऽङ्गानि”  
का० उ० स० ४।४।४८ । “शृ हिसायाम्” । अङ्गप्रत्यये निषणः । शृङ्ग गवादीना विषाणमिति तत्रैव  
दुर्गः । तत् शृङ्गमस्यास्तीति अश्च आदिन्योऽन् । एव सति महिषादिसज्ञा सगच्छते । अजभावे विषाण-  
मेवार्थ स्यात् । १२ का० स० ४।३।२६ । १३. नाथ नासारञ्जुं हरतीत्यन्तयत्र ।

तयञ्चः<sup>१</sup> । शृणातीति शङ्कम् । “शङ्कभूताङ्गानि” एतेऽङ्गप्रत्ययान्ता निपात्यन्ते । शङ्कानि विद्यन्ते येषा ते शृक्षिण ।

### गौश्चतुष्पातपशुः

त्रयोऽ गवि । पूजा गच्छतीति गौः । चत्वार पादा यस्यासौ चतुष्पात् । स्पश इति सौत्रो धातु । स्पशते [ बाधते ] इति पशु । <sup>३</sup>अपश्चादयः—“अगद्यदुष्टुष्टुहरिमितदुशतदुशकृधनुम् ५ युपशुदेवयुजटायुक्तमायुमृगयवः” एते शब्दा कुप्रत्ययान्ता निपात्यन्ते ।

तत्र महिषी नाम देहिका ॥१६३॥

द्वौ महिष्याम् । तत्र तस्मिन् मव्यते <sup>४</sup> महिप । नदादित्यादी । महिषी । दिव्यते उपचीयते दुर्घेन देहिका<sup>५</sup> ।

कृती नदीष्णो निष्णात् कुशली निपुणः पदुः ।

१०

क्षुण्णः प्रवीणः प्रगल्भः कोविदश्च विशारदः ॥१६४॥

एकादश कुशले । प्रशस्त कृत कर्मस्य कृती । नथा स्नातीति नदीष्ण । “निनदीस्यो<sup>६</sup> स्नातै कौशले” इति पत्वम् । नितरा स्नाति स्म शुचित्वमानोति स्म निष्णात् । कुस्तित श्यति कुशल । अथवा कुशान् लाति कुशलः । निपुणीति निपुणः । शोभनकर्मत्वात् । पटति जानातीति पदुः । क्षुण्णति स्म क्षुण्ण । क्षुदिर् सम्पेषणे । प्रकृष्टा वीणात्य प्रवीणः इति मुख्यार्थं परित्यज्य १५ निपुणे रुठा । तदाहुः-

“निरुडा लक्षणा कैश्चित्सामर्थ्योद्दिभिवानवत् ।

क्रियतेऽव्यतनै कैश्चित्कैश्चिन्नैव त्वशक्तिः ॥”

प्रगल्भते प्रगल्भ । गल्भ धार्षयेण । को वैति तदभिप्रायमिति निरुक्त्या कवते कोविदः<sup>८</sup> । विशेषेण पाप शृणति पिशारद<sup>९</sup> । क्षेत्रज्ञः । कृतहस्त । द्रुतमुख । कृतकर्मा । दक्षः । शिक्षित । २०

### विदग्धश्चतुरः

द्वौ चतुरे । विद्यते <sup>१०</sup>विदग्धः । पुरुषार्थान् चतते याचते चतुर ।

धूर्तश्चादुकृत् कितवः शठः ।

१ “तिर्यञ्च” इत्यकारान्तपाठश्चिन्त्य । वप्रत्ययान्तेऽन्ततावेव “तिरसस्तिर्यलोपे” इति तिर्यञ्चेश इति चकारान्तस्यैव युक्तत्वम् । चकारान्तत्वै चाप्ताकरणादे एकाक्षरोनन्तवेन मूले छन्दोमङ्गलश्च । न चाकारान्तस्तिर्यञ्चशब्द केनाऽयन्यकोषकरेण पश्वर्वेऽभिमत । तदुक्तम्—‘पशुतिर्यञ्चरि’ श्र० चि० ४२८१ । २ सामान्यविशेषार्थत्वादेषा पर्याप्त्यवाभावात्वयो गवीति पाठशिच्चन्त्य । गोशब्द पशुविशेष बलीवर्ददै । चतुष्पातपृष्पशब्दयो र्षव्याप्त्यायत्वमिति विवेकः । ३. का० उ० स० ११५ । ४ “महिङ् वृद्धो” । महते वर्धते वा विशालकायत्वात् । आ॒णादिकृष्ण॑ । आगमशास्त्रस्यानित्यत्वान् नुम् । इत्यन्यत्र । ५ नात्र कोषान्तरसवाद । ६ पा० स० ८३८९ । ७ अस्य पूर्वार्थ ध्वन्यालोकलोचने १६ कारिकाटीकायामेवमुपलभ्यते “निरुडालक्षणः काश्चित्सामर्थ्योद्दिभिवानवत्” इति । उत्तरार्थस्तु न समुपगत । ८ कौति प्रतिपादयति धर्मादि कौविदः । कुशतोर्विच् । वैतीति विद । हयुधेति क । कोविदः । अथवा कवि वैदे विदा यस्येत रामाश्रमः । ९ विशेषेण शारदोऽवृष्ट । प्रत्यग्रो वा विशारद । इति हेमचन्द्रः । विशिष्टो विपरीतो वा शारदः इति रामा० । १० विशेषेण मैर्वन्चित दद्विते स्म विदग्धः ।

चत्वारो धूर्वे । धूर्वति स्म हिनस्ति म्म सदाचार धूर्त् । चाटु करोतीति चाटुकृत् । कितबोऽस्त्वयेति कितव्य । शठयतीति शठः । दण्डाजिनक । कुहक । कापंटिक । जालिक । कौसु  
तिकः । व्यञ्जक । मायावी । मायी ।

### कापि नागरिको झेयः

५ कापि कुनापि झेय जातव्य । नगरे भवो नागरिक ॥

**गोत्रसज्जाङ्कनाम तत् ॥१६५॥**

चत्वारो नाभिन । गवा वाण्या स्वाचारेण त्रायते रक्षति पालयति गोत्रम् । मजान सज्जा ।  
अङ्ग च नाम च सपाहारत्वादेकवचनम । अङ्गयने लक्ष्यने अङ्गम् । नमनम नाम ।

**मुग्धो मूढो जडो नेडो मूर्खश्च कद्वदः ।**

१० सप्त मूर्वे । वर्मकायेषु मुहूर्ति सशय प्रानतीति मुग्ध । मुहूर्ति स्म मृढ ।  
गन्यर्थस्यादिना कः । हो ट ॥ १ ॥ “वर्मणो टं दो लोप० । तिः । रेफ । जडति न पुण्य गच्छन्ति ॥”  
जडः । जालमश्च । न ईङ्गयने न स्त्रयते केनापि नेड । मूटु बन्धने । सूयते मूकः । २ मूकादय—“मूक्यूक्-  
यन्नकपृथुक्वृक्षुकभूकाः” एते कप्रशयान्ता निपात्यते । मुहूर्ति कायेषु मूर्खः । “मुहू-  
मूर्खः” । कुतिसत वदति कद्वदः । विवेयः । वालिशः । वाडिशः । वाल । ३ “वद्वर । मलि ॥” ।  
१५ ४ नालीक । पणु ।

**स देवानां प्रियोऽग्राह्णो मन्दः**

त्रयो मन्दः । देवानां प्रियः ॥ २ ॥ ग्रथि (निथ)ल इत्यर्थः । न प्राज्ञ अप्राज्ञः । कार्येषु मन्दते  
स्वपित्तावेति मन्द ।

१ कुसुत्या चरतीति कोसुतिक । तेन चरतीति ठक् । २ धूर्तसामान्यार्थ इत्यर्थ ।  
३ वचसा आचारेण च स्वरूप रुप रक्षयने । नामाऽपि स्वानुरूपाचारवचोन्यामानम् प्रतिश्व-  
रयनि । रामाश्रमस्तुदग्यूने शब्दयते उच्चार्यते इति व्युत्पन्नाह । “गुदू शब्दे” । ४ तदुक्तम्—  
“मजा स्वाच्छेतना नाम इत्ताद्यार्थसूचना” इति । अम० को ३।३।३३ । ५ अङ्गक्यते नेनेति शेषः ।  
नामा जनोऽङ्गितो भवति । ६ नमन नामेत्यसङ्कृतम् । भावे घनि प्रणामाथक दन्त्यनामशब्दसाङ्कुवापत्तेः ।  
अतः भा अन्यासे” भ्नायते उन्त्यते उभितीयतु योऽनेनेति विग्रहो न्याय । नामन् सीमन् इति निपा-  
तित । ७ अत्र “मुहार्दीना वा” का० सू० २।३।४६ । इति तकारस्य धकारः । ८. “तवर्गस्य षट्कर्गा-  
द्वृग्” का० सू० ३।८।५ । इति धस्य द । ९ “डं टलोपोदीर्घश्चोपधाया.” । का० सू० ३।८।६ । इति  
दलोपो दीर्घश्च । १० जलति तीव्रो न भवति । डलयोरैक्ये जड इति हृमचन्द्रः । ११ नेडशब्द, कोषा-  
न्तरे नोपलभ्यते । एडमूकशब्दोऽवडमूकशब्दो वा वाक्मुतिवर्जितार्थे लभ्यते । तदुक्तम्—“एडमूक्तु  
वम्तु श्रोतुमशिक्षिते” इति । अम० को० ३।१।३८ । “एडमूकौ त्वावाकश्रुतो” अभिं चिं ३।१२ ।  
अतोऽत्रापि अनेडमूक इति पाठ । सम्भाव्यते । जडविशेषवाचकत्वेऽपि तस्य सामान्याभिप्रायेण जडे  
प्रयोगः अनेडशब्दो वा विधिरार्थः सामान्याभिप्रायेण प्रयोग । १२. का० उ० सू० २।५८ । १३  
का० उ० सू० ४।१७ । १४ नात्र प्रमाणान्तरमुपलब्धम् । १५ अत्रापि नान्यप्रमाणम् । १६ अत्राऽने-  
कार्यसंदर्भः ३।५।४ । प्रमाणम् । तदुक्तम्-नालीकोऽज्ञे शरे सन्धे नालीकं पञ्चनन्दने” इति । १७  
“देवानां प्रिय इति च मूर्वे” वा० ३।३।२१ । “षष्ठ्या अलुक्” इति पा० सूत्रे ।

धीनामवर्जितः ॥ १६६ ॥

धीवर्जित । त्रुद्धिवर्जित । प्रतिभावर्जित । प्रशावर्जितः । मनीषावर्जितः । विषणावर्जित ।  
मतिवर्जितः । सख्यावर्जित । हत्यादीनि मूर्खनामानि भवन्ति ।

**षाष्ठिकः कलमः शालिर्वीहिः स्तम्बकरिस्तथा ।**

चत्वारः शालिभेदे । षष्ठिरात्रेण पञ्चन्ते षाष्ठिका<sup>१</sup> । षष्ठिदिवैरुत्पन्ना हत्यर्थः । ५  
कलयति पुष्टिमनेन कलमः । शालते धान्येषु शालि । अथवा सहालिना भ्रमरेण युतः सालि । वर्हति  
वर्षते धीहिः ।<sup>२</sup> स्तम्बकरि ।

वत्सः शकृत्करिजीतः षोडन् षड्दशनः स्मृतः ॥ १६७ ॥

चत्वारी वत्से । मातरमभीक्षण वदति वत्सं । शकृत् करोतीति शकृत्करिः । (इ) । “स्तम्ब-  
३ शकृत्करिति” वीहिवत्सयोस्पत्सख्यानादिन । षड् दन्ता यस्य स षोडन् । “समासे दन्तदशासु<sup>१०</sup>  
षष्ठ उत्त दधोऽद्धौ” षट् दशनाः यस्य स षट्दशनः ।

**शौण्डीरो गर्वितः स्तब्धो मानी चाहंयुरुद्धतः ।  
उद्ग्रीव उद्ग्रो दृपः ।**

नव गर्विते । शौण्डतीति शौण्डीर । “कृशौण्डम्भ द्वैर्” । गवोऽहंकार संजातोऽस्य  
गर्वित । तारकितादिदर्शनात्सजाते इत्येति इत्यच् । स्तम्बते स्म स्तब्धः । मान पूजादिलक्षणो गवो विद्यते<sup>१५</sup>  
अस्य मानी । अहम् अहकारोऽस्त्यस्य अहयु । “उर्णाऽहशुभ्यो युः” । उद्धन्यते रूपेण उद्धतः<sup>१६</sup> । उद्  
ऊर्ध्वा ग्रीवा यस्य स उद्ग्रीवः । उद्ग्ररति गर्वेणान्यम् उद्ग्र । दृप्ते दृपः ।

नीचश्च पिशुनोऽधमः ॥ १६८ ॥

त्रयो दुर्जने । नितरा पाप चिनोति नीच<sup>१</sup> । मैत्री पिशति मैत्रौ पेशयति वा पिशुनः<sup>२</sup> । तालव्य ।  
पिनष्टि वा पिशुनः । “० पिशुनफाल्युनौ” नज्पूर्वो धात्र् । न दधातीत्यधमः । “१० व्र्मसीमाग्रीष्मा-<sup>२०</sup>  
धमा” । दुर्जन । क्षुद्र । कर्णजप । दोषग्राही । द्विजिह ।

**चौरैकागारिकस्तेनास्तस्करः प्रतिरोधकः ।**

**निशाचरो गूढनरो हेरिकः प्रणिधिश्च सः ॥ १६९ ॥**

“नव चौरे । चौरयतीति चोरः । स्वार्थे उणि चौरश्च । एकागारं प्रयोजनमस्येत्यैकागारिकः ।

१ “षष्ठिकाः पष्टिरात्रेण पञ्चन्ते” पा० ५।१।९० । इति कन् प्रत्ययो रात्रशब्दलोपश्च ।  
२ स्तम्ब करोतीति, स्तम्बकरि । “इः स्तम्बशक्तोः” । का० स० ४।३।२५ । इति कुम इप्रत्यय । ३  
का० स० ४।३।२५ । ४ का० उ० स० ३।४८ । ५ “उर्णाऽहशुभ्यो युः” इति है० श० ७।२।१७ । ६.  
उत्कष्ट हन्ति गच्छति हिन्तित वा० उद्धत इति हेमचन्द्रः । ७ हस्तवर्णे तु शब्दो गतः । तत्र न्यज्ञतीति  
चिप्रह उक्तः । अत्र पिशुनार्थानुरोधेन विप्रहभेदः । निष्ठव्यकाच्चिनोतेर्वाद्वृलकाढङ्गः । उपसर्गदीर्घश्च ।  
अन्यत्र तु निकृष्टमञ्चतीति विप्रहः । ८ पिशव्येकदेशेन दूनयति “क्षुधिपिशिमिथ्यः कित्” उ० स०  
३।५।१। इन्द्रुनन् । पिशुनयति अपिशुनति वा । “अपिशयति खण्डयतीति भोजः” इति हेमचन्द्रः ।  
९ का० उ० स० २।६।१ । १०. का० उ० स० १।५।६ । ११. चौरादयो निशाचरान्ताः षट् चौरे । गूढन-  
रादयः प्रणिध्यन्तास्त्वयो गुप्तचरे । इति पाठ उचितः । तदुक्तम्-“हेरिको गूढपुरुषः । प्रणिधिः”-  
अभिं० चि० ३।३।६।७ ।

स्तेनयति स्यायति वा स्तेन.<sup>१</sup> । उभयम् । तस्यति परद्रव्य क्वयं नयति तरकर । “तसे,<sup>२</sup> करः” । अथवा कृञ्ज तत्पूर्व । तत्करोतीति तत्करः<sup>३</sup> । तदाच्यृ । नाभ्यन्तगुणः । रुदित्वात्स्य सकारः । प्रतिक्षणद्वि  
मागं प्रतिरोधकः । निशा चरतीति निशाचरः । गृदश्चासौ नरः गृदनरः । हिनोति परराष्ट्र गन्छति  
हैरिकः । प्रकर्णेण नितरां गुप्तो धीयते ध्रियते वा प्रणिधि । दस्युः<sup>४</sup> । परास्कन्दी । मलिम्लुचः ।  
५ मोषक । प्रतिमोषकः ।

### प्रस्तरोपलपाषाणदृषद्वातुः शिला घनः ।

प्रस्तुणात्याच्छादयति “प्रस्तर । काठिन्यमुपलाति उपलम् । उभयम् । पिनष्टि सर्वे  
०पाषाणः । पाषाणश्च । दणाति चूर्णयति द्रियते आद्रियते वा कार्यर्थ दृषत् । ख्रियाम् । दधाति धातु ।  
शिनोति तनूकरोति ०शिला । शिनी च<sup>११</sup> । ख्रियाम् । हन्यते १२घन । अशमन् । ग्रावत् । पुलकश्च<sup>१३</sup> ।

१०

### तत्र जातमयो लोहम्

द्वौ लोहे । तत्र तस्मिन् पाषाणे जातम् उद्भवम् तत्रजातम् । प्रस्तरोद्भव । उपलोद्भवः ।  
धातुद्भव । दृषदुद्भव । शिलोद्भवः । घनोद्भवः । इत्यादि लोहनामानि भवन्ति । अयते सर्वविकार  
सान्तम् अय । लुनाति सर्वे लोहम् ।

शातकुम्भं नयेत्परम् ॥ १७० ॥

१५

तत्र पाषाणे उद्भवानि सुवर्णनामानि भवन्ति ।

### क्षामं शान्तं कृशं क्षीणं हीनं जीर्णं च वैरिणाम् । शीणविसानं दूनं च

नव कृशे । क्षायति स्म क्षामम् । शाम्यति स्मशान्तम् । कृशम् । क्षीणम् । हीनम् ।

१ “स्तेन चौर्णे” । चुरादिः । पचाद्यच् । २ का० उ० स० ६।३ । ३ “तदाद्याद्यन्तानन्त-  
कारबहुआहर्दिवाविभानिशाप्रभाभाश्चिक्रक्तृनान्दीकिलिपिलिविचलिभक्तिचेतजङ्घाधन्वरहःसद्ग्र्यासु च”  
का० स० ४।३।२।३ । इति कृत्तप्रत्ययः । ४ दस्युप्रभृतयः प्रतिमोषकान्ताश्चौरपर्याप्ता न तु  
गुप्तचरपर्याप्ता । गुप्तचरपर्याप्ता-यथार्हवर्णः । अगर्सर्प । मन्त्रविद । चरः । वार्तायन । स्पशः ।  
चारः । ५ “तत्त्वं शाच्छादने” । पचाद्यच् । ६ अथवा पलतीति पलः । ओः शम्भो पलो वोपल ।  
७ “पिण्डू सञ्चूर्णने” । बाहुलकादानच् । पूरोदारादित्वादिकारस्याकार । “पष बाधे ग्रन्थे च” ।  
इत्यत्रीति घञ् । पषत्यनेतेति । अणतीत्यण । “अण शब्दे” । अच् । पाषश्चासावणश्चेति विग्रहोऽप्य  
न्यत्र द्रष्टव्य । ८. “दणाते पुग् हस्तश्चे” ति सातुः । ९. “धातुलु गैरिकम्” अभिं० चिं० । “धातुर्मन-  
शिलाद्यद्रेगैरिकन्तु विशेषत” अभ० को० । इत्यादिकोपग्रामाणत सामान्यप्रस्तरपर्याप्तेऽस्य पाठोऽयुक्त ।  
१०. शिनोतीति तालव्यशिधातुरुं कचिदुपलभ्यते । “शो तत्करणे” । तस्य शयतीति रूपम् । तनूकरो-  
तीत्यर्थ । तत् शिलेति निपातो बाहुलकादैणादिकायेन समायाति । रामाश्रमादिव्युपत्तिकारैस्तु “शिल  
उञ्ज्ञे” शिलतीति शिला । इगुप्तेति क इत्युक्तम् । तत्रान्तरतम्यं मुवीभिविचारणीयम् । १' उदुम्बरश्चाय  
शिली शिला चापि शिलि स्मृत । इति कल्पद्रुकोषवाक्यमत्रोपोद्वलकम् । १२ “मूर्तौ घनिश्च” का० स०  
४।५।५।०। हन्तेरत्र घनादेशश्च । १३. तदुकतम्—“पुलक कुमिमेदे स्यान्मणिदोषे शिलान्तरे । गजान्पिण्डे  
रोमाञ्जे गल्वर्कैरितालयोः ।” चिं० को० का० व० ११६ ।

जीर्णते स्म जीर्णम् । शीर्णते स्म जीर्णम् । अवस्थते अवसानम्<sup>१</sup> । दूरते स्म दूरं च । हे राजेन्द्र,  
तव वैरिणा शत्रुणा भवतु इति प्रयोजनीयम् ।

धैर्यं शौर्यं च पौरुषे ॥१७१॥

त्रयः<sup>२</sup> पौरुषे । धीरस्य भावो धैर्यम् । शूरस्य भावः जौर्यम् । पुरुषस्य भावः पौरुषम् ।  
युष्माकं भवतु इत्येष्याहार्थम् ।

५

क्षिप्राशुमङ्गवरं शीघ्रं सहसा झटिति द्रुतम् ।  
तूर्णं जवः स्यदो रंहो रयो वेगस्तरो लघुः ॥१७२॥

षोडश<sup>३</sup> वेगे । क्षिपति<sup>४</sup> निरस्यति क्षिप्रम् । रक्त्रत्यय उणादौ ज्ञातव्य । अशुन्ते आशु ।  
कृष्णागाजीति उण् । मञ्जति महति वा मञ्ज्ञुः<sup>५</sup> । इतर्ति मान्तमव्ययम् अरम् । अदन्त च अरम् । शेते  
कार्ये शीघ्र (शिङ्ग) ति व्याप्तोति वा शीघ्रम् । सहते सहसाः<sup>६</sup> । अव्ययम् । भट्टति सधातीभवति<sup>७</sup>  
इदन्तमव्ययम् । झटिति<sup>८</sup> । द्रवते स्म द्रुतम् । त्वरते स्म तूर्णम् । जबन जवः । जु गतौ । स्यन्दते  
स्यद्वः । “स्यदो जव<sup>९</sup>” इति साधुः । रहयत्यनेन रहः । रयते रोणाति वा उनेन रयः । वीय (विज्य) ते  
वेगः । तरत्यनेन तरः । ““सर्ववातुभ्योऽसुन्” । लङ्घते भूमि लघुः । स वेगः । गतिवचनो जवो धर्म-  
वचना आशुशीघ्रादय इत्यर्थमेदः ।

सदागतिप्रस्तावादाह—

१५

साधीयोऽत्यर्थपत्यन्तं नितान्तं सुष्टु वै भृशम् ।

सत भूरो । साधुभ्यो हित साधोय<sup>१०</sup> । ईयम् । अतिकान्तोऽथ वेला मात्राम् अनं च  
अत्यर्थम् । अत्यन्तम् । अतिवेलम् । अतिमात्र च । निताम्यति स्म नितान्तम् । सुष्टौति सुष्टु ।

१. अचावसानभिन्ना अष्टावपि शब्दा विशेष्यनिधानात्मेन कुटुम्बमिति विशेषमध्याहार्य हे  
राजेन्द्र तव वैरिणा कुटुम्ब द्वाम भवतु । एव शान्त कृशमित्यादपि योज्यम् । अवसानशब्दस्य भावल्य-  
दन्तत्वात् तव वैरिणामवसान नाशो भवत्विति विवेक । अवस्थते उवातानमिति टीकोक्तविग्रहस्वसङ्गतः ।  
अवपूर्वस्य “बोऽुन्त कर्मणि” इत्यस्य भावलिति अवसीयते इति रूपम्, नववस्थते इति । कर्त्तवि लटि दिवादौ  
अवस्थतीति परस्पैषदेव । नापि कर्त्तान्तोऽुवातानशब्द । क्तप्रयये “अवसिति” इति रूपस्यैव सर्वसमत-  
त्वात् । तस्मादवसायतेऽवसादो वा अवसानमिति विग्रहो युक्तः । २. कोषान्तरप्रमाणतो व्यवहाराच  
धैर्यादिशब्दाना परस्परकर्मभेदात्पर्यायानहन्त्वेऽपि वलसामान्यविवद्या व्रयः पौरुषे इत्युक्तम् । ३. गतिव-  
चनो जवो धर्मवचना आशुशीघ्रादय इत्यर्थमेदस्य वक्ष्यामाणत्वात् त्विपादयस्त्रूणैता नव शीघ्रायें,  
जवादयो लघ्वन्तास्तस वेगायें इति सुवचम् । “द्राक् चण्डेहाय भट्टिति” एतत्सहैवास्य शीघ्रार्थतया पाठे  
कर्त्तव्येऽपि पृथगस्य पाठो झटितिशब्दपुनरुक्तिश्च दीप । ४. क्षिपति विलम्बमिति शेषः । ५. “दु मस्तो  
शुद्धौ” । बाहुलकात्सु । महिनशोरिति तुम् । स्वोरिति सलोपाः । मञ्जति कालाल्पत्रै मञ्ज्ञु । ६. “वह  
मर्त्यो । असा प्रत्ययः यदा सहस्यति । “बोऽन्तकर्मणि” । आप्रत्ययो छित् । विभक्तयन्तप्रतिरूपकमाका-  
रान्तमव्ययम् ! उदाहरणम्—“सहसा विदधीत न कियामित्यादि” । ७. “झट सङ्घाते” । श्रीणादिक  
इतिः । ८. का० स० भ११४५ । स्यन्देशं न लोपो दीर्घभावश्च । स्यन्दनं स्यद इति भावविग्रहो  
न्यायः । ९. “ओ विजी भयचलनयोः” । १०. का० उ० स० ४५६ । ११. अतिशयेन साधु वाठ वा  
साधीय इति । साधुभ्यो हित इति टीकोक्तविग्रहतु न सङ्घच्छते । अतिशयायें ईयसो विधानात् । साधीय  
इति मूलोकपदस्य झीबत्वेन हित इति पुष्पिग्रहोऽपि तथैव ।

‘अपद्वादयः—अपद्व दुष्टु भुष्टु हरिदु मितदु यतदु शङ्कु धनु इत्यादयः । वै अव्ययम् । विभर्ति भृशम् ।

**स्फुटं साधु खलु स्पष्टं विशदं पुष्कलामलौ ॥१७३॥**

सत निर्भले । स्फुरत्यभिप्रायोऽस्मात् ३स्फुटम् । साध्यतीति साधु । खलतीति खलु ४ ।  
सप्तयते स्थ स्पष्टम् । विशति चित्ते विशदम् । पुष्णातीति पुष्कलम् । न मलमस्मिन् आमलम् ।  
५ प्रकाशम् । प्रकटम् ।

**चित्राश्चर्चर्याद्गुतं चोद्यं विस्मयः कौतुकोऽप्यहो ।**

षट् कौतुके । चित्र् चयने । चिनोतीति चित्रम् । आचरतीत्याहचर्यम् ५ । पारस्करादि-  
त्वासुट् । भू सत्तायाम् । अद् पूर्वः । अद् विस्मितो भवत्यत्र अद्गुतः । “अदि भुवो डुत ६” । चोद्यते इति  
चोद्यम् । विस्मयते इति विमयः । कुतुकस्य भाव. कौतुकम् । अहो लोका आश्चर्यम् इति  
१० प्रयोजनीयम् ।

**अभियोगोद्यमोद्योगा उत्साहो विक्रमो मतः ॥१७४॥**

पञ्चोद्यमे । अभियोगजनम् अभियोग । यमु उपरमे । यम् उद्घूर्व । “चुरादेश्च ७”—इन् ।  
“आरयोप ११” ८—दीर्घः । उद्यामि इति जातम् । “मानुकन्धाना ११” हस्तः । उद्यामि जातम् । उद्यमनमुद्यमः ।  
भावे घञ् । “कारितस्य १२” ९ उद्योजनम् उद्योग । उत्सहनमुत्साह । विक्रमण विक्रमः ।

५१ **रहोऽनुरहसोपांशु रहस्यं च भिनत्ति कः ।**

चत्वार एकान्ते । रहति यजति जनः सङ्ग यत्र सान्त रह । क्लीबे । अव्यय च । अनुगत  
रह अनुरहसम् । “१३ अन्ववत्सेभ्यो रहस्” । उपाशनुते अव्ययमुद्वन्तम् उपांशु । रहसि भव रहस्यम् ।  
कः पुमान् भिनत्ति विदारयति । पञ्चान्तम् । एकान्तम् । नि शलाकम् । उपदूरम् । विजनम् ।  
विविक्तम् । जनान्तिकम् ।

२० **कीनाशः कृपणो लुब्धो गृध्नुर्दानोऽभिलाषुकः ॥ १७५ ॥**

षट् कृपणे । लोभेन क्लिश्यति बाध्यते १० कौनाशः । कों वाणीं याचकाना नाशयति विनाशय-  
तीति कीनाश । कल्पते रक्षितु न दु दातु कृपण । लुभ्यति स्थ लुब्ध । गृध्नुरित्यपि  
स्यात् । लोभेन द्योतते शोभते (दीयते क्षयति) द्वीन । दीद् द्येये । क्वचित् हानः इति पठन्ति । लष  
कान्तौ । अभिर्पूर्व । अभिलषतावेवशालः अभिलाषुक । “शृकमगमहनवृष्ट्यालसपतपदामुकड् ११” ।

१. का० उ० स० ११५ । इति कुप्रत्ययः । २. भृषातोः शपत्यः किदित्यर्थः । भृश्यतीति  
भृश वा । “भृशु भ्र शु अथ पतने” । दिवादि । इगुपेति कः । भृशरत्रान्तर्भावितपृथ्यर्थ । ३ स्फुटतीति  
कर्तुविग्रहो न्याय., नत्वपादानकः तत्र घजि स्फोट इत्यापत्ते । अत्रेगुपेति क । ४. “खल सङ्घर्षेण” ।  
बाहुलकादुः । खलशब्दो नानर्थे । तदुक्तम्—“निषेधवाक्याऽलङ्कारे जिज्ञासाऽनुनये खलु” । अम० को०  
३।३।२२५ । ५ “चित्र चित्रीकरणे” । चित्रयतीति चित्रम् । पचाद्यच् । इत्यन्यत्र । ६. आ इति  
चर्यते उभिनीयते इति विप्रहोऽन्यत्र । “आश्र्वयमनित्ये” इति सुट् । ७. का० उ० स० ४।२५ । ८ चोद्यशब्द  
आश्र्वयर्थै । तदुक्तम्—“चोद्यन्तु प्रेरेण प्रश्नेऽद्गुतेपि च” अनेऽ स० २।३।६२ । ९. का० स० ३।२।१ ।  
१०. का०स० ३।६।५ । ११ का०स० ३।४।६५ । १२ का०स० ३।६।४।४। इतीनो लोपः । १३. का०स०  
३।४।४। । अत्र राजादिवृत्ति २९ । १४ “क्लिश् विवाघने” । “क्लिशेरीचोपधाया कन् लोपश्च लो नाम्  
च” पा० उ० स० ५।६।६ । १५. का० स० ४।४।३।४ ।

कदर्यः । किंपचान् । मितम्पच् । कुल् । कुलक् । कलीबः । क्षुद्र । वराकश्च ।

**पाशनीतः सितो बद्धः सन्धानीतो नियन्त्रितः ।**

**नियामितः शृङ्खलितः पिनद्धः पाशितो रिषुः ॥ १७६ ॥**

नव बद्धे । पाशं नीतः पाशनीतः । सीयते स्म स्तित । बध्यते स्म बद्धः । सन्धा प्रतिज्ञा नीतः  
प्राप्तिः सन्धानीतः । नियन्त्रं सजातमस्य नियन्त्रित । नियामी जातोऽस्य नियामितः । शृङ्खला ५  
सजातोऽस्येति शृङ्खलितः । तारकितादिदर्शनादितच् । पिनद्धते स्म पिनद्धः । पाशः सजातोऽस्य पाशितः ।  
क रिषुः शत्रुः ।

**कान्तं च कमनं कप्रं कमनीयं मनोहरम् ।**

**अभिरामं र(रा)मणीयं रम्यं सौम्यं च सुन्दरम् ॥ १७७ ॥**

दश वरिष्ठे (श्रतिसुन्दरे) । काम्यते कान्तम् । काम्यते कमनम् । काम्यते इत्येवशीलं १०  
कप्रम् । काम्यते वाञ्छयते कमनीयम् । “तव्यानीयौ” । मनोहरति मनोहरम् । मनोहारी ।  
मनोरमम् । अभिरमणम् अभिरामम् । रमणस्य (णाव) हित रमणोर्यम् । रम्यते रम्यम् । सौम्य  
भावः सौम्यम्<sup>३</sup> । सुन्द सौत्रोऽय सुन्दति सुषु नन्दयति इति निरुक्त्या सुन्दरम्<sup>४</sup> ।

**चारु श्लक्षणं च रुचिं प्रशस्तं हृदयबन्धुरम् ।**

**दर्शनीयं मनोज्ञं च**

१५

श्रष्टौ मनोज्ञे । चरन्ति नेत्राण्यत्र चारु । शिष्यते युज्यतेऽनेन इश्लक्षणं । रोचते सर्वेऽयो रुचिरम् ।  
प्रशस्तते स्म प्रशस्तम् । हृदयस्य प्रियम् हृदयम् । चित बन्धाति बन्धुरम् । हृदयते दर्शनीयम् ।  
मनो जानातीति मनोज्ञम् ।

**चित्तपर्यायहारि च ॥१७८॥**

चित्तहारि । मनोहारि । इत्यादीनि मनोहरनामानि ज्ञातव्यानि ।

२०

**अवश्यायं तुषारं च प्रालेयं तुहिनं हिमम् ।**

**नीहारम्**

बड़ हिमे । अवश्यायते अवश्याय । “दिहिलिहिश्लिश्वसिव्यध्यतीण्यश्याऽता च<sup>५</sup>”  
णप्रक्षय । तुष्यन्त्यनेन तुषार । प्रलयादागत प्रालेयम्<sup>६</sup> । तोहयत्यर्दयति तुहिनम् । तुहिर् अर्दने ।  
हिनोति वर्धते जलमनेन हिमम् । निहियते नीहारः । मिहिका धूमिका । देश्याम् ।

२५

१ का० सू० ३।७।९ । २ रमणाय हितमिति विग्रहो युक् । तस्मै हितमिति चतुर्थन्ताच्छ ।  
मूले छन्दोभङ्गदोषवारण्य रमणीयमेव रामणीयम् इति स्वार्थिकोऽयंपि कार्यः । ३ सौम्य भाव इति  
विग्रहोऽयुक् । “प्रकृतिजन्यबोधे प्रकारीभूतो भाव.” इति सिद्धान्तात् सौम्य इत्यस्य सौमत्वमित्य-  
र्थापत्ते । अतः सौमी देवताऽस्येति षुष्टिः, “सौमाट्यरण्” । इति दृश्य । अथवा सौम इव सौमः ।  
ततश्चतुर्वर्णादित्वात्प्रयण् इति रामाश्रमः । ४ सुषु द्रियते आद्रियते । द्रुधातोरप् । पृष्ठोदरादित्वान्तुम् ।  
सुषु उनति आदीर्करोति चित्तं वा । सुपूर्वकात् “उन्दी क्लेदने” उन्दधातोर्बहुलकादरः । शकन्धा-  
दित्वात्परखम् । इति रामाश्रमः । ५ नेत्र मनो वैति शेषः । “शिलष आलिङ्गने” । “शिलषे रचोपधाया.”  
उ० सू० ३।१९ । इति क्लः । उपधाया अकारश्च । ६ का० सू० ४।२ । ५८ । ७. प्रलीयन्ते पदार्था  
अत्रेति प्रलयो हिमाचलः । तस्मादागत प्रालेयम् । अण् । केक्यमित्रयुप्रलयाना यादेरिय । पा० सू०  
७।३।२ । इति यादेरियादेशः ।

तत्करं विद्धि मृगाङ्कं रोहिणीपतिम् ॥ १७६ ॥

तस्य करस्तकरस्तम् । हिमशब्दात्करशब्दे प्रयुज्यमाने चन्द्रनामानि भवन्ति । अवश्यायकर ।  
दुषारकरः । प्रालेयकरः । दुहिनकर । हिमकर । नीहारकर । मृगाङ्कः । रोहिणीपति । अष्टौ नामानि  
विद्धि जानीहि ।

५ पुषागं सञ्चरं प्राहुः

द्वौ प्रधानपुरुषे । पुमाइचासौ नामः शेषः पुषागः । संश्चासो नर सञ्चरः । प्राहुः त्रुवन्ति ।

तिलकं च विशेषकम् ।

ललाटिका ललामापि पूर्णवाहं तथा द्रुमम् ॥ १८० ॥

१० षट् तिलके । तिलकाकृतिः तिलकः । तिलतीति तिलकम् । विशिनष्टीति विशेष । स्वार्थेः कः ।  
विशेषकः । लल्यते ललाटम् । के प्रत्यये ललाटिका । लल्यते ललामा । पूर्णं वाहयतीति पूर्णवाहः ।  
द्रवति वृद्धिं गच्छति द्रुमः । तमालपत्रम् । चित्रकम् ।

अञ्जनं कज्जलं नागं गजपाटलमारुणम् ।

षट् कज्जले । अज्ययेऽनेनेत्यडजनम् । कषति नेत्रवैरूप्यं कज्जलम् । न शोभाम  
अगति गच्छति नागम् । गति शोभया मायति गजम् । पाटलाया हृम् पाटलम् । ऋच्छति गच्छति  
१५ शोभाम् आरुणम्<sup>३</sup> ।

सालं परिधि वृक्षं च

त्रयं प्राकारे । सरति गच्छति कालान्तर सालः । परिधीयते वेष्यते अनेन परिधि  
वृणोति नगरमाच्छादयति वृक्षम्<sup>४</sup> ।

कुल्यां स्त्रीं सारणीं विदुः ॥ १८१ ॥

२० त्रयः<sup>५</sup> पानीयनिर्गमनमार्गे । कुले यहे साधुः कुल्या । स्तृणाति वैरूप्यमाच्छिनति स्त्री ।  
सरत्यनया सारणी । तो विदु कथयन्ति घनज्जयकवयो भाष्यकर्तारोऽमरकोत्याचार्यश्च ।

चारोऽवसर्पः प्रणिधिर्निंगृहपूरुषश्चरः ।

पञ्चं चारे । चरति शत्रुमण्डले चारः<sup>६</sup> । अवसर्पति अवसर्प । अपसर्पश्च । प्रकरेण

१ अत्र तिलकविशेषके दीकोक्तमालपत्रचित्रके च ललाटकृततिलकाऽलङ्करणे । तदुक्तम्—“तिलके तमालपत्रचित्रपुण्ड्रविशेषका” । अभिं चिं ३२३१७ । ललाटिका पत्रसमूक्तत-ललाटभूषणम् । तदुक्तम्—‘पत्रपाश्या ललाटिका’ अभिं चिं ३२३१९ । ललामा तु सीमन्ताग्रे मरु-मणीभित्रिव धार्यमाणं रनादिकृतभूषणम् । तदुक्तम्—“पुरोन्यस्त ललामकम्” अभिं चिं ३२३३६ । पूर्णवाहृदयमयोस्तु कोषान्तरे पाठो नोपलब्ध । २ पट् कज्जले । इत्यविचारसहम् । अञ्जनकज्जलौ समानार्थौ । नागगजपाटलारुण । श्रोष्कपोलादिरञ्जकलोहितरङ्गविशेषवाचका । तदुक्तम्—‘अनेकार्थ-सङ्ग्रहे—“नागो मतकृजे सर्वे पुन्नागे नागकेसरे” २।३४ । “पाटलान्तु कुसुमश्वेतरक्षयोः” ३।७०। ३ अरुणमेव आरुणम् । ४ वृहशब्दस्य सालार्थे कोपान्तरसंवादो नोपलब्धः । ५ अत्र द्वाविति वक्तव्यम् । छीशब्दोऽत्र कुल्या-सारण्यो छीलिङ्गवैषक । तत्पर्यायः । ६ पूर्वमुक्ते उपि सिंहावलोकनन्यायेन चारोऽयेऽन्यानपि शब्दान् समुच्चिनोति । ७ चरति शत्रुमण्डले चरः, चरेरच् । तत स्वार्थिकोऽण् । चर एव चारः ।

नितरां गुतो धीयते प्रणिधिः । निगृद्वचासौ पुरुषः निगृदपुरुषः । चरतीति चरः । सपशः । १४०  
वर्णः । मन्त्रज्ञश्च ।

### तद्वानुकृतः सहस्राक्षः

तस्मात् पूर्वोक्तशब्दात् परं धान् इति प्रयुज्यमाने सहस्राक्षनामानि भवन्ति । निगृद-  
पुरुषवान् । चरवान् इत्यादीनि ज्ञातव्यानि । ५

### सत्यार्थं सूनुतं ऋतम् ॥१८२॥

सत्यार्थं द्वौ । सु सुष्टु ऋत सत्यं सूनुतम् । पृष्ठोदरादित्वानाङ्गागमः । ऋच्छ्रुतिं गच्छति जनं  
प्रत्ययमत्र ऋतम् । तथा चामरकोषे—“सत्यं तथ्यमृतं सम्यक् ।”

### निस्तलं वर्तुलं वृत्तम्

त्रयो वर्तुले । निर्गतं तलं प्रतिष्ठाऽत्य निस्तलम् । अथवा निर्गतं तलादधोभागान्निस्तलम् । १०  
भूमौ न तिष्ठति वा । वर्तते भ्रमति वर्तुलम् । वृत्यते स्म वृत्तम् । सर्वे त्रिषु ।

### स्थपुटं विषमोन्नतम् ।

विषमोन्नते स्थपुटम् । स्थापयत्यात्मनो विषमोन्नतत्वे स्थपुटम् । प्रायः क्लीबे ।

### दीर्घं प्रांशु

द्वौ<sup>२</sup> दीर्घे । दण्णाति दीर्घम् । प्राणुते व्याप्तोतीति प्रांशु । १५

### विशालं च बहुलं पृथुलं पृथु ॥१८३॥

चत्वारो विस्तीर्णे । विस्तार विशति विशालम् । बहुत् लातीति बहुलम् । प्रथते वर्षते  
पृथुलम् । गुणमात्रवृत्तेत्ते । पर्थते पृथु । बहुत् । उरुः । गुरुः । विस्तीर्णः ।

### उल्वणं दारणं तिगमं धोरं तीव्रोग्रमुक्तटम् ।

सप्त धोरे । उल्वणात्युल्वणम्<sup>३</sup> । पृष्ठोदरादित्वात्पक्षे लः । दारयति दारणम् । तितिक्षतीति  
तिगमम्<sup>४</sup> । शुति धोरम्<sup>५</sup> । तीवति तीव्रम् । तीव स्थौल्ये रक् । उच्यति उग्रम्<sup>६</sup> । उक्तटथेते  
उत्कटम्<sup>७</sup> । प्रतिभयम् । भीमम् । भयानकम् । आभीलम् । भीषणम् । भीमम् । मैरवम् । २०

### शीतलं तिमिरं याथं मन्दं विद्धि विलम्बितम् ॥१८४॥

१ यथार्थं यथा अर्थं प्रयाजन वरणो जाति प्रसिद्धिर्वा यस्येति तदर्थं । २ अम० को०  
१७१२२ । ३ वस्तुतस्य प्राणुदीर्घयोरर्थमेद । दीर्घविस्तृतायतशब्दा पर्याया । प्राणुस्तृतम् । तदुक्तम्-  
‘दीर्घमायतम्’ अम० को० ३।१७० । ४ ‘दृ विदारणे’ । बाहुलकादधक । दण्णाति हस्तव्वमिति दीर्घं ।  
५ प्रकृष्टा अशब्दोऽस्येत्यपि । ६ ‘विश प्रवेशने’ । बाहुलकादाल । रामाश्रमस्तु—‘वै शालञ्जुञ्जुन्चौ’  
इति० पा० सूत्रेण विशब्दाच्छालञ्जप्रत्ययमाह । ७ उद्वृणातीति उल्वणम् । पृष्ठोदरादित्वादुलोल इति  
पाठोऽत्र युक्तः । ‘वण शब्दे’ । अच् । उल्वणशब्दो वस्तुतः स्पष्टार्थक, न तु दारणार्थकः । स्पष्टो  
ह्युद्वेजको भवति खलानाम् । अत उद्वेजकत्वसामान्यात्तथाह । ८ तितिक्षतीति क्षमार्थकत्वादत्र न  
युक्तम् । ‘तिज निशाने’ । निशान तिक्षणीकरणम् । तेजयतीति तिगमम् । ध्मक्प्रत्यय । ९ ‘बुर भीमा  
र्थशब्दयोः’ । धोरयतीति धोरम् । ष्यन्तादच् । १० उच्यति क्रुधा सम्बद्धते उग्रम् । ‘उच समवाये’ ।  
दिवादिः । ‘ऋग्रेन्द्र’ इत्यादिना रक् गश्चान्तादेश ।

पञ्च कार्यविलङ्घे (मिति) । शीतं लाति मन्दो भवति कायें शीतलम् । ताम्यति स्वकार्य-  
मित्तुति तिमिरम्<sup>१</sup> । स्तिमिति स्थिमितं वा पाठः । यथा भव याथम् । मन्द्यते मन्दम् । विलम्ब्यते  
स्म विलम्बितम् । विद्धि जानीहि ।

**स्वभावः प्रकृतिः शीलं निसर्गो विश्वसो निजः ।**

५ पञ्च स्वभावे निजे । स्वः स्वकीयो भावः स्वभावः । प्रकरण प्रकृतिः । शील्यते शीलयति  
वा शीलम् । निसृज्यते निसर्गः । विश्वसितीति विश्वसः<sup>२</sup> । विश्वासश्च । विश्रम्भ ।

**योग्या गुणनिकाऽभ्यासः**

त्रयोऽभ्यासे । युज्यते योग्या<sup>३</sup> । गुण्यते उहर्निश गुणनिकाः<sup>४</sup> । अव्यसनमभ्यासः ।

**स्यादभीक्षणं मुद्दुर्महुः ॥ १८५ ॥**

१० मुद्दुर्मुद्दुर्वारं वार स्यात् भेवेत् । अभीक्षणम् । अभीक्षणम् । अभिमुखमीक्षते  
वा अभीक्षणम्<sup>५</sup> । नितराम् ।

**मृषालीकं मुधा मोघम्**

चत्वारोऽलीके । मृष्यते सहते नारकं दुःखमनेत मृषा । आदन्तमव्ययम् । अलति स्वस्वाहा-  
(स्वर्गा)निवारयति अलीकम् । मुञ्चति व्यजति निमित्त मुधा । आदन्तमव्ययम् । मुद्यतेऽत्र चित्त मोघम् ।

**विफलं वितर्थं वृथा ।**

१५ निष्फलवचने त्रयः । विगत फल विफलम् । विगत तथा सत्य यस्मात् वितरथम् । वृणो-  
त्याच्छादयति गुणान् वृथा । अव्ययम् ।

**विधुरं व्यसनं कष्टं कृच्छ्रं गहनमुद्धरेत् ॥ १८६ ॥**

पञ्च कटे । कष्टेन विधुनोति शरीर विधुरम् । व्यस्यते अनेन व्यसनम् । कष्यते  
२० (कपति) कष्टम् । कृणोति क्लिनति दुखेन कृच्छ्रम्<sup>६</sup> । गाहते गहनम् । उद्धरेत् निस्तरेत् ।

**समस्तं सकलं सर्वं कृत्स्नं विश्वं तथाऽस्तिलम् ।**

षट् समस्ते । समस्यते एकीकरोति समस्तम्<sup>७</sup> । सम ग्रसते समग्रम्<sup>८</sup> । समान कलयतीति  
१० सकलम् । सरति सर्वम् । कृन्तति वेष्यति व्याघ्रोति कृत्स्नम् । विश्वति तिष्ठति सर्वत्र विश्वम् ।  
नास्ति विल शून्यमस्याखिलम् । निलिल च ।

१ “तिम आद्रीभावे” । तिम्यति आद्रीभवति तिमिः । विलम्बशीलो जन सर्वदाऽद्र्द्द इव  
शीति स्फूर्तिरहितश्च भवति<sup>१</sup> । २ विश्वसशब्दाऽन्वाख्यानमपि व्याकरणादस्पष्टम् । अतीऽत्र त्रिष्वपि मूलीके एव प्रमाणम् । ३ योगे  
चित्तैकाऽये साध्वीति योग्या “तत्र साधु”रिति यदन्यत्र । ४ गुण्यते गुणाना । चुरादिग्निजन्ताद् भावे  
“ण्यासश्रन्येति वृच् । ततः स्वार्थे क । गुणैव गुणनिका । ५ अभीक्षणौति अभीक्षणम् । “क्षणु तेजने” ।  
बाहुलकाढ्डम् । अन्येषामपीति दीर्घः । इति रामाश्रम । ६ अत्र मृषालीकशब्दौ वद्यमाणौ वितरथ-  
शब्दशास्त्र्यवाचक । मुधामोघशब्दौ विफलवृथाशब्दौ च वद्यमाणौ व्यर्थवाचका इति विवेकोऽ-  
न्यत्र । तदुन्नमपरे—“मृषा मिथ्या च वितरथ” ३।१।१५ । “अलीक त्वप्रियेऽन्यते” ३।३।१२ । “मौघ  
निरर्थकद्” ३।१।८।१ । व्यर्थके दु वृथा मुधा” ३।४।४ । “वितरथ त्वनुत वचः” १।१।२।१ । इति ।  
७. कर्वति कृन्तति वेति क्ली० स्वां० । ८ समस्यते स्म समस्तम् । “असु ज्ञेपणे” । कर्मण लः ।  
९ सङ्कृतमग्रमस्य समग्रम् । १० सह कलाभिर्वर्तते सकलम् ।

**शकलं विकलं खण्डं शलकं लेशं लवं विदुः ॥ १८७ ॥**

षट् खण्डे । शक्तोति काये शकलम् । शलक च । विगता कला यस्मात् तद् विकलम् ।  
ख"ङ्गते खण्डः । लिशते लेशः<sup>१</sup> । लिश विज्ञु गतौ । “अकर्तरि च कारके संजायाम्<sup>२</sup>” । रीति शब्द  
करोति <sup>३</sup>लवः । विदु कथयन्ति । अर्धम् । नेम । सामि । असम्पूर्णम् । दलं च ।

**मर्म कोपं च**

५

द्वाँ मर्मणि । म्रियतेऽनेन मर्म । नान्तम् । कुर्यते कोषम्<sup>४</sup> ।

**कलहं परिवादं छलं नयेत् ।**

करेण हन्त्यत्र कलहः । परिवदन परिवाद । छलयती (त्वं)ति छलम् ।

**शोणितं लोहितं रक्तं रुधिरं भतजासृजम् ॥ १८८ ॥**

षड् सूधिरे । शोण्यते वर्णते देहोऽनेन शोणितम् । तालव्य । रोइति देहे जायने लोहितम् । १०  
रजति रस रक्तम् । रुण्डि सूधिरम् । क्षताद् व्रणाजायते क्षतजम् । अस्यते क्षिप्यते अस्तु ।

**सन्ततानारताजसान्वहं कन्यापतिर्वरः ।**

त्रयः (चत्वारः) सन्तते । सन्तन्यते रस सन्ततम् । न आरतम् अनारतम् । न जन्मतीत्येवशील  
मजस्यम् । अन्तर्हम् । कन्यापतिर्वर नन्दतु इति प्रयोगनीयम् ।

**उद्वाहः परिणयनं विवाहश्च निवेशनम् ॥ १८९ ॥**

१५

चत्वारो विवाह । उद्वहन उद्वाहः । परिणयते<sup>५</sup> परिणयनम् । विवाहते विवाहः ।  
निवेशयते निवेशनम् ।

**शुपिरं विवरं रन्ध्रं छिद्रम्**

चत्वारशिल्पद्रे । शुष्यति जलमत्र “शुष्यिरम् । उषशुशीति रः । विविष्यते भूम-यमनेन विवरम् ।  
गणति वानेन रथ्यति हिनस्ति प्राणिन वा रन्ध्रम् । छिद्रते तत् छिद्रम् । कुहरम् । विलम् । निर्व-  
यनम् । रोकम् । व्वभ्रम् । वपा । शुष्पि ।

**गर्ता च गह्वरम् ।**

गर्ताया द्वौ । पतित प्राणिन गिरति गर्ता । गर्तः । गृहतीति गह्वरम् ।

**श्वभ्रं रस्यं च पातालं नरकं यान्त्यमेघसः ॥ १९० ॥**

चत्वारो नरके । श्वयते वर्धतेऽत्रोपरि चरतो शङ्का, श्वभिर्नान्ति वा श्वभ्रम् । रसाया भव  
रस्यम् । पतन्त्यस्मिन् पातालम् । नरा कायन्त्यत्र नरकः । नारकः । पुसि । अमेघस उद्दिरहिता  
२५

१ “लिश अल्पीभावे” । दिवादि । ततो श्वविधानमर्थाऽनुस्तप्यम् । २ का० स०  
४।५।४ । ३ लूप्यते छिद्रते लव । श्रूदोरप् । टीकोक्तविग्रहस्तु न लवनार्थाऽभिधायी । ४ कोष-  
शब्दः पेशीवाचकां मेदिन्या लभ्यते । पेशीना मर्मस्थानव्यायुवेदे सम्मतम् । अत उपचारात् कोषोऽपि  
मर्मस्थान्युनेयम् । तदुन्तम्—‘कोषोऽुल्ली कुडम्ले पात्रे दिव्ये खङ्गपिधानके । जातिकोषेऽर्थसङ्घाते पेशी  
शब्दादिसङ्ग्रहे’ । षा०वर्ग० ६ । ५ “तिमिरुषिमदिमन्दिचन्दिवधिरुचिशुषिन्य किर.” का०उ० १।२।३ ।  
सुषिरस्यास्तीति विग्रहे तु “उषसुषिमुक्तमधो र” पा०स० ५।।२।१०७ । इति र । रथ्ययपन्ने दन्त्यादिरयम् ।  
उषसुषीति पा० रथ्यै दन्त्य एव पाठः । क्षीरस्वाभ्यपि दन्त्यमेव पपाठ ।

सम्यक्चारित्रहिता यान्ति गच्छन्ति नरकम् । निरय । दुर्गति ।

अदब्रं भूरि भूयिष्ठं बंहिष्ठं बहुलं बहु ।

प्रचुरं नैकमानन्यं प्राज्यं प्राभृतपुष्कलम् ॥ १६१ ॥

द्वादश प्रभूते । न दभमदभ्यम् । भवति प्रार्थ्यमत्र भूरि, भूरिष्ठं च । अतिशयेन बहु भूयिष्ठम् ।

५ “बहो ‘लौपो भू च बहो” “इष्टस्य<sup>२</sup> पितृतेति” भूरादेशो यिडागमश्च । अतिशयेन बहुलो बंहिष्ठः । वहिति प्राचुर्यं बहुलम् । प्रचुरति<sup>३</sup> प्रचुरम् । न एक नैकम् । अनन्तस्य भाव आनन्त्यम् । प्राज्यते प्रकरेण वीयतेऽनेन वा प्राज्यम्<sup>४</sup> । प्रभूति स्म प्राभृतम् । प्रभूत च । पुष्यति पुष्कलम् । पुष्क च । पुरुजम् । पुष्टम् ।

भवो भावश्च संसारः संसरणं च संसृतिः ।

तत्त्वज्ञश्चतुरो धीरस्त्यजेऽजन्माजवं जवम् ॥ १६२ ॥

१० अष्टौ सप्तरे । भवतीति भवः । भवतीति भावः । “वा ज्वलादित्तनीभुवो णः” । सप्तरति अस्मिन् संसारः । संसिधते अस्मिन् संसरणम् । सप्तरण संसृतिः । जनयतीति जन्म । आजवतीति आजवम् । जवति चतुर्गत्या भ्रमति (अत्र) जव ।

ऊर्जस्फूर्जस्वी तरस्वी तेजस्वी च मनस्त्वयि ।

चत्वार (पञ्च) स्तेजोयुक्तपुरुषे । ऊर्जा ऊर्जा वाऽस्त्यस्तेति ऊर्जस्वी । स्फूर्जोऽस्यास्तीति १५ स्फूर्जस्वी । तरोऽस्यास्तीति तरस्वी । तेजोऽस्यास्तीति तेजस्वी । मनोऽस्यास्तीति मनस्वी ।

भास्वरो भासुरः शूरः प्रवीरः सुभटो मतः ॥ १६३ ॥

पञ्च सुभटे । भासते इत्येवशीलौ भास्वरः<sup>५</sup> । भासुरः । “भिदिंभासिमजा शुर्” । शूरवति शूरः । शूर वीर विकान्तौ । प्रवीरयते प्रवीर । सुष्टु मटः सुभट । विकान्त ।

तनुत्रं वर्म कवचमावृतिर्वाणवारणम् ।

२० पञ्च कवचे । तनु शरीर त्रायते रक्षति तनुत्रम् । वृणोत्यङ्ग वर्म । कन्यते वध्यते शरीरम् अनेन कवचम् । आवरणमावृति । वाणाना वारण निषेधन वाणवारणम् ।

कृपासं कञ्चुकम् ।

द्वौ कञ्चुके । करोति शोभा कृपासम् । कर्पास च । कन्यते वध्यते कञ्चुकः ।

छत्रमातपत्रोणवारणम् ॥ १६४ ॥

२५ त्रयश्छत्रे । वर्षातपौ छादयतीति छत्रम् । त्रिषु । छत्र, छत्री । आतपात् त्रायते आतपत्रम् । उष्णस्य वारणम् उष्णवारणम् । उपलद्धम् ।

केशं शिरोरुहं वालं कचं चिकुरमीहयेत् ।

पञ्च केशे । के मस्तके शेरे केश । शिरसि रोहति शिरोरुहः । वल्यते सवियते वालः । मस्तके चीयते कचति वा कचः । चीयते यत्नेन चिह्नगृहः । चिकुरश्च । मूर्धजः । शिरसिजः ।

१ पा० सू० ६।४।१५८ । २ पा० सू० ६।४।१५६ । ३ प्रचोरति प्रचुरम् । चुर स्तेये । चुरादीना णिज्वैकल्पिकः । इगुपधेति क । प्रगत चुराया प्रचुरमिति वा रामाश्रमः । ४ प्राज्यते काम्यते “अञ्जु व्यक्त्यादौ” अञ्जे: सज्ञायामिति क्यप् । यद्बा प्रवीयते “अञ्ज गतिक्षेपणयोः” वयप् । बोभावो नेति टीकाशय । ५ का० सू० ४।२।५५ । इति ण । ६ “कपिपिसिभासीशस्याप्रमदा च” का० सू० ४।४।४७ । इति वरः । ७. का० सू० ४।४।४१ ।

वृजिन<sup>१</sup> । कुन्तलः ।

चूडापाशं च धर्मिमन्लं कवरी केशबन्धनम् ॥ १६५ ॥

चत्वार केशबन्धने । चुद संचोदने । “चुरादेशन<sup>२</sup>” इन् । नामिनो<sup>३</sup> गुण । चोदन चूडा । “ऊन चूदपीडमृगयतिम्य इनन्तेभ्यः सज्जायाम्” अद् प्रत्ययः । कारितलोप । निपातनात् उपधाय हस्तवत्म् । दस्य ढत्वम् । चूडाया, शिलायाः पाशः बन्धन चूडापाशः । धर्मिः सौत्रः । धर्मन्ते केशा ५ वध्यन्ते धर्मिमलः । क मस्तक वृण्णोति कवरो नदादित्वादी कवरी । इदन्तोऽपि कवरि । आवन्तो वा कवरा । केशस्य बन्धन केशबन्धनम् । वेणी । प्रवेणी । वीणा च

उररीकृतमप्यूरोकृतमङ्गीकृतं तथा ।

ऋणोऽङ्गीकारे । ऊरीप्रभूतीना कृजा सह नमासो वा भवति । तथाहि—ऊरी ऊरी अङ्गी-  
करणे विस्तारे च । आश्रुतम् । प्रतिज्ञातम् । उपगतम् । १०

अस्तुकरोऽभ्युपगमे

अ+भ्युपगमे अङ्गीकारे अस्तुकार कथयते । अत्त करोतीति(करणम्)अस्तुकार । “कर्मणा”  
अणा प्रत्यय । अस्योप० वृद्धि । व्यजनम् । “सत्यागदात्मना कारे” । मकारागम ।

सत्यङ्कारः पणार्पणे ॥ १६६ ॥

सत्यापणे सत्य करोतीति सत्यङ्कारः ।

१५

सौहार्दं सौहृदं हार्दं सौहृद्यं सख्यसौरभम् ।

मैत्री मैत्रेयिकाजर्यं सहाय्यं संगतं मतम् ॥ १६७ ॥

दश (एकादश) सख्ये । सुहृदा भावः सौहार्दम् । सौहृद्यम् । हार्दम् । सौहृद्यमेकमेव  
वाक्यम् । सख्यम् । सुरख्येद (भेरिद) सौरभम् । मित्रस्य भावो मैत्री । मैत्र्या नियुनो  
मैत्रेयिक । न जीर्यते अजर्यम् । सहाजी (यथ) ते सहाय्यम् । सगमनम् सज्जतम् । २०

क्षेमं कल्याणमुभयं श्रेयो भद्रं च मङ्गलम् ।

भावुकं भविकं भव्यं श्वोवसीयं शिवं तथा ॥ १६८ ॥

दश (एकादश) कल्याणे । क्षिणोति क्लेशान क्षेमम् । कल्यते जायते कल्याणम् । कल्य  
नीरुज्ज्वलनिति वा कल्याणम् । प्रकृष्ट प्रशस्य श्रेयस् । सान्तम् । भद्रते ह्वादते सुखीभवत्यनेन भद्रम् ।  
म पाप गालयतीति मङ्गलम् । भवनशील भावुकम् । “शृगमगमहनवृषभस्थालशपतपदामुक्तु” । प्रशस्तो २५  
मवोऽस्यास्तीति भविकम् । पुण्यकृतो भवितव्य भवति भव्यम् । श्व शोभनश्च वसीयः इद्वोषसीय ।  
श्वोवसीयस च । ‘श्वसो’ ‘वसीयस्’ । शीयते तनूक्रियते दुखमनेन शिवम् । भाव्यविधातुणां श्रीमदमर-  
कीर्तीना शिव भवतु ।

१ वृजिनशब्दो भड्गुरवाची । तदुक्तम्—“वृजिन भड्गुर भुग्मराल जिह्मूर्तिमत्”  
अभिं० चिं० ३१९३ । लक्षण्या भड्गुरकेशेऽपि वृजिनशब्दप्रयोग । २ का० सू० ३।२।११ ।  
३ का० सू० ३।५।२ । ४ का० सू० ४।५।२ । अत दुर्गवृत्ति “ऊनचूदपीडमृगयतिम्य इनन्तेभ्यौ या  
प्राप्ते वचनम्” इत्येवरूपा । ५ अस्तुकरणमस्तुङ्कार । ६ का० सू० ४।३।१ । ७ “व्यञ्जनमस्वर परवर्णो  
नयेत्” का० सू० १।१।२।१ । ८ का० सू० ४।१।२।३ । ९. सत्यस्य करण सत्यङ्कारः । भावे दश् । कर्तृ-  
विग्रहष्टीकोत्स्वयुक्त । १० का० सू० ४।४।३।४ । ११ का० सू० २।६।४।१ । वृत्ति २७ ।

वक्ता वाचस्पतिर्यत्र श्रोता शक्रस्तथापि तौ ।  
शब्दपारायणस्यान्तं न गतौ तत्र के वयम् ॥ १६६ ॥

अस्य श्लोकस्य सुगमन्याख्या ।

तथापि किञ्चित् कस्मैचित् प्रतिबोधाय द्वचितम् ।  
५ बोधयेत्क्यदुक्षिणो मार्गज्ञः सह याति किम् ॥ २०० ॥

तथापि मया घनञ्जयकविना सूचित कथितम् कस्मैचित् प्रतिबोधाय ज्ञानाय । उक्तिशो  
बोधयेत् ज्ञापयेत् । मार्गज्ञ किं सह याति गच्छति, अपि तु न गच्छति ।

प्रमाणमकलङ्कस्य पूज्यपादस्य लक्षणम् ।  
द्विःसन्धानकवेः काव्यं रत्नत्रयमपश्चिमम् ॥ २०१ ॥

१० एतद्रत्नत्रयमपश्चिम नवीनमपूर्व वर्तते ।

कवेर्धनञ्जस्थेयं सत्कवीनां शिरोमणे: ।  
प्रमाणं नाममालेति श्लोकानां हि शतद्रव्यम् ॥ २०२ ॥

घनञ्जयस्य कवे, सत्कवीना शिरोमणे इति अमुना प्रकारेण हयं नाममाला श्लोकाना  
शतद्रव्य २०० प्रमाणमस्ति ।

१५ ब्रह्माणं समुपेत्य वेदनिनदव्याजात् तुषाराचल-  
स्थानस्थावरभीश्वरं सुरनदीव्याजात् तथा केशवम् ।  
अप्यभोनिधिशायिनं जलनिधिध्वानोपदेशादहो  
फूल्कुर्वन्ति घनञ्जयस्य च भिया शब्दाः समुत्पीडिताः ॥२०३॥

अहो लोका घनञ्जयस्य च भिया कृत्वा शब्दाः समुत्पीडिता सम्यक् प्रकारेण वीड़िता  
२० फूल्कुर्वन्ति । कि कृत्वा पूर्व वेदनिनदव्याजात् मिषात् ब्रह्माणं समुपेत्य प्राय, ईश्वर तुषाराचलस्थान-  
स्थावर सुरनदीव्याजात् प्राय, केशव श्रीविष्णु कि विशिष्ट अभोनिधिशायिन जलनिधिध्वानोप-  
देशात् समुपेत्य सुगमोऽय श्लोकः ।

इति महापण्डितश्रीमद्भरकीर्तिना त्रेविद्येन  
श्रीसेन्द्रवंशोत्पन्नेन शब्दवेधसा कृताया  
घनञ्जयनाममालाया प्रथमं काण्ड  
व्याख्यातम्

श्रीमद्भुनञ्जयकविविरचिता

## अनेकार्थ नाममाला

—०—

जिनेन्द्रं पूज्यपादं च चैलाचार्यं शिवायनम् ।

अर्हन्तं शिरसा नत्वाऽनेकार्थं विष्णोऽग्नहम् ॥ १ ॥

गम्भीरं सुचिरं चित्रं विस्तीर्णार्थं प्रसाधकम् ॥

शाब्दं मनाक् प्रवक्ष्यामि कवीनां हितकाम्यया ॥ २ ॥

गम्भीरं रुचिरं मनोङ्गं चित्रं विस्तीर्णार्थं प्रसाधकम् । सुगमव्याख्याऽस्ति ।

५

अर्हत्पिनाकिनौ शम्भू

शम्भू इति द्विवचनान्तं पदम् ।

जिनावहं चथागतौ ।

जिनां कथ्येते ।

वेदसूर्यो विवस्वन्तौ

१०

वेदश्च मृग्यश्च वेदसूर्यो विवस्वन्तौ सर्यों कथ्येते ।

विष्णुरुद्रौ वृषाकर्णी ॥ ३ ॥

विकुण्ठाविन्द्रगोविन्दौ अनेन्तौ शेषशार्ङ्गिणौ ॥

शेषश्च धरणेद्, शार्ङ्गी च विष्णु. शेषशार्ङ्गिणौ ।

जीमूर्तौ तु करिकीदौ पर्जन्यो शक्रवारिदौ ॥ ४ ॥

१५

वनमम्भसि कान्तारे

अम्भसि कान्तारे वनम् ।

भुवनं विष्टपेऽर्णसि ।

सुगमव्याख्या ।

१. श कल्याणं भवतीति शम्भु. । दुग्रत्ययः । केशवब्रह्मवाची च । तटुकम् — ‘शम्भु स्याद् ब्रह्मशिवयोरर्हत्यपि च केशवे, । इति विं लो० ना० व० ९ । हेमे च—‘शम्भुर्व्वाहृतोः शिवे’ । २१६ । इति च । २ विष्णु, अतिवृद्ध, जित्वर, इन्द्रेतेष्वपि जिन । तटुकम् — ‘जिनस्त्वर्हति तुद्वेऽतिवृद्धजित्वरयोन्निषुपु’ विं लो० ना० व० ८ । हेमे—‘जिनोर्हदत्तुद्विष्णुपु’ २२६९ । ३ “विवस्वान् देवसूर्ययो” अनेऽ स० ३१३७ । अत्र देवशब्दपाठात्प्रस्तुतेऽपि देवशब्द एव युक्त । ४ अनिश्च । तटुकम्—‘वृषाकपिर्वासुदेवे शिवेऽग्ना च’ अनेऽ स० ४२१६ । ५ अनवधिरायनन्तार्थ । “अनन्तः केशवे शेषे पुमाननवधौ त्रिषु” इति मेदिनी । ६. “जीमूर्तो वासवेऽम्भुदै । धोपकेऽद्रौ भृतिकरे” इति० अनेऽ स० । ७ पर्जन्यो मेषगर्जितेऽपि । तटुकम्—“पर्जन्यो मेषशब्देऽपि धृनदम्भुद-शकयो” इति मेदिन्याम् ।

धृतं सर्पिषि पानीये विषं हालाहले जले ॥ ५ ॥  
 तल्पं दारेषु शश्यायां ज्योतिश्कुषि तारके ।  
 घवले सुन्दरे रामो वामो वक्रे मनोहरे ॥ ६ ॥  
 नक्षत्रे मन्दिरे घिष्यम्

५

दधेष्ठि शब्दं करोत्यत्र जनो धिष्यम् । नपुसकम् । धिष्य शब्दे ।

वसने गगनेऽम्बरम् ।

वसने गगने अम्बरं वर्तते । अम्ब शब्द राति ददातीति अम्बरम् ।

परिधौ पादपे सालः

परिधौ पादपे सालो वर्तते । सा लक्ष्मीं लातीति साल ।

६०

“मालः शर्जनगो वृक्षमात्रप्राकारयोरपि” इति हैम ३ ।

सिन्धुः स्रोतसि योषिति ॥ ७ ॥

स्रोतसि योषिति सिन्धु । स्यन्दने सिन्धु ।

सारसः शकुनौ धृते

सरसि तड़गे भव ३सारसः ।

केतनं दीघितौ ध्वजे ।

केतन्ति जानन्त्यत्र केतनम् । तथा च—

“कृत्ये निमन्त्रणे चिह्ने मन्दिरे केतनं विदुः ।”

मयूखः कीलके दीप्तौ

मयते विस्तार यातीति मयूख ।

पतञ्जः शलभे रचौ ॥ ८ ॥

२०

पततीति पतञ्जः । पञ्च गता ।

अञ्जनः कञ्जले नागे

कञ्जले नागे अञ्जनो वर्तते । अञ्ज वृक्षिक्षणकान्तिम् । विकमेण ३ अञ्जते प्रकटी-  
कियते अञ्जन ।

२५

सारङ्गः पृष्ठे गजे ।

सरतीति सारङ्ग ।

सरलः प्रगुणे वृक्षे

ऋजुत्वात्सरलः ।

पुन्नागः सन्नरे तरौ ॥ ९ ॥

३०

पुमोश्चासी नाग श्रेष्ठ ।

१. अनेऽ स० २०२७ । २. धूतपत्ते तु अरसेन द्वेषेण सहितः सारम इति विवेक ।

३. गजोऽपि विकमेण जायने, कब्लीऽपि विकमण्डलेन मन्दयते । ४. सार दृढमद्वा यस्येत्यपि । सरतीत्यस्य स्थाने सारयतीति युक्तम् । ५. “पुन्नागस्तु सितोत्पले । जातीकले नश्रेष्ठे पाण्डुनागे दुमान्तरे ।” इति मेदिनी

पाञ्चजन्योऽनले शङ्खे  
पञ्चजने पाताले भवः पाञ्चजन्यः ।  
कम्बुः शङ्खे मतञ्जले ।  
कम्बुः सौत्र कम्बयते वर्णयते कंबु । अथ वा कवु कर्णे उणादिन्वादस्मादेव नकारागमश्च ।  
कस्वरो द्युभवे द्युम्ने  
द्युभवे स्वगोद्धवे द्युम्ने सुवर्णे ५० ॥ ११ ॥  
स्यन्दनं शकटेऽम्बुनि ॥ १० ॥

स्यदन्ते स्यन्दनम् ।  
अद्विर्गिरिवनस्पत्योः  
गिरिश्च वनस्पतिश्च गिरिवनरपती तश्चोर्गिरिवनस्पत्योः । अत्ति आकाशमित्यद्विः ।  
शिखरी तरुभूधयोः  
शिखरपरः ॥ १२ ॥

राजने इति राजा ।  
द्विजो दशनविप्रयोः ॥ ११ ॥  
द्विजातो द्विजः ।  
राजा चन्द्रमहीपत्योः ।

राजने इति राजा ।  
कदली ध्वजमोचयोः ।  
केन वायुना दत्यते विदार्यते कदली ।  
अशोकः सुमनस्तवर्णः  
न शोको यस्माद्यस्य वा अशोकः ।  
सुमनाः सुरपुष्पयोः ॥ १२ ॥

सुरश्च पुष्प च सुरपुष्प तयोः सुरपुष्पयोः । शोभनचित्तः सुमनाः ।  
मुक्तारजतयोस्तारः  
तीर्यते तारः ।

भूरि भूयः सुवर्णयोः ।  
पुण्यवन्सु भवतीति भूरिः । कलीवे ।  
पानीयदुर्घयोः क्षीरम्  
घस्तु अदने । सौत्रोऽयम् ।

१ “पाञ्चजन्यस्तु विष्णुशङ्खे द्रुमान्तरे” इति मेदिनी । २ “कम्बु पुमान् गजे । वलये शङ्खे-शम्बुककन्धरामलके स्त्रियाम्” इति वि० लो० बा० व० २ । ३ “स्यन्दन प्रसवे नीरे स्यन्दनस्तिनिशे रथे” वि० लो० ना० व० १५१ । ४ राजा प्रभौ च दृपतो लक्ष्मिये रजनीपतौ । पच्चे शक्ते च पुमि स्यात्” इति मेदिनी । ५ घस्तेऽद्यते दीरम् । “घस्तु अदने” । घसेः किञ्चेति कीरः ।

**पयः सलिलदुष्योः ॥ १३ ॥**

पीयते पयः ।

**कालप्रकर्षयोः काष्ठा**

कालश्च त्रुट्यादिलक्षणः ।

५

“स्वस्थे नरे मुखासीने यावत्स्पन्देत लोचनम् ।

तस्य त्रिशत्तमो भागस्त्रुटिरित्यभिधीयते ॥”

अथवा-- “सर्षपस्य प्रयत्नेन क्षिप्तम्य पततोऽम्बरात् ।

द्वियब यावदध्वान कालः स (च) त्रुटिः स्मृतः ॥”

प्रकर्षश्च प्रकर्षता उत्कृष्टता वा । कालश्च प्रकर्षश्च कालप्रकर्षयौ तयोः कालप्रकर्षयोः काष्ठा  
१० कथ्यते । काशते भासते काष्ठा । आन्तोऽयम् ।

**कोटिः संख्याप्रकर्षयोः ।**

कुट्टीति कोटिः ।

“कियर्ता पञ्चसहस्री कियर्ता लक्षा च कोटिरपि कियर्ता ।

आदौर्योन्नतमनसा रत्नवतो वसुमती कियर्ता ॥”

१५

**रन्ध्रसंश्लेषयोः सन्धिः**

सन्धान सन्धिः ।

“सन्धियोर्णां सुरङ्गाया नाश्चेऽद्भुते श्लेषभेदयोः” इति हैमी ।

**सिन्धुर्नदसमुद्रयोः ॥ १४ ॥**

स्वन्दते सिन्धु ।

२०

**निषेधदुःखयोर्वाधा**

वन्दन ( वाधन ) वाधा । वातु प्रतिवाते ।

**व्यामोहो मूर्खमौढ्ययोः ।**

व्यामुद्यते व्यामोह ।

**कौपीनाकारयोर्गुह्यम्**

२५

गुह्यते गुह्यम् । गुहू सबरणो । “गुह्यमुपस्थे रहस्ये च” इति हैमी ।

**कीलाल रुधिराम्भसोः ॥ १५ ॥**

कीला लातीति कीलालम् । “कीलाल सधिरे नीले” इति हैमी ।

**मूल्यसत्कारयोरध्यः**

३०

अर्द्यने पूज्यतेऽनेनत्यर्थः । “‘व्यञ्जनाच्च” वच् । होपवत्वादीर्थो न । “न्यद्व्यादीना हश घ.” ।

**जात्यः श्रेष्ठकुलीनयोः ।**

१ अनेऽ स० २१२५७ । २ व्यामोहशब्दस्य मूर्खार्थे मूल मृग्यम् । ३ अनेऽ स० २१३५८ ।

४ कीला ज्वालामलति वारयति । अल पर्याप्त्यादौ । इति जले विप्रह । रुधिरार्थे तु टीकोक्त । ५ अनेऽ

स० ३१६८३ । ६ का० स० ४१५१९९ । ७ का० स० ४१६१९७ ।

अष्टकुलीनयोर्जात्यः । जात्या भवो जात्यः ।

मेघवत्सरयोरब्दः

अवतीति अब्दः । कुन्दादय<sup>१</sup>—“कुन्दवृन्दमन्दादा.” । “अब्दः संवत्सरे मेघे मुस्तके गिरिभिद्यपि<sup>२</sup> ।”

ताक्ष्यो हयगरुत्मतोः ॥ १६ ॥

५

तृक्षस्यात्पय ताक्ष्यं । पुणि ।

स्तब्धतास्थृणयोः स्तम्भः

स्तम्भु इति सौत्रोऽय धातु ।

चर्चा चिन्तावितर्कयोः ।

चर्चण चर्चा ।

हरकीलकयोः स्थाणु

तिष्ठतीति स्थाणु ।

स्वैरः स्वच्छन्दमन्दयोः ॥ १७ ॥

१०

स्वस्य ईर स्वैरः । ३४स्यात ऐतमारेणियोरपि वक्तव्यम् । तथा चालङ्कारे—

‘स्वैरं विहरनि स्वैरं शेने स्वैरं च जल्पति ।

१५

मिष्ठुरेकः सुखो लोके राजचोरभयोऽिङ्गतः ॥”

“स्वैरा मन्दे स्वतन्त्रे च” इति हैमी० ।

शङ्कुः सङ्कीर्णविवरे पलालाग्नौ च कीलके ।

संख्यायाम्

श कायति कूयते वा “शङ्कु ।

२०

काननोद्भूते वह्नौ दावो दवोऽपि च ॥ १८ ॥

काननोद्भूते वह्नौ दावो दवोऽपि च । दुनोतीति दवः । दाव । “वा उवलादिदुनीभुवो णः” ।

कीनाशः कृपणे भृत्ये कृतान्ते पिशिताशिनि ।

तथा पुण्यजनान् प्राहुः सज्जनान् राक्षसानपि ॥१९॥

लोभेन विलश्यते बाध्यते कीनाश । तालव्यः ।

२५

विरोचनो रवौ चन्द्रे दनुसूनौ हुताशने ।

विरोचते इत्येवशीलो विरोचनः ।

हंसो नारायणे ब्रह्मे यतावश्वे सितच्छदे ॥ २० ॥

हन्तीति हस ।

सोमश्वन्द्रोऽमृतं सोमः सोमो राजा युगादिभूः ।

३०

सोमः प्रतानिनीभेदः सोमपोऽगस्त्यदिग्पतिः ॥ २१ ॥

१ का० उ० स० ३१६४ इति दिग्पत्ययः । २ अनेऽ स० २१२२६ । ३ “स्वत्येरेणीरिषु”

का० र०० प०० ३८ । ४ अनेऽ स० २१४८२ । ५ शङ्कतेुस्मात् शङ्कु । “शकि शङ्कायाम्” । औणा-

दिक उ । ६ का० स० ४१२५५। इति ग्रन्थयः “दुदु उपतापे” ।

पुञ्च अभिषेके । अनेन सर्वेषा साधनिका शातव्या ।

अजो विघिरजो विष्णुरजः शम्भुरजस्तमः ।

अजस्त्रैवाषिंको त्रीहिरजो रामपितामहः ॥ २२ ॥

न जायते नोत्पद्यते अजाः ।

५

शुद्धेऽनुपहते वहौ ब्राह्मणे सच्चिदोत्तमे ।

आपादेऽध्यात्मसंवित्तौ ब्रह्मचर्ये शुचिमर्तः ॥ २३ ॥

मतः कथितः । एतेष्वर्थेषु शुचिशब्द । शोचति जनो दैलग्नेऽत्र शुचि । तथा च यशस्तिलकचम्पूकाव्ये-

१०

“न खीभिः सङ्गमो यस्य सर्वद्वन्द्वचिर्जिनः ।

त शुचि सर्वदा प्राहुः मारुत च हुताशनमिति ॥”

अर्थोऽभिषेयरैवस्तुप्रयोजननिवृत्तिषु ।

१५

अर्थशब्द । पञ्चते । अभिषेयश्च शदो वाचक, शब्दमध्ये योऽसावर्य स वाच्यः अभिषेयश्च कथ्यते । रा सुवर्णम् । वस्तु—अस्थादिलोहितादिर्वा । गैरिकान्वित ( दिक च ) वस्तु । प्रयोजनकार्यम् । निवृत्तिश्च मुक्तिः । तासु । शृः गतौ । अर्थते इत्यर्थ ।

भावः पदार्थचेष्टात्ममत्ताभिप्रायजन्मसु ॥ २४ ॥

एतेष्वर्थेषु भावः पञ्चते । भवतानि भावः । “वा” उलादिदुनोमुखो ण ॥

प्रायो भूमोपमातकर्यप्रभृत्यननिवृत्तिषु ।

एतेष्वर्थेषु प्रायः शब्द ।

अन्तः पदार्थमामीप्यधर्ममत्त्वव्यतीतिषु ॥ २५ ॥

२०

एतेष्वर्थेषु अन्तः ।

अक्षो द्यूते वस्थाङ्गे नयनादौ निभीतके ।

द्यूते वस्थाङ्गे रथचक्रावयवे, नयनादौ, निभीतके पूतनायाम अक्षो वर्तते ।

सारः श्रेष्ठे वले वित्ते कोशे जलचरे स्थिरे ॥ २६ ॥

२५

श्रेष्ठे, वले, वित्ते, कोशे, कोशे वा पाठः । जलचरे, स्थिरे सारो वर्तते । सरत्यनेनेति सार ।

३ “बलमत्स्ययोश्च” इति परस्यैवेण वृत्तः । स्वमते “अकर्तरि च कारके सज्जायाम्”<sup>१</sup> इति षष्ठः । “सारो मञ्जस्थिरांशयोः, वले श्रेष्ठे ‘च’ इति हैमी ।

वाचि वारि पश्चौ भूमौ दिशि लोम्नि रवौ दिवि ।

विशिखे दीधितौ दृष्टावेकादशसु गौमर्तः ॥ २७ ॥

पूजा गच्छतीति गौ । गमेडोः ।

३०

चन्द्रे सूर्ये यमे विष्णौ वासवे दर्दुरे हये ।

मृगेन्द्रे वानरे वायौ दशस्त्रपि हरिः स्मृतः ॥ २८ ॥

हरतीति हरिः ।

<sup>१</sup> का० सू० ४२०५५ । २ प्रकृष्टमयन प्राय । “इण गतौ” । एरच् । ३. “सर्तेंस्थिरत्याधि-मत्स्यमले” है० श० ५३३१७ । ४ का० सू० ४५५४ । ५. अनें० स० २०४७८ ।

पदे करिकरप्रान्ते व्योम्नि खङ्गफले गदे ।  
वाद्यभाण्डमुखे तीर्थे जले पुष्करमष्टसु ॥ २६ ॥

पुष्णातीति पुष्करम् ।

शृङ्गारादौ कषायादौ घृतादौ च विषे जले ।  
निर्यासे पारदे रागे वीर्येऽपि रस इष्यते ॥ ३० ॥

शृङ्गारादौ—

“शृङ्गारहास्यकरुणारोद्वीरभयानकाः ।

बीभत्साऽद्भुतशान्ताश्च नव नाटषे रसाः स्मृताः ॥”

कषायादौ—तिक्ताम्लमधुकटकषायेषु । घृतादौ—दुग्धदधिघृततैललवण्येषुरसेषु ।

विषे जले, निर्यासे वृक्षरसविशेषे, पारदे रागे, वीर्येऽपि रस इष्यते ।

५

१०

तीर्थं ग्रवचने पात्रे लघ्वाम्नाये विदांवरे ।  
पुण्यारण्ये जलोत्तारे महासत्ये महामुनौ ॥ ३१ ॥

एतेष्वर्थेषु तीर्थम्<sup>१</sup> ।

धातुः पञ्चसु लोहेषु शरीरस्य रसादिषु ।

पृथिव्यादिचतुष्के च स्वभावे प्रकृतावपि ॥ ३२ ॥

१५

पञ्चम् लाहेषु सुवर्णं नतताप्ररीतिकाम्येषु । शरीरस्य रसादिषु रसासृष्टमासमेदोऽस्थिमज्जुकेषु ।

पृथिव्यादिचतुष्के च पृथिव्यासेजाग्राम्यु (वनस्पति) पु, स्वभावे, वातपित्तश्लेष्मादिषु एतेष्वर्थेषु धातुः पठ्यते । दधातीति धातु ।

प्रधानशृङ्गलाङ्गूलभूपाण्डप्रभावना ।

ध्वजलक्ष्मतुरग्नेषु ललामो नवसु स्मृतः ॥ ३३ ॥

२०

एतेष्वर्थेषु ललामः । ललामन् ।

आकृतावक्षरे रूपे ब्राह्मणादिषु जातिषु ।

माल्यानुलेपने चंच वर्णः पट्सु निगद्यते ॥ ३४ ॥

आकृता, आकृते, रूपे, ब्राह्मणादिषु जातिषु माल्यानुलेपने च वर्णो<sup>२</sup> निगद्यते ।

अकारादावुदातादौ पड्जादौ निस्वने स्वरः ।

२५

एतेष्वर्थेषु स्वरः कथ्यते । अकारादौ—अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, झृ ए, ऐ, आ औं ।

उदातादौ—‘उच्चैरपलभ्यमान उदात्,’ “नीचैरनुदात्.” “समनृत्या स्वरित्.” | पड्जादौ—

“निपादपूर्वभगान्धारष्ट्रजमध्यमध्यवनाः ।

पञ्चमश्चेत्यमी सप्त तन्त्रिकण्ठोत्थिता, स्वराः ॥”

निस्वने शब्दे ।

२०

सङ्केताचारसिद्धान्तकालेषु समयः स्मृतः ॥ ३५ ॥

समयते समयः ।

१ तरति तीर्थते वाऽनेन तीर्थम् । २. “लड त्रिलासे” । डलयोरमेदात् ललतीति ललामः ।

३ “वर्णं शब्दे” । वर्णयति वर्ण्यते वा वर्णं । घञ् कर्मणि, अज्ञवा कर्तरि । ४ सारस्व० स० २ । ५. अम० को० १।७।१ ।

तन्नं प्रधाने सिद्धान्ते सैन्ये तन्तौ परिच्छदे ।  
तन्यन्ते भूत्याद्यन्ते शब्दा अनेनेति तन्त्रम् । अप्रत्यय ।

सत्त्वमोजसि सत्तायामुत्साहे स्थेन्नि जन्तुषु ॥ ३६ ॥

एतेष्वर्थेषु सत्त्वम् ।

५ रूपादौ तन्तुषु ज्यायामप्रधाने नये गुणः ।  
गुणायतीति गुणः ।

ज्ञानचारित्रमोक्षात्मश्रुतिषु ब्रह्मवाग्वरा ॥ ३७ ॥

वरा विशिष्टा ।

अवकाशे क्षणे वस्त्रे बहिर्योगे व्यतिक्रमे ।  
१० मध्येऽन्तःकरणे रन्ध्रे विशेषे रहितेऽन्तरम् ॥ ३८ ॥

एतेष्वर्थेषु अन्तरः ।

हेतौ निदर्शने प्रश्ने श्रुतौ कण्ठसमीकृतौ ।  
आनन्तर्येऽधिकारार्थे माङ्गल्ये चाथ इष्यते ॥ ३९ ॥

इष्यते कथते । अथ एष्वर्थेषु ।

१५ हेतावेवंप्रकारादौ व्यवच्छेदे विपर्यये ।  
ग्रादुभावे समासौ च इतिशब्दः प्रकीर्तिः ॥ ४० ॥

प्रकीर्तिः कथित इतिशब्द एतेष्वर्थेषु । इण गतो । इ । प्रति एवमादिकमर्थमिति ।

“इति ॑अमुर्षणि प्रभृतिन्यो यावत्” इत्यनेनेतिप्रत्यय । इति जातम् । प्रथ० सि । “अन्व-  
॒याच्च” सिलोपः ।

२० घर्मो घनुष्यहिसादावुत्पादादावये नये ।  
द्रव्यक्रियाश्रये वित्ते जीवादौ दारुचैकृते ॥ ४१ ॥

एतेष्वर्थेषु धर्मः । धरतीति धर्मः ।

मूर्तिमत्सु पदार्थेषु संसारिण्यपि पुद्गलः ।  
२५ एतोवर्थेषु पुद्गलाः<sup>३</sup> ।

अकर्मकर्मनोकर्मजातिमेदेषु वर्गणा ॥ ४२ ॥

( अकर्म पुद्गलस्कन्धः ) कर्म-शानावरणादि, नोकर्म—शरीरादि । जातिगोत्रादि । एतेषु वर्गणा  
वर्तते ।

ऐश्वर्यस्यासमग्रस्य वीर्यस्य यशसः श्रियः ।  
३० वैराग्यस्यावबोधस्य षणां भग इति स्मृतः ॥ ४३ ॥

भजन्त्यस्मिन्निति ४भगः ।

प्राहुः कौवल्यमार्हन्त्ये विविके निर्वृतावपि ।

१. कातन्त्रेऽस्य शुद्ध रूप नोपलब्धम् । २. का० स० २।४।४ । ३. पूर्यन्ते पुनः पुन सत्यधर्मे  
इति पुरः । गलन्ति विलीयन्ते गलाः । पुरश्च ते गलाश्च, पुद्गलाः । पृष्ठोदरादित्वाद्रस्य द । ४. भव्यते  
सेव्यते धार्यते वा भगः ।

केवलस्य भाव कैवल्यम् ।

लब्धिः केवलबोधादाविष्टासौ नियतौ श्रियाम् ॥ ४४ ॥

लम्बन लब्धिः ।

अनेकान्ते च विद्यादौ स्यान्निपातः श्रुते क्वचित् ।

‘स्यात् भवेत् एतेष्वयेषु निपातः ।

५

भैद्रारको धर्मचन्द्रस्तपद्मे धर्मभूषणः ।

तत्र देवेन्द्रकीर्तिः श्रीकुमुच्चन्द्रस्नतः परम् ॥ १ ॥

धर्मचन्द्रस्ततो ज्ञानसागरस्तपदेऽभवत् ।

तेन पुस्तकमेतद्वि दत्तं ( लोकहितेच्छया ) ॥ २ ॥

इति

धनञ्जयनाममाला सटीका समाप्ता

१ स्यात् इत्याकारको निरात एतेष्वयेषु इति सम्बन्ध । २ इतः पर मुद्रितपुस्तकेष्वधिकः पाठ उपलब्धते, तद्यथा—‘दर्शनादौ मणौ रन भव्यः शते प्रसेत्यति ॥४५॥ परमात्मा जिने सिद्धे पर-  
मेष्ट्यर्हदादिषु । सिद्धाः सिद्धनिष्ठायामर्हत्सिद्धधन्नियामपि ॥४६॥ अर्हत्सिद्धमिति द्रावप्यर्हत्सिद्धाभिधा-  
यिनौ । अर्हदारीनपि ग्राहुः शरणोत्तममङ्गलान् ॥४७॥ इति । ३ अत्राशुद्दिदोषात् किञ्चित्पाठमेद् ,  
स च शोधित इत्यरूपं संवृत्तः ।

## अनेकार्थ-निघण्टुः

गम्भीरान् रचिरांश्चत्रान् विस्तीर्णार्थं प्रसाधनान् । कष्टशब्दान् प्रवक्ष्यामि कवीनां हितकाम्यया ॥१॥  
 बागिदभूरश्मिवज्ञेषु पश्वक्षिस्वर्गवारिषु । नवस्वर्थेषु मेधावी गोशब्दमुपलक्षयेत् ॥२॥  
 क प्रजापतिरुद्धिष्टो को वायुरभियते । कः शब्द स्वर्गमाण्याति क इत्यात्मा मत व्यवचित् ॥३॥  
 सलिल कमिति ज्ञेय शिर कमिति चोच्यते । देवाननिमिषानाहुर्मत्स्याननिमिषास्तथा ॥४॥  
 अग्निश्च वर्हण चैव वृक्ष कुष्कुट एव च । शिखिनोऽभिहिता शस्त्रं पृथुकश्च मत शिखी ॥५॥  
 हसो नारायणः प्रोक्त व्यचिद्वासो दिवाकर । अश्वश्चापि स्मृतो हसो हसश्चापि विहृगम ॥६॥  
 सारमस्सरसिजेन्द्रो पतञ्जयि च सारस । राजाऽपि नृपतिज्ञयो राजा चोक्तो निशाकर ॥७॥  
 विभावमुहुर्ताश स्याञ्छ्वेतच्छत्र व्यचिद्द्वैते । हिमाराति स्मृतो वह्नि हिमारातिश्च भास्कर ॥८॥  
 धनञ्जयेऽनिवृद्याद्यातो पार्थश्चापि धनञ्जयः । बीभत्सह्य मत पार्थौ बीभत्सो विकृत स्मृत ॥९॥  
 अग्निविरोचन प्रोक्तो भास्करस्तु विरोचन । विरोचनश्च चन्द्रं स्यात्क्वचिद्द्वैत्यो विरोचन ॥१०॥  
 पाञ्चजन्य व्यवचिद्विति, व्यवचिद्वैत्यो निगद्यते । कम्बुश्च गदितः शङ्खं कम्बुरिष्टश्च कुञ्जर ॥११॥  
 भास्करोऽनि समुद्दिष्टः सहस्राशुरपि व्यवचित् । पतञ्जो दिनकृद ज्ञेय, पतञ्ज शलभः स्मृत ॥१२॥  
 कोशिको वेवराज स्यादुलूकश्चापि कौशिक । शम्भुर्क्षात्र च विष्णुश्च शम्भुश्चैव महेश्वरः ॥१३॥  
 शृष्टेनुभूत शडकु शडकु कीउ इहोच्यते । जम्बुको वरणो ज्ञेय शृगलश्चापि जम्बुकः ॥१४॥  
 अक इष्टस्तु मधवान् घर्माशुरक उच्यते । मन्थो राहुश्च चन्द्रश्च ग्रहो मन्थो निरुच्यते ॥१५॥  
 केतवो रक्षमयो ज्ञेयाः केतवश्च महाध्वजाः । तमोनुद सहस्राशुरधिनश्चापि प्रकीर्त्यते ॥१६॥  
 मयूखा किरणा ज्ञेया मयूखाश्चापि कोलका । सप्तविष्टत्सव प्रोक्तः सप्तान्ये क्रवय, व्यवचित् ॥१७॥  
 चस्त्र शवरा उक्ता देवात्म च वस्त्रो मताः । नक्षत्रं धिष्ठ्यमित्युक्तं गेह धिष्ठ्य मत व्यवचित् ॥१८॥  
 बासाऽम्बरमिति ख्यातमन्द्रर च नमःस्थलम् । पय सलिलमुद्दिष्ट पय क्षीर मत व्यवचित् ॥१९॥  
 शिव पानीयमुद्दिष्ट शिव श्रेय शिव सुखम् । शिव व्योमर्पति प्राणः शिव श्रेष्ठ प्रचक्षते ॥२०॥  
 क्षर जल विजानायात्क्वचिन्मेध विदुः क्षरम् । स्यन्दनं चाम्बुर्निर्दिष्ट स्यन्दनश्च महारथः ॥२१॥  
 कृष्ण तम समाख्यात कृष्णश्चाधोक्षजस्तथा । अमृतं क्षीरमित्युक्तं व्यवचित्वेष्ट समुद्रजम् ॥२२॥  
 शय च सलिल प्रोक्तं मृतमाहु शव तथा । तोय धूतमिति प्रोक्तं धूतं सर्पि व्यवचिद्द्वैत् ॥२३॥  
 पातीय च विष प्रोक्त व्यवचिद्वालाहल विषम् । हस्तिहस्त कर प्रोक्त करो हस्तः प्रचक्षयते ॥२४॥  
 कोलाल सधिर प्रोक्त नीर चेव प्रशस्यते । भुवन सलिल प्रोक्त आकाश भुवन स्मृतम् ॥२५॥  
 प्रवाल कोमल ज्ञेय कोमल स्पष्टवाचकम् । तदन च स्मृतं तोय सदन वेशम उच्यते ॥२६॥  
 तोय सद्येति गदित निलय सद्य निगद्यते । सवर च जल प्रोक्त सवरः पर्वतो भवेत् ॥२७॥  
 सवरत्वाऽमुर स्यातो यो बिभर्ति रसा प्रियाम् । स्वरत्वाक्षमास्त्रिदा प्राहुरिडा चाम्बरदेवताम् ॥२८॥  
 पत्नी चन्द्रेरिडा प्राहुरिला तत्समता गता । अदिति पृथिवी ज्ञेया देवमाताऽदिति व्यवचित् ॥२९॥  
 अध्यृष्टा भार्या परित्यक्ता त्वद्द्विदिश्च निगद्यते । वृषो धर्मं व्यवचित्तेयो गवामपि पतिवृष्ट ॥३०॥  
 वृषा कण्ठश्च गदितो वृषा चोक्तः शतक्रतु । रोहिणेयो बल प्रोक्तो रोहिणेयो बुध व्यवचित् ॥३१॥  
 बलदेवो मत शेषो नागो वा शेष उच्यते । रामस्तु लागली ज्ञेयो रामो दाशरथि व्यवचित् ॥३२॥  
 रामश्च शुक्लो वर्णो रामश्च धन्वनाशनः । वराह केशवः ख्यातो वराहो जलद व्यवचित् ॥३३॥  
 वराह शकरो ज्ञेयो विष्णुमेघो हरिस्तथा । अजाराट्स्मरेनद्वो ज्ञेयास्त्रिनेत्रश्चाप्यजो मत ॥३४॥  
 अज पशुश्च विलयातो तथाजो ब्रह्मकेशवो । शरीरजः स्मृतो गोग पुत्रश्चापि शरीरजः ॥३५॥

जय पुष्करमब्जं च नागनासामयमेव च । कूलं नभः समाख्यात् कूलं रोधं प्रचक्षते ॥३६॥  
 ख चानन्तमिति प्रोक्तमनन्तं च बलं क्वचित् । विष्णुं क्वचिदनन्तं स्थानागश्चानन्तं उच्यते ॥३७॥  
 प्रजापतिः स्मृतो राजा ब्रह्मा चापि प्रजापतिः । प्रजापतिः स्मृतं क्षत्ता क्षत्ता च चरं उच्यते ॥३८॥  
 वामं पथोधरं प्रोक्तो वामं स्यावद्विविष्ट हरः । वामश्च मदनं प्रोक्तो वामश्च प्रतिकूलके ॥३९॥  
 आगोपो गोपको ज्ञेयं क्वचिदागोपको ध्वजः । उरश्चाङ्गुं समाख्यातः स्थानमङ्गुं स्मृतस्तथा ॥४०॥  
 वासरस्तु स्मृतो नागो वासरो दिवसो मतः । विभावसुनिर्देशं ज्ञेया गन्धर्वं च क्वचिन्मतः ॥४१॥  
 शर्वदीर्थात्रयः प्रोक्ता शर्वर्यं चित्रयो मताः । सान्द्रं धनमिति प्रोक्तं स्त्रिधं सान्द्रं निगद्यते ॥४२॥  
 स्वः स्वर्गस्य मतं नाम स्वः सुखं क्वचिदुच्यते । स्व आत्मा चैव निरिष्टः स्वं प्रोक्तो गृहमूषिकं ॥४३॥  
 ककुञ्छलन्दोविशेषज्ञो मतः शास्त्रेषि ना ककुपः । ककुम्भीरुहं प्रोक्तो ज्ञेयस्तु ककुभो दिवः ॥४४॥  
 क्षयं वेशम् समुद्दिष्टं क्षयं रोगं प्रचक्षते । जन्दस्तु प्लवो ज्ञेयं प्लवो ज्ञेयस्तथोडुपः ॥४५॥  
 प्रासादो मण्डपं प्रोक्तो विहारश्चापि कथयते । धनं धनं विजानीयाद् धनं विपुलमुच्यते ॥४६॥  
 प्रयुज्यते च कस्त्रिच्छदं धनं सङ्घातवायायो । वृहथं स्यन्दनाप्य स्याद्रूपं वेशम् उच्यते ॥४७॥  
 चमूश्च वर्मं तहसा प्रवदन्ति मनीरिपः । अमुराश्च मुरा ज्ञेया क्वचिद्वारयोऽमुरा ॥४८॥  
 नागाश्च द्विरदा ज्ञेया पन्नाइव क्वचिन्मता । गन्धर्वं च तथा वायुं क्वचिदन्म्याद् देवगायन ॥४९॥  
 नार्थीं हयं समुद्दिष्टस्त्राकर्त्रं चापि पनत्रिगाटः । बालेपानमुग्नानाहुवलियाद्वचं क्वचित् खरान् ॥५०॥  
 नृणो वनस्पति प्रोक्ता क्वचिदप्राइचं कथयते । शिवरो वृक्षं उटिष्ट शिवरो पद्मं स्मृत ॥५१॥  
 दिजो विप्रश्च दन्तश्च दिजं पक्षो निगद्यते । चौरो मतिम्लुचो ज्ञेयो वातश्चापि मतिम्लुच ॥५२॥  
 आन्तजं रक्तपुद्दिष्टं सुतं कामस्तयैव च । कीनाशो मृतको ज्ञेयं कीनाशश्चापि राक्षस ॥५३॥  
 कीनाशोऽग्निं कृतनश्च कृपणो यमं एव च । कीनाशो कर्षको ज्ञेयं कीनाशश्च वृकोदरः ॥५४॥  
 अवदात प्रधानं स्यादवदानं च पाण्डुरम् । ज्योतिलर्णवेनमिष्टं ज्योतिनक्षत्रमुच्यते ॥५५॥  
 ज्योतिश्च गदितो वह्निं काव्येषु मुनिषुहृदये । प्रधानं नज्जनं ज्ञेयं प्रधानं श्वेतमुच्यते ॥५६॥  
 अद्वः सवत्सरो ज्ञेयो मेषधश्चापि क्वचिन्मत । बलाहका महामेवा शिवरी च बग्धाहक ॥५७॥  
 तोयदं जन्द प्राहुस्तोयदं कथयते धूतम् । जीमूतश्च मतो नागो जीमूतं क्वचिदस्वृद्ध ॥५८॥  
 पोलस्त्यं तु मतं युद्धं पोलस्त्यं पोरुषं विदु । शुचिरुद्रवकश्चनैव प्रोक्तो निन्द्रं ब्रुदं रम ॥५९॥  
 परजन्यं जलदं प्राहु पर्जन्यं तु शतकनु । शिशीमुखा स्मृता वाणा भ्रमगश्च शिशीमुखा ॥६०॥  
 लेखा सीमेति विज्ञेया लेखा प्रित्रकृतो मना । अम्बरीषं क्वचिदभ्याषु वर्तिलुद्धं निगद्यते ॥६१॥  
 पुस्तवं चापि मतं युद्धं पुस्तवं पोरुषमुच्यते । विद्वामोर्फिप्तो ज्ञेया विद्वासम्बवस्वो मता ॥६२॥  
 मायाऽविद्येति विज्ञेया क्वचिन्माया तु सावरी । मधुं द्राक्षीति विज्ञेया क्वचित्स्यान्मधु माक्षिकम् ॥६३॥  
 मधुं चाम्बु समाख्यात् सुरा च मधुसन्तका । ख रध्मिति विज्ञेयं ख गृहं नभं एव च ॥६४॥  
 खमिन्द्रियमिति स्थायात् ख च नक्षत्रमुच्यते । धार्तराष्ट्रा महाहसा धूतराष्ट्रमुता क्वचित् ॥६५॥  
 प्रभाकरो मतं सूर्यो वह्निश्चापि प्रभाकर । सितं शक्लमिति ज्ञेयं सितं बद्धं प्रचक्षते ॥६६॥  
 असितं कृष्णमित्युक्तं अशितं भक्षितं स्मृतम् । वभूस्तु नकुलो ज्ञेयं पाण्डवो नकुलस्तथा ॥६७॥  
 त्रिशङ्कुमाहुर्मार्जरमविश्चापि तयेष्यते । यमस्तु वायसो ज्ञेयो यमं प्रेताधिष्ठितस्तथा ॥६८॥  
 लक्षणं सारसं विद्यात्तथा दशरथात्मजम् । लक्षम् चान्द्रस्य काठ्यं स्यालक्षम्यं केतुः प्रकोपितम् ॥६९॥  
 केतुश्चापि मतं काव्ये लक्षमेति मुनिषुहृदये । जारुण्यं स्मृतो दक्षो दक्षश्चाचेतसं क्वचित् ॥७०॥  
 आशुकारी भवेद्दक्षं स्यादलो तोमरं स्मृत । अदित्यं च र्वं विद्याद् दंत्यश्चायदिते सुत ॥७१॥  
 रोगो रजस्तथा रेणूं रजो लोहितमुच्यते । स्वन्धो नितम्बवस्त्रं स्यान्तितम्बं जघनं तटम् ॥७२॥  
 हेमं वस्त्रिति विज्ञेयं वसुं तेजो निगद्यते । सारङ्गं चातकं प्राहुः स्वर्णं चापि सितासिती ॥७३॥  
 रम्भाश्च कदली प्राहुं रम्भा स्वर्णाङ्गुना मता । प्रावाणो गिरिजा प्रोक्ता मेषधश्चापि मनीषिभि ॥७४॥

..... . . . . . निगद्यते । औषण रसमुद्दिष्टमृत सत्यमपि विवित् ॥७५॥  
 अक्ष आत्मेति विज्ञेयः केचिदाहुर्बिभीतकम् । ज्ञेयमिन्द्रियमक्ष च शाकट कर्ष एव च ॥७६॥  
 अक्ष च पाशक विद्याद्वयचवहारिकमेव च । पदमिन्द्रियमित्युक्तं पद्य तामरस विदु ॥७७॥  
 चंत्यमायतनं ब्रोक्तं नीडमायतनं तथा । पुष्पं लोहितमुद्दिष्टं पुष्पं च कुसुमं तथा ॥७८॥  
 वाजी तुरङ्गमो ज्ञेयो वाजी श्येनो विहङ्गमः । विलिवन्दिसिहमण्डूकचन्द्रादित्यांस्तु वानरान् ॥७९॥  
 अभृतशिवानिलहृष्णः हरीनिछल्निति कोविदाः । पुरुषवज्रलिङ्गेषु हृष्णभूषणलक्ष्मणु ॥८०॥  
 रामशेषावनीन्द्रेषु ललाम नवसु स्मृतम् । शुक्रा स्मृताऽधिविदेषोना लबली मञ्जरी तथा ॥८१॥  
 वक्षवक्ष शको ज्ञेय कोकिला वचनप्रिया । पुलिन जलविच्छेदं पञ्चाङ्ग स्यात्कुशेश्यम् ॥८२॥  
 रतं पापमिति ज्ञेय सत्वरं शीघ्रमुच्यते । पिण्डं रोचनाभं स्याम्बेचकस्तिलको मतः ॥८३॥  
 ललाटेऽवस्थित चिह्नं विविद्वस्तिलकं मतम् । परिचर्यं च कटकं निकपस्तु कवो मतः ॥८४॥  
 नानारत्नेष्यविचिता मञ्जूषं रागिणी स्मृता । दिनकृद्वार्जिसिद्धेषु केसरित्वं विधीयते ॥८५॥  
 अव्ययक्तो मधुरं शब्दः कलं इत्यभिधीयते । अलातमुलकं ज्ञेय छेदो नामं भयङ्कर ॥८६॥  
 भावं शृङ्गारसाधुर्यं भावोऽवस्थाप्ररूपणम् । विलासं कामजो दोषस्तदेव ललित मतम् ॥८७॥  
 उत्तमाङ्गं विना देह कवन्धं चेति शस्यते । गिरसो वेष्टनं यद्वै तदुण्णीषं निगद्यते ॥८८॥  
 आहृतं समवीर्यं स्यान्निविडं पीडितोन्तम् । मण्डको भेकसज्जः म्यादर्षाभृत्वातको मतः ॥८९॥  
 शिवा पिङ्गलनी ज्ञेया विशालं सबलं मतम् । दुर्द्वर्षा शिपिविष्टं स्यात्कर्षकस्तु कृषीबल ॥९०॥  
 कन्याजातश्च कानीनो पण्डं कलीब इति स्मृतं । उत्कष्टं श्वसुरं स्याता म्लिष्टमव्यवत्वाचकम् ॥९१॥  
 रवनो हस्तवत्तं स्याद्वानं कटकसज्जितम् । तोदनं चाइकुशं विद्यादालाम हस्तबन्धनम् ॥९२॥  
 घनाघनं इति ख्यातं शास्त्रेष्वधिकपौरुषं । अपाचीनं मनोजं च बुद्धिज्ञेया तु शेमुषी ॥९३॥  
 अर्कस्तु पादपे ज्ञेयो नदी स्यात्केनवाहिनी । अश्वारोहो मरुद्यानोऽश्वानां हृदये ध्वनि ॥९४॥  
 आकून्व इति विज्ञेयं खुराश्च शफसीजिता । आममासं भवेन्कव्यं पक्वं पिण्डामुच्यते ॥९५॥  
 शुक्रं तु विरसं ज्ञेयं मृष्टं सरसमुच्यते । शङ्खं शुक्तिजं चैव वाराहं निमिमौकितकम् ॥९६॥  
 वशादाशीविष्णवान्नागाज्जीमूताच्च तथाष्टमम् । लोकज्ञो दक्षिणो ज्ञेयो दक्षिणश्च तुरं स्मृतं ॥९७॥  
 आकूतं तु मतं विद्यात्कष्टं गहनं मतम् । आननं चाकुले नेत्रे चिकुरं चापि शस्यते ॥९८॥  
 पापं श्यामं इति प्रोक्तो वभ्रुस्तु कपिलो मत । स्थविष्टं स्थावरे चैव दविष्टं दूरमुच्यते ॥९९॥  
 परमेष्ठो मतं श्रेष्ठं प्रेमं प्रियमुदाहृतम् । प्रकाशं स्त्रीगृहेरक्तं शैलूषं इति सज्जित ॥१००॥  
 पवक्त्रचम्पकारं स्यान्नापितस्त्वजयं स्मृतं । लावण्यमाहूर्मधुर्यं चित्रं च शुभकम्पमजम् ॥१०१॥  
 व्याधयश्चामया प्रोक्ता पानीयं तु समुच्चय । आधयस्तु स्मृता प्राज्ञैश्चित्तोत्पन्ना उपव्रवा ॥१०२॥  
 रहो वेगं समाख्यातं सत्रं सच्चरितं स्मृतम् । आलदालं स्मृतं सद्भिरपा वेगनिवारणम् ॥१०३॥  
 चटकं कलविङ्गं स्यात्तुल्यं सदृशमुच्यते । किलासं पाण्डुरं ज्ञेयं दोला प्रेष्टुति शस्यते ॥१०४॥  
 मन्दिवरं नगरं ज्ञेयं निलयं चापि मन्दिरम् । सहस्रनयनोऽगारं प्रधनं युद्धमुच्यते ॥१०५॥  
 पलाशो हरितो वण्णो मेचको नीलपित्तजर । उक्षणं वृषभं विद्याल्लुलायो महिषो मत ॥१०६॥  
 उस्त्रा वध्या वसा वेहत् पृष्ठोही गर्भणी हि या । व्याख्यातो मस्करो वेणुस्त्वचिसारं परिकीर्तित ॥१०७॥  
 हिलं कामं शपं चैव रोषमाहूर्मनीषिण । कलभोऽल्पवयो नागं कलुषं चाविलं मतम् ॥१०८॥  
 वृजितं कुटिलं विद्यात्सन्नाद् राजा च भूभुजौ । रत्नं चत्रं विजानीयात्त्रियामा क्षणवा मता ॥१०९॥  
 द्वीर्घं प्राशु विजानीयात् हस्तं नीचकमुच्यते । भूरि प्रभूतमुद्दिष्टमभितः सर्ववाचकम् ॥११०॥  
 पवनश्वानिलो ज्ञेयं पवनश्चाधमो जन । प्रियवाक्यो भवेदार्यं स्नातश्च परिकीर्तित ॥१११॥  
 आङ्गद्वरकचं पटहो व्यञ्जनं बोधनं मतम् । विपची वल्लकी ख्याता बोणा चैव निगद्यते ॥११२॥  
 मालतीं सुमना ज्ञेया सुमना मुदितो जन । वल्लरी मञ्जरी ख्याता प्रपात्प्रशाला प्रकीर्तिता ॥११३॥

आयुर्निश्चयते तोयं तेन जीवति पथकम् । तस्य पत्राक्षिभानेन रामो राजीवलोचनः ॥११४॥  
 उत्कृत्य कवच देहादसुगदध च यत्युता । इन्द्राय वत्तवान्कर्णस्तेन वैकर्तन स्मृत ॥११५॥  
 तीर्णशिश्चंव प्रचण्डश्च बृको नामानलो भात । स पाण्डवस्य उद्वरे तेन भीमो बृकोदर ॥११६॥  
 यस्य श्रुतिसुखा वाणी पुण्य-श्लोक स उच्यते । य खेदो चानिवर्ती च पुद्गशौण्डः स उच्यते ॥११७॥  
 महासर्गसञ्चात महेऽवास प्रचक्षते । स्वविक्रमेस्तापयेऽच पर . . यूथ तापयेत ॥११८॥  
 यूथ तापयेष्ट विजेयश्च स यूथप । तस्मादपि च यो वर्य स तु यूथपूथप ॥११९॥  
 सिहानिन्तान्तसौबोर स नृसह इति स्मृत । ये हि स्पष्टप्रवक्तारो मतास्ते व्यक्तवादिन ॥१२०॥  
 यो यमित्य च नाम्नाति स कीनाश इति स्मृत । योप्रबुद्धोऽल्पबुद्धिश्च स तु मन्द इति स्मृत ॥१२१॥  
 उपकार तु यो हन्ति स कृतधन इति स्मृत । हर्षे गर्वे सुखे खेदे वृद्धो च प्रतिभासते ॥१२२॥  
 स्वेहभाग्यक्षये चैव मन्दशब्दो निगद्यते । नातीत्य वर्तने यत्र तदध्यात्म प्रचक्षने ॥१२३॥  
 चेतसश्च समाधान समाधिरिति गद्यते । सर्वक्लेशविनिर्मुक्तो स हि दानत इति स्मृत ॥१२४॥  
 निर्भंमो निरहङ्कारो विजेय छिन्नसशय । प्रदाता देशकालत समाधिस्यः स उच्यते ॥१२५॥  
 मुखरोऽल्पमतिर्यस्तु सक्रोधश्चैव कोटक । वृत्तिर्यत्र तु गृह्याना परोक्षे बहि तत्क्रिया ॥१२६॥  
 आहारव्यवहारेषु सा प्रीतिर्निरप्स्करा । परस्पर स्वदारेषु सता येषा प्रवर्तते ॥१२७॥  
 विश्वभात्रप्रणयाद्वापि सा प्रीतिर्निरप्सदवा । यज्ञ ख्यातिरिति प्रोक्त तद्योगात्प्राहुरच्यते ॥१२८॥  
 कीर्तत्यातिपश्योगाद् भगवन्निति चोच्यते । प्रियदानेषु य शुद्ध स उदार इति स्मृतः ॥१२९॥  
 रजस्वन्ना तु या नारी सा चोदयथा प्रकीर्तिता । प्रीतिर्भविक्षये स्वच्छरक्षालिगितनु विपुम् ॥१३०॥  
 तेजो रेतसि दीप्तौ तपो हि स्याद् वृथार्थक । योऽन्यजातो हनो जीव स शराह इति स्मृत ॥१३१॥  
 मिथ्यादृष्टिरहमानी नास्तिक स प्रकीर्तित । कामः ऋषिश्च वै पूर्वे लोभोऽसत्य च मध्यमे ॥१३२॥  
 अन्ते मोहो विषादश्च यस्य ज्ञेय स षड्वद । अमृते जारज कुण्डो भृते भर्तंरि गोलक ॥१३३॥  
 अनयोर्योऽन्नमठनाति स कुण्डाती निगद्यते । भ्रूणस्त्री गर्भिणी बाला ब्राह्मणी वृद्धजीविनी ॥१३४॥  
 परचित्ते यतोयान् यो ज्येष्ठपत्नी परामृशन् । यः पश्चिमश्च ज्येष्ठोऽपि परचित्त स उच्यते ॥१३५॥  
 पुष्पज क्षोमज चर्मसकोशज भर्मज तथा । गुणज च समुद्दिष्ट तदभेदा वस्त्रजातिषु ॥१३६॥  
 बिम्बारकतथारा या स्त्री बिम्बोऽष्टी ता विनिर्दिशेत् । या स्यात् सकीडनपरा ललना ता विनिर्दिशेत् ॥१३७॥  
 दूषकाण्डप्रतीकाशा कुभौ यस्यास्तनू कुचौ । सर्वरूपविविक्ताङ्गी सा भवेद्वर्वाणिनी ॥१३८॥  
 लावण्ययुक्ता या नारी ललिता ता विनिर्दिशेत् । या मत्ता मत्तवज्जयोति. सा ज्ञेया मत्तकाशिनी ॥१३९॥  
 भूरिश्च भूरिमुद्दिष्ट अन्न श्रव इति स्मृतम् । भूरि श्रवो ददातीह तस्माद् भूरिश्रवो हि स ॥१४०॥  
 चतुष्पादविशतिभुजो लोहितशीव एव च । निसर्गाद्वाहणात्कूराद्रवणाद् रावण स्मृत ॥१४१॥  
 रोषणा या भवेद्वारी भासिनी ता विनिर्दिशेत् । व्ययोधलक्षण विद्याद्वाहाना परिमण्डलम् ॥१४२॥  
 ताभ्यामुपेता वर्तना न्ययोधपरिमण्डला । तत्तुल्ये चक्षिणी यस्या सा स्त्री राजीवलोचना ॥१४३॥  
 वर्णप्रमाणनिर्धोषोऽल्पिण्डसपद्भिरन्वित । राजीवमन्ये शतन्ति स्त्रियन्धर्वण सितासितम् ॥१४४॥\*  
 किंचिदुत्तरतयोगात्सीता राजीवलोचना । बलिभिर्यस्त्रिभिर्युक्ता शङ्खकणी उदाहृता ॥१४५॥

जराकराकार स्यन्दनाप्रभिवाग्रत । वस्त्वे ति तज्जेय तस्यवाप्त ॥१४६॥

त भर्मसयुक्त तत्थालिनमुच्यते । ग्रहणे धारणे सामे बाहने धर्मसयुता ॥१४७॥  
 रमणे श्रीङ्गे सङ्गे भार्या नाम प्रवर्तते । मूढतायां सविद्याया सप्ताश्वस्त्वशुमालिनि ॥१४८॥  
 विषमाक्षदरा एते ज्ञेयाप्तं विस्थिता । कोटरस्था इति ज्ञेया सर्पकीदखगादय ॥१४९॥  
 आताप्रपलवो यस्तु वृक्षाणामचिरोद्गम । ॥१४०॥

सौकुमार्य किसलय कोमलत्व च तस्मृतम् । शताना च चतुर्हस्त नल्व तदिहसनितम् ॥१५१॥

\* नोट—मूल प्रतिमे १४४ से १४८ तक के पदोपर उनके नम्बर नहीं पढ़े हैं।

कुम्भो वाह प्रस्थ सम नत्व इति विधीयते । विपिन शून्यमित्युक्त विपिन गृहमेव च ॥१५२॥  
 हकम वर्णं च वाम च वर्णनीयार्थवाचक । सर्वार्थश्चाप्युवर्णं च पानीय शीतमुच्यते ॥१५३॥  
 नोहार शीतमित्युक्त प्रदोषान्तो निशीयक । ..... ॥१५४॥  
 इति महाकविश्रीघनञ्जयकृते निघण्टुभमये शब्दसकीर्णे अनेकार्थप्रस्पष्णो द्वितीयपरिच्छेद ॥२॥

### एकाक्षरी-कोषः

विश्वाभिधानकोशानि प्रविलोक्य प्रभाव्यते । अमरेण कवीन्द्रेणैकाक्षरनाममालिका ॥१॥  
 अ कृष्ण आ स्वयम्भूरि काम ई श्रीहरीश्वर । ऊ रक्षणं ऊ ऋ ज्ञेयो देवदानवमातरौ ॥२॥  
 लृदेवसूर्लवरिही भवेदेविष्णुरे शिव । ओर्बेष्ठा औरनत स्पाद ब्रह्म परमअ शिव ॥३॥  
 को ब्रह्मात्मप्रकाशाके क स्याद्वायुयमानिषु । क शीर्षं सुखे कुस्तु भूमो शब्दे च कि पुन ॥४॥  
 स्यात्क्षेपनिन्दयो प्रश्ने वितके च खमिन्द्रिये । स्वरगे व्योम्नि मुखे शून्ये सुखे सविदि खो रवो ॥५॥  
 गस्तु गातरि गधब्बे गा गीतौ गो विनापके । स्वर्गे दिशि पश्चो वज्रे भूमाविन्दौ जले गिरि ॥६॥  
 घस्तु सुघटीशे धा किकिष्या च धृधर्वनौ । डो भजने डो वृष भेजिने च चन्द्रचौरयो ॥७॥  
 च सूर्ये कछुपे छ तु निमंले जस्तु जेतरि । विजये तेजसि वाचि पिशाच्या जि जवेऽपि च ॥८॥  
 झो नष्टे रवे वायो झो गायने घर्घरधन्वनौ । ट पृथिव्या करटे च ठो धवनौ ठो महेऽवरे ॥९॥  
 शून्ये वृहद्भूनो चद्भमडले ड शिवे धवनौ । ढो भये निर्गुणे शब्दे ढकाया णस्तु निश्चये ॥१०॥  
 ज्ञाने तस्तस्करे झोडपु चछयोस्ता पुनर्दया । यो भीत्राणे महीधे द पत्या दा दातृदानयो ॥११॥  
 बन्धे च धा गुह्ये केशे धातरि धीमतो । धूर्भारकर्पाचतासु नो नरे बन्धुबुद्धयो ॥१२॥  
 निस्तु नेतरि नु स्तुत्या नौ सूर्ये पस्तु पातरि । पावने जलयाने च फो ज्ञानाजलफेनयो ॥१३॥  
 भा: कातौ भूर्भुव स्थाने भीर्भये म शिवे विधी । चद्रे शिरसि मा माने श्रीमात्रौवारणेऽव्ययम् ॥१४॥  
 मु पु सिंबं धने यस्तु मातरिइवनि य यश । यास्तु यातरि खट्वागे याने लक्ष्या च रो धृतौ ॥१५॥  
 तीव्रे विश्वानरे कामे रा स्वर्णे जलदे धवनौ । री भ्रमे र्भये सूर्ये ल इद्रे चलनेपि च ॥१६॥  
 ल तेले ली पुन श्लेषे ली भये वो महेऽवरे । व पठिचमदिशास्वामी व इवार्थे स्मरेऽप्ययम् ॥१७॥  
 श शुभे ज्ञा तु शोभार्थं शो शयने शु निशाकरे । ष शिलष्टे पुनर्गम्भे विमोक्षे ष परोक्षके ॥१८॥  
 सा लक्ष्या हो निपाते च हुस्ते दारणि शूलिनि । क्षेत्र रक्षसीत्युक्ता माला प्राक्सूरिसम्मता ॥१९॥

इति एकाक्षरी नाममाला समाप्ता ॥४॥

## धनञ्जय-नाममालागतशब्दानुक्रमणिका

शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक
अ	अ		अन्यर्थ	८३	१७३	अन्तक	७१	१४५
अग्	२३	४५	अदभ्र	९०	१९१	अन्तरित	२८	५३
अगुक	५९	११७	अदिनिमुत	३०	५६	अन्त्य	६३	१२४
अस	५०	१०१	अदभूत	८४	१७४	अन्त्यकाशयप	५८	११५
अहम्	६६	१३०	अटि	४	८	अन्वेषासिन्	३	४
अहिप	५	११	अधम	{ ७३	१५४	अन्वकार	७२	१४८
अकूपार	१२	२५	अधर	{ ८१	१६८	अन्वय	६३	१२४
अक्ष	{ ६१	१२२	अधिप	५	१००	अन्ववाय	"	"
	{ ६५	१३०	अधोक्षज	३७	७५	अन्वह	७९	१८९
अक्षित	४९	९९	अध्वन्	७८	१६२	अन्वित	७७	१६१
जदार्हाहीर्णा	४३	८६	अनलतर	६०	१४१	अन्वीत	"	"
अमिल	८८	१८७	अनन्तन	३६	७३	अह्लाय	७६	१५७
अग्	५	११	अनन्यतम्	३९	७३	अप्	७	१५
अग्नि	३३	६४	अनन्यज	३९	७७	अपघन	१९	३८
अग्निमूल्	३४	६६	अनभ्राट	८	१८	अपत्य	१९	३९
अग्रज	{ २१	४३	अनल	३३	६५	अपाह्न	४९	९९
	{ ५७	११४	अनामन	८९	१८९	अपाख्वार	१३	२५
आग्रिम	७५	१५६	अनालम्ब	६३	१३५	अप्राज	८०	१६६
अज	६६	१३०	अनिमिष	{ } ८	१७	आसरोनाथ	३०	५९
अड़	८०	१६५	अनिमेष	{ } ८	१७	अबला	१५	३१
अहृत्	११	३८	अनिल	३२	६२	अद्वज	२७	५१
अह्नना	१४	३०	अनीक	४३	८६	अद्वित	१२	२५
अह्नराम	६०	११९	अनुकम्भा	५४	११०	अभय	९१	२००
जह्नाकृत	९१	१९७	अनुक्रोध	"	"	अभियोग	८४	१७४
अटिप्र	५१	१०३	अनुरुग	१४	२९	अभिराम	८५	१७५
अटिप्रा	५	११	अनुचर	"	"	अभिरूप	५५	१११
अचल	४	८	अनुज	२१	४२	अभिलाप	७७	१६०
अज	३६	७२	अनुजा	२१	४३	अभिलापुव	८४	१७५
अजय	९१	१९७	अनुजीविन्	१४	२९	अभिमारिका	१७	३५
अजम	८९	१८९	अनुरहम्	८४	१७५	अभीष्टण	८८	१८५
अजातरिपु	७१	१४६	अनेकप	४५	८८	अभ्यण	६९	१४१
अञ्जनात्मज	३३	६३	अनेहम	६२	१३२	अभ्यास	{ ६९	१४१
अटनी	४०	७९	अनोकह	५	११		{ ८६	१४५
अटवी	६	१३	अन्त	५	९	अभ्र	{ ८	१८
अत्यन्त	८३	१७३	अन्त करण	४१	८१	अमर	३०	५६

शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक
अर्थ	५४	१०९	अवर्ग	२१	४२	आत्यन्तिक	५७	१६१
अमल	८४	१७३	अवलम्बन	८७	१११	आदेश	८४	१५५
अमा	७७	१०९	अवसर	६६	१३३	आनन	४९	९८
अमित्र	२२	४४	अवसान	८२	१७१	आनन्द	१०	१११
अमृत	६२	१२२	अवसर्प	८६	१८२	आनन्द	५४	१०९
अमृताद्भव	१५	२५	अवश्याय	८५	१७९	आपगा	१२	२४
अम्बर	२८	५३	अविदूर	६९	१४२	आभरण	६०	११९
अम्बर			अशनि	०	१९	आच्य	५७	११४
अम्बु	७	१५	अछलील	७२	१०६	आस्नाय	८३	१२४
अम्बुजानन	६८	१३७	अश्व	२-	५२	आयुव	८२	८३
अम्बुवि	८	१६	अष्टगान्	८६	१०	आर्या	१३	३४
अम्भम्	७	१५	अटापद	४३	१४३	आलम्यमुख	८३	१२१
अयस्	८२	१७२	अमि	८३	१०	आलय	८८	१३२
अरण्य	८	१३	अमित	७२	१८८	आलम्य	५७	१६०
अरण्यानीचर	७	१४	अमुपति	७८	३३	आली	२०	६१
अरम्	८३	१३२	अमृज	८९	१५८	आवलि	१३	८८
अर्रावन्द	११	२१	अमुकार	११	१०८	आवाम	८८	१३३
अर्गानि	२२	४४	अम्ब्र	८२	८३	आवृति	९०	१९४
अगि	२२	४४	अहयु	८१	१५८	आवय	५१	११०
अरुण	१२	१५०	अन्त्	२८	१०	आशा	८२	६१
अर्क	२६	४९	अन्तानि	५८	११०	आयु	८३	१५०
अर्णि	२३	४५	अहि	८४	१२८	आशुशुद्धणि	८३	८६
अर्जुन	८७	१०३	अहित	२२	६४	आरन्य	८८	१३४
अर्जुन			अहा	८६	१३६	आमन	११६	११३
						आ	१६७	१३५
अर्णव	१५	२६	आकालिकी	९	११	आमन्दी	५६	११३
अर्णस्	७	१५	आकाश	२८	५३	आमन्न	६९	१४१
अय	८३	१५	आकृत	८१	८१	आमव	६१	१२१
अर्भक	२०	४०	आवृत्त	३०	५७	आम्बानाविपति	५६	११२
अर्यमन्	२६	४९	आगम	३	४	आम्पद	६६	१३३
अर्वन्	२७	५२	आगार	६६	१३३	आम्य	४९	९८
अर्हन्	५८	११६	आचार्य	५१	१११	आम्वनित	८१	८१
अलकानिलय	४८	९६	आजि	४४	८७	इ		
अठि	४२	८२	आज्ञा	७४	११४			
अलिप्रभ	७२	१४८	आज्य	६१	१२२	इन	५	१०
अलीक	८८	१८६	आतन	७६	१५८	इन्दिग	३८	७६
अवदान	७१	१४७	आतपत्र	९०	१९४	इन्दीवर	११	२१,२२
अवद्य	७३	१५२	आताङ्क	७२	१४९	इन्दु	२३	४६
अवधि	१३	२६	आत्मज	१९	३९	इन्दुमौलि	३५	६९
अवनि	३	५	आत्मभू	३६	७३			

ગઢ	પૃષ્ઠ	શ્લોક	ગઢ	પૃષ્ઠ	શ્લોક	ગઢ	પૃષ્ઠ	શ્લોક
ઇન્દ્ર	૫	૧૦	ઉદ્યાગ	૮૪	૧૩૪	એદ્વાકુ	૫૭	૧૧૪
	{ ૩૦	૧૭	નદ્વિ	૧૦	૧૦		ઓ	
ઇન્દ્રજિત्	૮૫	૧૨૮	ઉદ્ઘાહ	૧૯	૧૮૯	ઓષ	{ ૬૩	૧૨૦
ઇન્દ્રિય	૬૫	૧૨૯	ઉભન	૮	૧૫૮	આષ	{ ૬૯	૧૪૦
ઇમ	૪૫	૮૮	ઉપકષ્ટ	૧૩	૨૬	આષદીશ્વર	૫૦	૧૧૦
ઇન	૬૧	૧૨૦	ઉપન્યકો	૮	૯		૨૪	૪૩
ઇલા	૩	૬	ઉપમા	૬૩	૧૩૬		૭	૧૫
ઇપુ	૩૯	૩૮	ઉરમાન	૬૮	૧૩૭	ક	{ ૩૬	૭૩
ઇસ્ટ	૧૮	૩૭	ઉપણ	૮૨	૧૦૦		{ ૧૨	૧૦૪
ઇપ્ટા	૧૬	૩૩	ઉપાનુ	૮૪	૧૦૫	કૃત્ય	૩૨	૬૧
	૬૪					કથ	૬	૧૩
ઇરિન	૫૨	૧૦૪	ઉપન્દ્ર	૨૩	૫૪	કથા	૬૩	૧૩૬
ઇંગાન	૫	૧૦	ઉમય	૮	૭	કચ	૧૦	૧૦૮
ઇંગિન	૫	૧૦	ઉમાપત્નિ	૨૧	૦	કંચ્ચુક	૧૦	૧૯૪
ઇંદ્રવર	૫	૧૦	ઉરગ	૮૪	૧૨૮	કદાથ	૬૯	૯૯
ઇંદ્રામૃ	૫૫	૧૨૩	ઉરગોકૃત	૧૧	૧૩૩	કટિ (કટી)	૫૧	૧૦૩
	૩		ઉર્ગુ	૮૦	૧૦૨	વર્દિસૂત્ર	{ ૬૦	૧૨૦
ઉગ્ર	{ ૩૫	૩૦	ઉર્વંગ	૩	૬	કટીસૂત્ર		
	{ ૮૩	૧૮૪	ઉર્વી	૩	૬	કઠિન	૫	૧૫૫
ઉચ્ચ	૭૬	૧૫૮	ઉર્વા	૯	૧૯	કઠોર	,	,
ઉચ્ચાવચ	,	૧૧૮	ઉર્વણ	૮૩	૧૮૪	કણ	૩૭	૭૮
ઉચ્ચેમ	,	૧૫૮	ઉર્દ	૮૨	૧૧	વણ્ઠ	૫૦	૧૦૦
ઉર્ચદ્રુત	,	૧૧૮	ઉર્ણવાણ	,	૧૧૬	કણીશ્વ	૮૫	૯૦
ઉર્દુ	૮૫	૪૮	ઉર્વ	૮૩	૫	કદન	૪૪	૮૭
ઉર્કટ	૮૦	૧૮૪				કદમ્બ	૬૦	૧૩૯
ઉનાલિવા	૧૨	૨૦				કટ્ટદ	૮૦	૧૬૬
ઉનમાત્ર	૫૨	૧૦૪	ઉરીકૃત	૧૧	૧૧૦	કનક	૪૭	૧૩
ઉનગાજાપતિ	૮૮	૧૬	ઉર્જમ	૧૩	૮૬	કનીયમુ	૨૧	૪૩
ઉનનનદય	૨૦	૬૦	ઉર્જમ્વિન	૧૦	૧૧૩	કન્દ્રદ્ય	૮૨	૮૩
ઉન્યલ	૧૧	૨૨				કપર્દિન	૩૫	૭૦
ઉન્પ્રેધા	૬૮	૧૩૮	ઉર્લ	૨૫	૪૮	કપાલિન	૩૫	૭૦
ઉન્મબ	૫૪	૧૦૯	ઉર્ત	૮૧	૧૮૨	કપિ	૬	૧૨
ઉન્માહ	૮૬	૧૦૪	ઉર્પિ	૨	૩	કપિદ્વજ	૬૦	૧૪૩
ઉદન્વત્	૧૩	૭૩				કવરી	૧૧	૧૦૫
ઉદર	૫૧	૧૦૨	એકપત્ની	૧	૩૬	કમન	૮૫	૧૭૭
ઉદશિવત्	૬૨	૧૨૩	એર્પિડ્ઝલ	૮૮	૧૫	કમનીય	૮૫	"
ઉદ્ગમ	૪૦	૮૦	એરાગાણિક	૧૧	૧૬૯	કમલ	૧૦	૨૦
ઉદ્ગ્રીવ	૮૧	૧૬૮	એનમ	૬૬	૧૩૧	કમ્બ	૮૫	૧૭૭
ઉદ્વન	૮૧	૧૬૮				કર	{ ૨૩	૪૫
ઉદ્વર	૮૧	૧૬૮	એન્ધ્રવ	૪૨	૮૩		{ ૫૦	૧૦૧
ઉદ્યમ	૮૮	૧૦૪	એગવણાધિપ	૩૦	૫૯	કરણ	૬૫	૧૨૯

## धनकज्यय-नाममाला

शब्द	पृष्ठ	श्रोक	शब्द	पृष्ठ	श्रोक	शब्द	पृष्ठ	श्रोक
करभ	४६	११	कामिन्	१८	३७	कुमुद	११	२२
करवालक	४३	८५	कामिनी	१४	३०	कुमुदप्रिय	२४	४७
कराडगुलि	५०	१०१	कामुक	१८	३७	कुमुदविप्रिय	२७	५१
करिन्	४५	८८	कामुकी	{ १५ १७	३१ ३६	कुमिन्	४५	८८
करण	५४	११०	काय	१९	३८	कुमिनी	३	६
करेण्	४५	८९	कार्तस्वर	४७	९४	कुरुशत्रु	८४	१४५
ककंश	७५	१५४	कार्तिकेय	३४	६७	कुल	६३	१२४
कर्ण	४९	९८	कामुक	४०	७९	कुलटा	१७	३५
कण्ठगुलिन्	७०	१४४	कार्मिन्	७०	१४३	कुत्या	१६	३२
कर्दम	१०	२०	काल	{ ७१ ७२	१४५ १४८	कुवलय	११	२२
कर्पूर	५९	११८	कालयेष	६२	१२३	कुम	७	१५
कलङ्क	७३	१५२	काली	७३	१५०	कुशलिन्	७९	१६४
कलत्र	१६	३२	काश्यप	५८	११५	कूपार	१२	२५
कलधौत	४७	९४	काहल	७५	१५५	कूपासि	९०	११८
कलभ	५२	१०५	काष्ठा	३२	६१	कृच्छ्र	८८	१८६
कलम	८१	१६७	काष्ठायापाल	३२	६१	कृतान्त	{ ३ ७१	६ १४५
कलह	{ ४४ ८९	८७ १८८	काष्ठाम्बर	३२	६१	कृतिन्	७९	१६४
कलापिन्	६३	१२६	किवदन्ती	७४	१५४	कृत्स्न	८८	१८७
कलाभूत्	२४	४७	किकार	१४	२९	कृपण	८४	१७५
कलिल	६६	१३१	कित्तन	७६	१५३	कृपा	५४	११०
कलेवर	१९	३९	किजन्ति	{ ७३ ७३	१५१ १५२	कृपण	४३	८५
कल्माषी	७३	१५०	किरण	२३	४९	कृश्चान्	३३	६५
कल्याण	९१	१९८	किरात	७	१४	कृष्ण	{ ३९ ७२	६६ १८८
कल्लोल	१३	२७	किरिटि	७०	१४४	केकर	४९	९०
कवच	१०	११४	किरिष	६६	१३१	केकिन्	६३	१२५
कष्ट	८८	१८६	कीचकशत्रु	७१	१४५	केतु	४३	८४
कस्तूरी	५९	११७	कीति	७४	१५३	केवलिन्	५८	११६
कस्वर	४७	९५	कीनाग	८४	१७५	केश	९०	१९५
कान्चन	४७	९३	कु	३	६	केशवन्वत	९१	"
काञ्ची	६०	११९	कुमुक	४६	९२	केयरिन्	८५	९०
काष्ठ	३९	७८	कुक्षि	५१	१०२	केशव	३७	७४
कादम्बरी	६१	१२०	कुकुम	१९	११७	केशवाप्रज	७०	१४२
कानन	६	१३	कुच	५१	१०२	केशिन्	३६	७५
कानीनजनक	२७	५१	कुबेर	४८	९५	कैरव	११	२२
कान्त	{ १८ ८५	३७ १७७	कुबज	७६	१५८	कोक	६४	१२७
कान्ता	१६	२३	कुमार	३४	६७	कोकनद	१०	२१
कान्तार	६	१३						
कान्तिमत्	२४	४७						
काम	३९	७७						

શબ્દ	પૃષ્ઠ	શ્લોક	શબ્દ	પૃષ્ઠ	શ્લોક	શબ્દ	પૃષ્ઠ	શ્લોક
કોટિ	૬૦	૭૯	ખગ	૩૯	૭૮	ગુણ્યાન	૬૮	૧૩૭
કોદણ્ડક	૬૦	૭૯	ખજ્જ	૪૩	૮૫	ગુલિકા	૪૭	૧૪
કોપ	૫૮	૧૦૯	ખણ્ડ	૮૯	૧૮૭	ગુહ	૩૪	૬૭
કોમલ	૩૫	૧૫૫	ખન્કન	૫૩	૧૦૬	ગૂઢ્ચર	૮૧	૧૬૯
કોવિદ	૭૧	૧૬૪	ખરદણ	૧૦	૨૧	ગૃધ્ન	૮૪	૧૫૫
કોપ	૮૯	૧૮૮	ખલ	૨૨	૪૪	ગ્રહ	{ ૧૬	૩૨
કોશેયક	૮૩	૮૫	ખલા	૧૭	૩૫	ગ્રહ	{ ૬૬	૧૩૨
કૌતુક	૮૪	૧૭૪	ખલુ	{ ૭૬	૧૫૯	ગેહ	૬૬	૧૩૨
કૌનેય	૭૧	૧૪૬	ખલુ	{ ૮૪	૧૭૩	ગેહિની	૧૬	૩૨
કૌમુદી	૨૪	૪૭	ખાત	૬૭	૧૩૪	ગો	{ ૩	૬
કૌરબ્ય	૭૧	૧૪૬	ખેચર	૨૮	૫૪	ગો	{ ૨૩	૪૫
કૌલેયક	૪૬	૯૨	ખેદ	૫૪	૧૦૯	ગો	{ ૭૯	૧૬૩
કૌણિક	૩૦	૬૦	ખેય	૬૭	૧૩૪	ગોત્ર	૮૦	૧૬૫
કૌમુમ	૭૩	૧૫૯	ગ			ગાત્રશત્ર	૩૦	૫૮
કનુ	૫૬	૧૧૨	ગગન	૨૮	૫૩	ગોધા	૧૩	૨૮
ક્રોકુન	૫૩	૧૦૭	ગજા	{ ૩૬	૭૧	ગોણુર	૬૭	૧૨૪
ક્રોદ	૪૬	૯૧	ગજા	{ ૩૮	૧૬૨	ગોમણ્ડલ	૭૮	૧૬૨
ક્રોય	૫૪	૧૦૯	ગજ	૪૫	૮૮	ગોમિની	૩૮	૭૬
ક્રોચ	૫૩	૧૦૭	ગળિકા	૧૭	૩૬	ગોલાદ્ગૂલ	૬	૧૨
ક્રૌચભેદિન	૩૪	૬૭	ગન્ધવાહ	૩૨	૬૨	ગોવિંદ	૩૭	૭૬
ક્ષણે	૫૬	૧૫૭	ગમ્ભિન	૨૩	૪૫	ગોનમ	૫૭	૧૧૪
ક્ષણદા	૨૫	૪૮	ગમડ	૬૫	૧૨૮	ગૌર	૭૨	૧૪૦
ક્ષગમન્ચિ	૯	૧૯	ગરુમત્	૬૫		ગૌરી	૭૩	૧૫૦
ક્ષતજ	૮૯	૧૮૮	ગર્જ	૫૨	૧૦૫	ગ્રન્થ	૩	૪
ક્ષાગાવર	૨૬	૪૮	ગર્તા	૮૯	૧૧૦	ગ્રહાધ્રિપ	૨૬	૪૯
ક્ષમા	૩	૫	ગર્વિન	૮૧	૧૬૮	ગ્રામગાર્ડલ	૪૬	૯૨
ક્ષામ	૮૨	૧૭૧	ગલ	૫૦	૧૦૦	ગ્રીવા	૫૦	૧૦૦
ક્ષિતિ	૩	૬	ગર્વા	૪૧	૮૨	ગ		
ક્ષિપા	૨૫	૪૮	ગહન	{ ૬	૧૩	ઘન	{ ૮	૧૮
ક્ષિપ્ર	૮૩	૧૭૨	ગહર	૮૯	૧૯૦	ઘનમાર	૫૯	૧૧૮
ક્ષીર	૬૨	૧૨૨	ગહરી	૩	૫	ઘનઘન	૮	૧૮
ક્ષીણ	૮૨	૧૭૪	ગાણ્ડોવિન્	૭૦	૧૪૩	ઘૃણ્ણ	૪૬	૭૧
ક્ષુણ્ણ	૭૯	૧૬૪	ગિર	૫૨	૧૦૪	ઘોર	૮૭	૧૮૪
કુર્પ્ર	૩૯	૭૮	ગિરિ	૪	૮	ઘોષ	૭૮	૧૬૨
ક્ષેમ	૧૧	૧૯૮	ગિરીશ	૩૫	૬૯	ઘ્રાણ	૫૦	૧૦૨
ક્ષોળી	૩	૬	ગીવણીશ	૩૦	૫૮	ચ		
ક્ષમા	૩	"	ગુણ	{ ૪૧	૮૨	ચક્રધર	૩૮	૭૬
			ગણનિકા	{ ૬૦	૧૧૯	ચન્દ્રવાક	૨૭	૫૧
ખ	{ ૨૮	૫૩	ગુણવાલિ	૭૪	૧૫૩	ચક્રાઙ્ગ	૬૩	૧૨૫
	{ ૬૫	૧૨૯	ગુહ	૬૨	૧૨૩	ચણી	૧૬	૩૩
						ચતુર	૭૯	૧૬૫

## धनञ्जय-नाममाला

शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक
चतुर्मुख	३६	७२	जननी	१८	३८	तट	{ ४	९
चतुर्ष्यात्	५९	१६३	जनपद	४८	९७	तटी	{ १३	२६
चन्द्र	२४	४७	जनाल	४८	,	तटोच्छ्वाम	१३	२७
चन्द्रम्	२४	,	जनि	१६	३२	तडिन्	९	१८
चमू	४३	८६	जनोदाहग्नि	८४	१५३	तटिद्वन्वा	३०	५६
चमूर	४६	९०	जह	११	१०३	तति	६९	१४०
चर	८६	१८२	जल	३	१५	तनय	२०	४०
चरण	५१	१०३	जलद	५३	१०५	तनु	१९	३८
चरण्	३२	६३	जव	८५	१७२	तनुत्र	९०	१९४
चलन	५१	१०३	जवन	३२	६३	तनुदरी	१५	३१
चला	१५	३९	जद्गत्	२९	५०	तनूनपात	३३	६४
चाटुकुल्	७९	१६५	जान	८१	१६७	तपत	२६	४९
चाग	६०	७०	जानस्य	८७	९३	तपत	२६	४९
चार	८६	१८२	जानवेदग्	३३	६४	तपनीय	४७	९४
चार	८५	१६८	जानु	५१	१०३	तपनिवन	२	३
चिकुर	००	१९५	जाया	१६	३२	तम	७२	१४८
चिन्त	४१	८१	जाह्वी	३३	७१	तमम्	७२	
चित्र	८४	१०४	जिन्या	७०	१४२	तमार्ग	२६	५०
चिह्न	४३	८४	जिन	५३	११२	तर	८३	१७२
चिराय	५५	१८२	जिण्ण	७०	१४३	तरग	१३	२७
चीकृत	५३	१०६	जिह्वा	४६	९२	तरगिणी	१२	२४
चीर	५९	११७	जीमूत	८	१८	तरण	२६	४९
चूड़ापाथ	९१	१९९	जाण	{ ७६	१५६	तरघिण	४२	८५
चेतम्	५१	८१	जाण	{ ८२	१०१	तरघिन्	९०	१९३
चेन	५०	११७	जीवन	६	१५	तर	५	११
चाच	८४	१७३	जीवा	८१	८२	तस्कर	८१	१६०
चौर	८१	१०९	ज्ञा	४२	८२	तापम्	२	३
	८		न्या	४२	८२	तासरम्	१०	२०
छव	१०	१९४	ज्यायम्	५७	११४	तारा	२५	४८
छग्न	६८	१३८	ज्येठ	२१	४३	तारुण्य	६२	१२४
छिद्र	८९	१९०	ज्योति	२३	४६	तार्थ्य	६५	१२८
छल	{ ६८	१३८	जवलन	३३	६५	तिग्म	{ २६	४९
	{ ८९	१८८				तिग्मि	{ ८७	१८४
ज			ज्ञ				८	१७
जगत्	५७	११३	जटिति	८३	१७२	तिग्मि	{ ७२	१४८
जगती	३	६	जप	८	१७	तिग्मिर	{ ८७	१८४
जघन	५१	१०३	जषकेतु	४३	८४	तिमिरार्ग	२६	५०
जठर	{ ५१	१०२	जषध्वज	४३	,	तीर	१३	२६
	{ ७६	१५६	जड़ वृत	५३	१०१	तीर्थ	५८	११५
जट	८०	१६६	त			तीर्थकर	५८	११६
जनक	१८	३८	तक्र	६२	१२३	तीर्थकृत्	५८	"

शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक
तीर्थ कर	५८	११६	दशमीस्थ	५४	१०८	दृष्टि	४९	९९
तीव्र	८७	१८४	दगा	६२	१२४	देव	३०	५६
तुक्	१८	३९	दस्यु	७	१४	देवानाप्रिय	८०	१६६
तुङ्ग	७६	१५८	दहन	३३	६५	देह	१९	३८
तुरग	२७	५२	दामोदर	३७	७४	देहिका	७९	१६३
तुरगम	२७	,	दारक	२०	४०	दैत्यारि	७०	१४४
तुरगमाह	३०	६०	दारा	१६	३२	दोष	५०	१०१
तुला	६७	१३६	दारिका	१७	३६	दोष	{ २५	५०
तुलाकोटि	५३	१०७	दारुण	८३	१८४	द्युति	५०	१०१
तुल्य	६७	१३६	दासी	१७	३६	द्युमणि	२६	४९
तुपार	८५	१७९	दिक्-दिग्	३२	६१	द्युर्घटनी	३६	७१
तुहित	८५	१७९	दिक्पाल	३२	६१	द्युम्	{ २८	५३
तूर्ण	८३	१७२	दिग्मवर्ग	३२	६१	द्यूत	३६	७१
नेजम्	२३	४५	दिग्गज	३२	६१	द्यूत	६१	१२२
नेजम्बिन्	९०	१९३	दिन	२६	५०	द्या	{ २८	५३
नोक	१९	३९	दिव्-दिव	{ २८	५३	द्रविण	४७	९५
नोमर	३९	७८	दिवस	{ ३०	५६	द्रव्य	४७	"
नाप	७	१५	दिवा	२६	५०	द्राक्	७६	१५७
नोप	५४	१०९	दिव्यवाक्षपति	५८	११६	द्वृत	८३	१७२
निककुत्	४	८	दीक्षित	३	४	द्विहण	३६	७१
निदग	३०	५६	दीविति	२३	४५	द्वन्द्व	२	२
निनेत्र	३५	६९	दीन	८४	१७५	द्वय	२	"
निपथगा	३६	७१	दीप्ति	२३	४६	द्वितय	२	"
निपुरारि	३५	६९	दीप्ते	८७	१८३	द्विप	४५	८९
निमार्गगा	७८	१६२	दुर्घ	६२	१२२	द्विशद	४५	८८
न्यायवत्	३५	६८	दुरित	६६	१३१	द्विरेक	{ १२	८४
द	८६	९१	दुर्ग	६	१३	द्विष	२२	४४
दधिट्टन्	४६	९१	दुर्जन	२२	४४	द्विषत्	२२	"
दशवत्या	३२	६१	दुष्कृत	६६	१३१	द्वेष	५८	१०९
दण्ड	४३	८६	दुष्ट	२२	४४	द्वेषिन्	२२	४४
दन्त	४	९	दुहितृ	२०	४०	द्वैत	२	२
दन्तवाम	५०	१००	द्री	१७	३५	ध		
दन्तिन्	४५	८८	द्रन	८२	१७१	धन	४७	९५
दया	५४	११०	दृढ़	७५	१५५	धनजय	७०	१४४
दयित	१८	३७	दतिहरि	७८	१६३	धनद	४८	९६
दयिता	१६	३३	दृष्ट	८१	१६८	धनदाय	४८	"
दरीभृत्	४	८	दृश	४९	९९	धनुष	४०	७९
दर्शनीय	८५	१७८	दृष्ट	८२	१७०	धन्वन्	४०	७९
दशनच्छद	५०	१००	दृष्टि	५४	१०८	धमनीधम	५०	१००

## धनञ्जय-नाममाला

शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक
धर्मलल	९१	११५	ननादृ	२१	४३	नित्य	७७	१५९
धरणी	३	६	नन्दन	२०	४०	निदेश	७८	१५४
धरा	३	५	नभस्	२८	५३	निषुण	७९	१६४
धरित्री	३	६	नभस्वत्	३२	६३	निबोध	७३	१५२
धर्म	१०	७९	नभ्राट्	८	१८	निभ	६८	१३८
धर्मचक्रभूत्	५८	११६	नमुचिशत्र्	३०	५८	निम्नगा	१२	२४
धर्मात्मज	७१	१४६	नयन	४९	९९	नियन्त्रित	८५	१७६
धर्व	१४	२८	नग	१३	२८	नियामित	८५	१७६
धवल	७१	१८३	नरक	८९	१९०	नियोग	७४	१५४
धातु	८२	१७०	नलिन	१०	२०	निर्धारि	९	१९
धात्री	३	५	नव	७५	१५६	निवृद्धि	६७	१३५
धानुषक	७	४४	नव्य	,	"	निलय	६६	१३३
धामन्	{ २३	४६	नाक	३०	५६	निवसन	५९	११७
	{ ६६	१३३	नाग	{ ४५	८९	निवृत्त	६६	१३२
विषणा	५५	११०		{ ६४	१२८	निवेशन	८९	१८९
विष्ण्य	६६	१३२	नागरिक	८०	१६५	निशा	२५	४८
घी	५५	११०	नागारि	४५	९०	निशाचर	८१	१६९
घुनो	१२	२४	नाथ	५	१०	निशाल	६६	१३२
घुर्य	२७	५२	नाथहरि	७८	१६३	निपाद	७	१४
घूम	७२	१४८	नायान्वय	५८	११५	निपादिन्	४५	८९
घूर्जटि	३५	६८	नाभिज	५७	११४	निष्णात	३९	१६४
घूर्तं	७९	१६५	नाम	८०	१६५	निमग	८८	१८५
घूलि	७३	१५१	नारद	३७	७३	निम्नल	८७	१८३
घूलिकुट्टिम्	६७	१३४	नाराच	३९	७८	निष्ठिरा	८३	८५
घोन्	५२	१०५	नारायण	३७	७४	नीव	{ ५६	१५८
घैय्य	१३	१७१	नारी	१८	३०		{ ८१	१६८
धवजा	४३	८४	नासा	५०	१०२	नीचैम्	७६	१५८
धवजिनी	४३	८६	निकट	६९	१४१	नीर	७	१५
ध्वानार्गि	२६	५०	निकर	६९	१३९	नील	७२	१४८
	न		निकाय	{ ६६	१३३	नीलकण्ठ	६२	१२६
	७६	१५३		{ ६९	१४०	नीलपिञ्जरी	७३	१५०
नक्तम्	२५	४८	निकुरम्ब	६९	,	नीललोहित	३५	६९
नक्तन	२५	"	निकेतन	६६	१३२	नीलवसन	७०	१४२
नक्तन	२५	"	निगद्धपुरुष	८६	१८२	नीलाम्बुजन्मन्	११	२२
नग	५	११	निव्य	६९	१४०	नीहार	८५	१७९
नगरी	४८	९७	निज	८८	१८५	नूतन	७५	१५६
नद	१२	२४	नितम्ब	{ ४	९	नूपुर	५३	१०७
नदी	१२	,		{ ५१	१०३	नृ	१३	२८
नदीवरी-नदीवर	३६	७१	नितम्बिनी	१५	३१	नृप	{ ४	७
नदीष्ण	७९	१६४	निमान्त	८३	१७३		{ १४	२८

शब्दानुक्रमणिका

११५

शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक
नपक्रतु	५६	११२	परामु	५४	१०८	पाशित	८५	१७८
नेढ	८०	१६६	परिखा	६७	१३४	पाशनीत	८५	१७६
नव	४९	९९	परिचित	५८	१०८	पाषाण	८२	१७०
नेक	६०	१६१	परिणयन	८०	१८९	पितामह	३६	७२
नैयायिक	५५	१११	परिगंधि	६०	१३४	पितू	१८	३८
न्यूच	७६	१५८	परिवाद	१८६	१८१	पिनद	८५	१७६
प			परिवृद्ध	५	१०	पिनाकिन्	३५	६८
पक्षिन्	२९	५४	परिषष्ट	१०	२०	पिशित	२९	५५
पड़क	{ १०	२०	पहय	५५	११५	पिशुन	८१	१६८
	१०३	१५२	पर्जन्य	८	१८	पिशगी	७३	१५०
पक्षिन	६१	१४०	पर्वत	४	८	पीठ	५६	११३
पटु	७९	१६४	पल	२९	५५	पीत	७०	१४९
पट्टन	८८	९७	पल्लक	७७	१६०	पुश्चर्णी	१७	३५
पण्डित	५५	१११	पवन	३२	६२	पुटभेदन	४८	९७
प्रथम्नी	१७	३६	पवनपुत्र	३३	६३	पुष्य	६५	१२९
पतङ्ग	{ २६	४६	पवनमस्य	३३	६४	पुण्डरीक	१०	२१
	२८	५४	पशु	७०	१६३	पत्र	१९	३९
पत्रिन्	२९	५४	पासु	७३	१५१	पुनर्भू	१७	३५
पत्राका	४३	८४	पाकशत्रु	३०	५८	पुमस्	१३	२८
पति	५	१०	पाटल	५८	११९	पुर्	४८	९७
पतिवत्नी	१३	३८	पाटीन	८	१७	पुर	६८	..
पतिवता	१३	३४	पाणि	५०	१०१	पुरन्दर	३०	५८
पत्तन	४८	९७	पाण्डु	७१	१४७	पुरन्धी-पुरन्त्रि	१६	३१
पति	१४	२९	पाण्डुर	७१	१४०	पुरगण	७६	१५६
पत्नी	१६	३२	पाताल	८०	१९०	पुरी	६८	९७
पत्रिन	२६	५४	पाथम्	७	१५	पुरु	५७	११४
पथिन	७८	१६१	पाद	{ २३	४५	पुरुष	१३	२८
	{ ५१	१०३		१५१	१०३	पुरुषोत्तम	३७	७४
पद	{ ६६	१३३	पादप	५	११	पुरुहत्	३०	६०
	{ ६८	१३८				पुरोगनि	४६	९२
पदग	१४	२९	पाप	६६	१३१	पुरुषं	६२	१२३
पदानि	१४	,	पाप्मन्	६६	"	पुलिन्द	७	१४
पद्म	१०	२०	पार	१३	२६	पुलोमार्गि	३०	६०
पञ्चनाम	३७	७५	पारावार	१२	२५	पुष्कर	११	२१
पञ्चग	६४	१२८	पारिषद्य	५६	११८	पुष्करिन्	४५	८९
	{ ७	१५	पार्श्व	४	९		{ ८८	१७३
पथम्	{ ६२	१२२	पालाश	७२	१५९	पुष्कल	{ ९०	१९४
पयोधर	५१	१०२	पाली	१३	२७			
पराग	७३	१५१	पावक	३३	६४	पुष्य	४०	८०

शब्द	पृष्ठ	इलोक	शब्द	पृष्ठ	इलोक	शब्द	पृष्ठ	इलोक
पुष्पहेनि	४२	८३	प्रवृत्ति	७४	१५४	फल	४०	८०
पुग	६९	१३९	प्रशस्त	८६	१७८			
पूषन्	२६	४१	प्रसन्ना	६१	१२१			
पृतना	४३	८६	प्रसव	४०	८०	वठ	८५	१७६
पृथिवी	३	५	प्रमाधन	६०	११८	वन्धकी	१७	३५
पृथुरोमन्	८	१७	प्रसून	४०	८०	वन्धु	२१	४२
पृथुल	८७	१८३	प्रस्तर	८२	१७०	वन्धुर	८५	१७८
पृथु	८७	"	प्रस्थ	४	९	वल	{ ४३ ७०	{ ८६ १४२
पृथ्यी	३	५	प्रसन्ना	१६	१२१			
पृष्ट	६४	१२७	प्राशु	८७	१८३	बलमत्र	३०	५८
पैयल	७५	१५५	प्राकार	६७	१३४	बलाहक	८	१८
नेशिन्	२९	५५	प्राकन	७६	१५६	बलिसूदन	३७	७५
पोन	२०	४०	प्राचीनवर्हि	३०	५७	बहिष्ठ	९०	१९१
पोत्रिन्	४६	९१	प्राज्य	९०	१९१	बहु	९०	१९५
पौष्टि	८३	१७१	प्राज्ञ	५५	१११	बहुल	{ ८७ ९०	{ १८३ १९७
प्रकर	६९	१४०	प्राभन	९०	१९१			
प्रकृति	८८	१८५	प्रायम्	६२	१२३	वाण (वाण)	३९	७८
प्रगल्भ	७९	१६४	प्रारभ्य	५२	१०४	वाणवारण	९०	१९४
प्रचर	७८	१६२	प्रालेय	८५	१७९	वाणमृदन	३३	७५
प्रचुर	९०	१९१	प्रावृष्टिक	६३	१२६	वाणी (वाणी)	५४	१०४
प्रजा	११	३९	प्रामाद	८७	१३५	बाल	९०	१९५
प्रजापति	{ ३७ ५७	{ ५४ ११४	प्रिय	{ १८ ७४	३७	बाला	१५	३१
प्रजा	५५	११०	प्रिया	१६	३२	बाहु	५०	१०१
प्रणयिनी	१६	३३	प्रियामिका	२२	४३	बाहुशिंगम्	५०	"
प्रणिधि	{ ८१ ८६	{ १६९ १८२	प्रीत	१८	३७	विमिनी	११	२३
प्रतिरोधक	८१	१६९	प्रेमन्	७६	१६०	वध	५६	११२
प्रतीत	५४	१०८	प्रेयम्	१८	३७	व्रद्धन	२६	४९
प्रतोली	६७	१३४	प्रेयमी	१६	३३	व्रद्धन	७३	११६
प्रत्यग्र	७५	२५६	प्रेरित	५२	१०४	बीहि	८१	१६१
प्रभवजन	३२	६३	प्रेष्ठा	१६	३३			
प्रभा	२३	४५	प्रेष्य	७४	१५४	भ	२५	४८
प्रभु	५	१०	प्लवग	६	१२	भग	१३	२७
प्रस्थाधिप	३५	६८		क				
प्रमद	५४	१०९	फणिन्	६४	१२८	भट	{ १४ ५३	{ २९ १०६
प्रमदा	१६	३३	फलिन्	५	११	भद्र	९१	११८
प्रमोद	५४	१०९	फलेग्राहिन्	५	११	भर्तृ	५	१०
प्रवीण	७९	१६४	फलगु	७५	१५५	भर्तु स्वसा	२१	४३
प्रवीर	९०	१९३	फलगुन	७०	१४३	भर्मन्	४७	९३

शब्दानुक्रमणिका

११७

शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक
भरतान्वय	७१	१४८	आनृजानी	२१	४३	मन्यु	५४	१०९
भव	{ ३५ ९०	७० १९२	आनृव्य	२२	४४	मत्रपूतान्मन्	६५	१२९
			म			मय	४६	९४
भवन	६६	१३२	मवर्गवज	३९	७७	मध्यवत्	२८	५२
भविक	९१	१९८	मवग्नद	७३	१५९	मयूर	६३	१२६
भव्य	९१	१९८	मधु	८३	१७२	मगल	६३	१२५
भागधेय	६५	१३०	मगल	९१	१९८	मरीचि	२३	४५
भागीरथी	३६	७१	मद्यवत्	३०	६०	महत	३०	५९
भार्य	६५	१३०	मजीग्नक	५३	१०७	महत्	{ ४ ३२	८ ६२
भानु	{ २३ २६	४५ ८९	मठल	८६	९२	मस्तवत्	३०	५९
भासा	१५	३१	मडलाग्र	४३	८५	मस्तपुत्र	३३	६३
भासिनी	१४	३०	मणित	५३	१०६	मस्तमय	{ ३० ३३	६० ६४
भारती	५२	१०४	मतगज	४१	८८	मर्कट	६	१२
भार्या	१६	३२	मतागम्ब	६७	१३५	मर्त्य	१३	२८
भाव	१०	१९२	मन्य	८	१६	मर्म	८९	१८८
भावुक	११	१९८	मतवाण्ण	६७	१३५	मलिन	७३	१५२
भास्	२३	४५	मयित	६२	१२३	मलिका	५९	११३
भासुर	९०	१९३	मदन	३९	७७	मलीमम	७३	१५२
भास्कर	२३	४६	मदिग	६१	१२०	महनि	५८	११५
भास्वर	१०	१०३	मद्य	६१	१२०	महम्	२३	८६
भिक्षु	२	३	मद्यप	६१	१२१	महावीर	५८	११५
भीम	१४	३०	मधु	७३	१५१	महाहव	४४	८७
भज	५०	१०१	मधुवारा	६१	१२१	महिला	१६	३२
भृजगम	६४	१२८	मधुवत	४२	८२	महिमी	७९	१६३
भवन	५७	११२	मधुसूदन	३७	७५	मही	३	५
भू	३	५	मध्यमण्डव	३०	१४२	महेश्वर	३५	६८
भूमि	{ ३ ३८	५ ७६	मनस्	४९	८६	महोत्पल	१०	२१
भूमिधर	३८	७६	मनस्विन्	९०	१९३	माम	२९	५५
भूयिष्ठ	९०	१९१	मनीषा	५५	११०	मा	७६	१५९
भूरि	९०	१९१	मनुज	१३	२८	मातग	८५	८०
भूषण	६०	११९	मनुष्य	१३	"	मार्तिर्घवत्	३२	६३
भृग	४२	८२	मनोज्ञ	८५	१७८	मातुजानी	२२	४३
भृतक	१४	२९	मनोहर	८१	१७७	मातृ	१८	३८
भृत्य	१४	२९	मद	{ ८० ८७	१६६ १८४	मानव	१३	२८
भृशम्	८३	१७३	मन्दाकिनी	३६	७१	मानिन्	८१	१६८
भौ	७६	१५७	मन्दिर	६६	१३२	मानिनी	१६	३२
भ्रमर	४२	८२	मन्मथ	३९	७७	मातुष	१३	२८
						मार	८१	८१०

शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक
मार्ग	७८	१६२	मैत्री	९१	१९७	रक्षस्	२९	५५
मार्गण	३०	७८	मैत्रेयिक	९१	१९७	रजत	४७	९४
मार्तंण्ड	२६	४९	मैरेय	६१	१२०	रजनी	२५	४८
माला	६०	११९	मोथ	८८	१८६	रजम्	७३	१५१
मानव	६०	"	मौण्ड्य	३	४	रण	४४	८७
मितगम	४५	८८	माविक	४७	९४	रत्नाकर	१२	२५
मित्र	२०	४१	मौर्वी	४१	८२	रथ्य	२७	५२
मित्रयुक्	२०	"	य			रत्न	८९	१९०
मिहिंग	८	१८	यज्ञाचि	३५	६९	रमण	१८	३७
मीन	८	१७	यति	२	३	रमणी	१६	३३
मीनाकर	१२	२५	यन्तृ	४५	८०	रमणीय	८५	१७७
मुख	४९	९८	यम	{ २ ७१	२ १४९	रम्य	८५	"
मुध	८०	१६६	यमजनक	२०	५१	रय	८३	१७२
मुद्धा	१४	३०	यमल	२	२	रवि	२६	४९
मुक्ता	१७	३५	यमुनाजनक	२७	५१	रमना	६०	१९०
मुद्	५४	१०९	यशम्	७८	१५३	रम्य	८१	१९०
मुधा	८८	१८६	यातुधान	२९	५५	रहम्	८४	१७६
मृति	२	३	यातृ	४०	८०	रहस्य	८४	१७५
मृसूदन	३७	७५	याय	८७	१८४	राग	७७	१६०
मुहुर्मुहुः	८८	१८५	यादम्	८	१३	राजन्	५	१०
मृक्	८०	१६६	यक्त	३७	१६७	राजयद्दमन्	७१	१४६
मृख	"	"	युग	२	२	राजगज	४८	९६
मृह	"	"	युगल	२	२	गजमय	५६	११२
मृति	१९	३९	युम्	२	२	गतिवर	२९	५५
मृद्दन्	५२	१०४	यृत	७७	१६१	गतिजागर	४६	९२
मृग	६४	१२७	यृद्ध	४४	८७	रामा	१५	३१
मृगनाभिजा	५९	११७	युधिष्ठिर	७१	१४६	रादृ	४८	९७
मृगाक	८६	१७९	यवति	१५	६१	रिपु	२२	४४
मृगेन्द्र	४५	१०	योगिन्	२	३	रुचिर	८४	१७८
मृत	५४	१०८	योग्या	८५	१८५	रुचि	२३	८५
मृत्यु	७१	१४५	योषा	१४	३०	रुच्य	६०	११९
मृद्द	७५	१५५	योषित्	१६	३०	रुद	३५	६९
मृषा	८८	१८६	योवन	६२	१२८	रुवि	५९	११८
मैखला	{ ४ ६०	९ ११९	योविनिक	६२	१२३	रुवि	{ ५९ ८९	१८८
मेघ	८	१८	र			रुष्	५४	१०९
मेघपथ	२८	५३	रहम्	८३	१३२	रुपाजीवा	१७	३६
मेदिनी	३	५	रक्त	{ ५९ ७२	११८ १४९	रुप्य	४७	०४
मेघावी	५५	१११		{ ८१	१८८	रे	७६	१५७

शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक
रेणु	७३	१५१	वत्स	८१	१६७	वस्त्य	६६	१३३
रेवनीदयित	७०	१४२	वदन	४९	९८	वस्त्र	५९	११७
रे	४७	०५	वथू	१४	३०	वाग्मिन्	५५	१११
रोधम्	१३	२६	वन	{ ६ ७	१३ १५	वाच्	५२	१०४
रोपण	३९	७८	वनम्पर्वत	५	११	वाचस्पति	९२	१९९
रोहिणीपति	८६	१७९	वनिना	१४	३०	वाजिन्	२७	५२
रोहिताश्व	३३	६५	वनेचर	६	१३	वात	३२	६२
ल			वहि	३३	६४	वातायन	६७	१३५
लक्ष्मी	७२	१५२	वपुस्	१९	३८	वानग	६	१२
लक्ष्मी	३८	७६	वप्र	६७	१३४	वाण( वाण )	३९	७८
लक्ष्मीपति	३८	"	वयम्	{ २९ ६२	५४ १२४	वाणवारण	९०	१९४
लवु	८३	१३२	वयस्या	२०	४१	वाणमूदन	३७	७५
लज्जिका	१७	३६	वर	{ १८ ८९	३७ १८९	वाणी( वाणी )	५२	१०४
लता	११	२३	वरटा	६४	११७	वामलोचना	१५	३१
लतान्त	४०	८०	वर्ग	{ ४६ ८६	९१ ८६	वायु	३२	६२
लपन	४९	९८	वर्गह	४६	९१	वायुपत	२८	५३
लघ्व	५४	१०८	वर्हथिनी	४३	८६	वायुपत्र	७१	१४५
ललना	१६	३०	वर्ग	६३	१२५	वार्	७	१५
लव	८९	१९७	वर्ण	७४	१५३	वार्ता	७४	१५४
लागल	७०	१४२	वर्णिन्	२	३	वार्ण	४५	८८
लाच्छन	७३	१५२	वर्तुल	८९	१८३	वार्णी	६८	१२७
लुक्य	८४	१७५	वर्त्मन्	९८	१६२	वार्गित्रि	१२	२३
लवक	७	१४	वर्द्धमान	५७	११५	वारिगांगि	१२	२६
लैलिहान	६४	१२८	वर्मन्	९०	१९४	वार्णी	६१	१२१
लेग	८६	१८७	वर्षायम्	५७	११४	वार्द्धीन	६३	१२४
लाक	५७	११३	वर्हिण( वर्हण )	६३	१२६	वासर	२६	५०
लोह	८२	१७०	वलक्ष	७१	१४७	वासव	३०	५९
लोहित	{ ७२ ८५	१४९ १८८	वलिमुख( वलीमुख )	१२		वाम्	५९	११७
लोहिती	७३	१५०	वल्लभ	१८	३७	वामुदेव	३७	७६
	व		वल्लभा	१६	३३	वाह	२७	५२
वक्ता	९२	१६९	वल्लरी	११	२३	ताहिनी	४३	८६
वक्त्र	४१	१८	वल्ली	११	२३	वि	२९	५४
वक्षम्	५१	१०२	वमनि	६६	१३३	विकल	८९	१८७
वक्षोज	५१	१०२	वसु	४७	९५	विक्रम	८४	१७४
वचन	५२	१०८	वमुदा	३	६	विवक्षण	५५	१११
वनम्	५२	१०४	वसुन्वरा	३	६	विट	१८	३७
वञ्च	९	१९	वसुमती	३	५	विटपिन्	५	११
वज्रिन्	३०	५७	वस्तु	४७	११	विडीजम्	३०	५३

## धनञ्जय-नाममाला

शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक
विनय	८८	१८६	विश्वरूप	३५	७०	वैशारिण	८	१७
विच्छ	४७	०५	विश्वस	८८	१८५	वैश्ववण	४८	९६
विदग्ध	७९	१६६	विश्वभरा	३	५	वैश्वानग	३३	६६
विद्यमान	८६	१३७	विष	७	१५	वश	६३	१२४
विद्युत्	९	१९	विषक्षय	६५	१२८	व्यतिकर	६८	१३८
विद्वत्	५५	१११	विषधर	६४	१२७	व्यपदेश	६८	१३८
विद्यात्	३६	७२	विषय	४८	९७	व्यसन	८८	१८६
विद्वि	३६	७२	विकिर	२९	५४	व्याघ्र	४६	९०
विद्विपुत्र	३७	७३	विकृप	५७	११३	व्याज	६८	१३७
विद्वु	२४	४७	विष्टर	५६	११३	व्याघ	७	१४
विद्वर	८८	१८६	विष्णु	३७	७४	व्यह	६९	१३९
विनातात्मज	६५	१२३	विस्मय	८४	१७४	वज	६९	१३९
विनान्य	३८	१३७	विहायम्	२८	५३	वज	६९	१४०
विपिन	६	१३	वीचि	१३	२७	व्रतनी (व्रतनि)	११	२३
विफल	८८	१८६	वीतरग्ग	५८	११६	व्रतिन्	२	३
विभावम्	१२३	४६	वीर	५८	११५	व्रान	६९	१३९
विभु	१३३	६५	वृक	६४	१२७	व्योमन्	२८	५३
विभ्रम	५	१०	वृकोदर	७१	१६१	श		
विभ्रम	{ १३	२७	वृक्ष	४	७	शकल	८९	१८७
	{ ४९	१०	वृजिन	६६	१३९	शकुनि	२९	५४
विष्ट	३८	५३	वृत्त	८३	१८३	शकुनीश्वर	६५	१२८
वियोग	३७	१६०	वृत्तान्त	६८	१३८	शकुन्ति	२९	५४
विरचिन्	३६	७२	वृत्तहन्	३०	५८	शकुन्तकरि	८१	१६७
विरह	७३	१६०	वृद्या	८८	१८६	शक्तिमन्	३४	६७
विष्पाद्ध	३५	३०	वृषन्	३०	५९	शत्रु	{ ३०	५७
विरोचन	२६	५०	वृपम्	५७	१६४		{ १२	१९९
विलम्बित	८७	१८४	वृषभध्यज	३५	६९	शक्तनन्दन	७०	१४४
विलेपन	६०	११८	वृषभेदवर	५९	११७	शकर	३५	६८
विलोचन	८९	९९	वृषसेन	७०	१४४	शपा	०	१८
विवर	८९	११०	वृषाकपि	३३	६६	शम्	३५	६८
विवाह	८०	१८९	वृहित	५२	१०५	शभविधनकर	४३	८४
विवद	{ ७२	१४८	वेग	८३	१७२	शठ	३९	१६५
	{ ८४	१७३	वेधस्	३६	७२	शतक्रतु	३०	५७
विशाख	३४	६७	वेला	१३	२७	शतपत्र	११	२०
विशारद	७९	१५६	वेशमन	६६	१३२	शतमन्यु	३०	६०
विशारिन्	८	१७	वेश्या	१७	३६	शत्रु	२२	४४
विशाल	८७	१८६	वैजयन्ती	४३	८४	शकटी	८	१७
विशालाक्ष	३५	६९	वैनतेय	६२	१२९	शबरी	३३	१५१
विशिख	४१	८१	वैरिन्	२२	४४	शब्दभेदिन्	७०	१४४

शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक
शर	{ ७ ३९	१५ ७८	शिव	{ ३५ ९१	६८ ११०	श्रीद	४८	९६
शरण	६६	१३३	शिष्य	३	४	श्रुति	४९	९८
शरभ	४६	१०	शीघ्र	८३	१७६	श्रेयस्	९१	११८
शरवणोद्भव	३४	६७	शीघ्रगामुक	४६	११	ओणि( ओणी )	५१	१०३
शरीर	१९	३९	शीतल	८८	१८४	ओणीविव	६०	१२०
शर्व	३५	६७	शीघ्रु	६९	१२०	ओत्स्	६३	१२९
शर्वरी	६४	१२६	शीर्ण	८२	१७१	ओत्त	९२	११९
शर्वरीकर	६४	१२७	शील	८८	१८५	ओत्र	४९	९८
शल्क	८०	१८७	शुकितज	४७	१४४	क्लद्धण	८५	१७८
शवर	७	१४	शुक्ल	७१	१४३	श्वन्	४६	९२
शगिन्	२३	४३	शुचि	७१	१४३	श्वभ्र	८९	११०
शशिप्रभ	७२	१४७	शुड्डा-शुड्ड	६१	१२१	श्वसन्	३२	६२
शश्वन्	३७	१५९	शुड्डाल	४५	८९	श्वेत	७१	१४७
शम्न	४२	८३	शुनासीर	३०	५७	श्वेतवाजिन्	७०	१४३
शम्नजीविन्	१४	२९	शुभ्र	७१	१४७	श्वोवर्मीय	९१	११८
शाखिन्	५	११	शुचिर	८९	११०	ष		
शानकुम्भ	८२	१७२	शुकर	४६	९	पट्टपद	४२	८२
शान्त	८२	१७१	शूर	९०	११८	पड्डशन	८१	१६७
शारणी-सारणी	७३	१५०	शूलिन्	३५	७०	पञ्चकीण	८	१७
शर्वाङ्गन्	३७	७६	शृखलिक	४६	११	पण्मुख	३४	६७
शार्वल	४६	१०	शृखलित	८४	१७६	शाष्टिक	८१	१६७
शालि	८१	१६७	शृगिन्	{ ४ ७८	८	पोडन्	८१	१६७
शासन	७४	१५४	शेषुषी	५६	११०	स		
शास्त्र	२	४	शैल	{ ४ ३८	७	संयत	४४	८७
शिवर्चिन्	४	८	शैलधर	३८	७६	सर्वमिन्	२	३
शिविन्	{ ३३ ६३	६४ १२६	शोणित	८९	१८८	सर्वग	४४	८७
शिविवाहन	३४	६६	शोणी	७३	१५०	सशित	२	३
शिखडिन्	६३	१२६	शौड	६१	१२०	समृति	९०	"
शिपिविष्ट	३५	७०	शौडीर	८१	१६८	सस्कृत	७०	१६१
शिरस्	५०	१०४	शौरि	३७	७५	सस्तुत	५४	१०८
शिरोधर	५०	१००	शौर्य	८३	१७१	सस्थित	५८	१०८
शिरोहह	९०	१९५	श्यामा	२५	४८	सहनन	१९	३८
शिला	८२	१७०	श्येत	७१	१४८	सहित	७७	१६१
शिलीमुख	{ ३९ ४२	७८ ८२	श्येनी	७३	१५०	सकल	८८	१८७
गिलीमुखासन	४०	७९	श्रव	४९	९८	सक्त	६१	१२२
शिलोच्चय	४	८	श्रवण	४९	९८	सखी	२०	४१
गिलोद्भव	४७	९४	श्री	३८	७६	सख्य	९०	११७

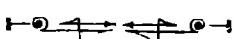
## धनञ्जय-नाममाला

शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक
सगोत्र	२१	४२	सप्ताचिष्	३३	६४	सलिल	७	१५
सकन्दन	३०	६०	सप्ति	२७	५२	सवयम्	२०	४१
सगत	९१	१९७	सभोचित	५६	११२	सवर्ण	६७	१२६
सग्राम	४४	८७	सभ्य	५६	११२	सवितृ	५१८	३८
सघ	६९	१४०	सम	{ ६७ ७७	{ १३६ १६९	सवित्री	१८	३८
सघात	६९	१४०	समज	६९	१४०	सव्यमाचिन्	७०	१४३
सजाति	६७	१३६	समर	४४	८७	सह	७७	१५९
सजुष्	७७	१५९	समर्वित्ति	७१	१४५	सहकारित्	२१	४२
सचर	७८	१६२	समवायिक	२१	४२	सहकृत्वन्	२१	४२
सज्जा	८०	१६५	समवेत	७७	१६१	सहचरी	२०	४१
सतत	८९	१८१	समस्त	८८	१८७	सहमा	८३	१७२
सतत	८७	१५७	समाज	६८	१३९	सहाय	२१	४२
सती	१७	३४	समालम्भ	६०	११८	सहस्रपात्	३६	७३
सन्कृत	६५	१२९	समिति	६९	१४०	सहस्राश	३०	५८
सत्य	८७	१८२	समीगर्म	३३	६६	सहित	७७	१६०
सत्यकार	९१	१९७	समीप	६९	१४१	साक्ष	७७	१६०
सत्रा	७७	१६०	समीण	३२	६२	सागर	१२	२६
सदन	६६	१३२	समुद्र	१२	२६	साधन	४३	८६
' सदउचित	५६	११२	समुद्रय	६९	१४०	साधन	४३	८६
सदा	७७	१५९	समद्र	१२	२६	साधीयम्	८३	१७२
सदागति	३२	६२	समूह	६९	१३९	माधु	{ २ ८०	१७०
सदुचित	५६	११२	सम्पराय	४४	८७			
सदृक्ष	६७	१३६	सम्पूर्ण	७७	१६१	सानुवाद	७४	१५३
सदृश	६७	१३५	सम्पली	१७	३५	साध्वी	१७	३४
सद्मन्	६६	१३२	सम्भूत	३७	१६१	मान्	४	९
सधर्म	६७	१३६	सम्बन्ध	२०	४१	मानुमत्	४	८
सधृची	२०	४१	सरणि	८८	१६२	मामज	४६	८९
मनानन	६३	१२५	सगमीकृह	१०	२०	साम्राज्यम्	३१	११६
मनाभि	२१	४२	सरस्वत्	१२	२६	मान्मेय	४६	९२
सन्तति	{ ६३ ६९	{ १२४ १३९	सरस्वती	५२	१०४	माहृ	७३	१५९
सन्तमस	७२	१८८	सग्नि	१२	२४	माल	{ ६७ ८६	{ १३६ १८१
सन्तान	६३	१२५	सरूप	६७	१३६	माहम	७४	१५३
सन्देश	७४	१५४	सरोज	१०	२०	गाहाय	८२	१९७
सन्धानीत	८५	१७६	सर्प	६४	१२८	सित	{ ७१ ८९	{ १४९ १७६
सन्धिधि	६९	१४१	सपिष्	६१	१२२			
सन्मति	५८	११५	सर्वं	८८	१८७	सिद्धान्त	३	४
सपत्न	२२	४४	सर्वज्ञ	५८	११६	सिन्धु	१२	२४
सपदि	७६	१५७	सर्वदा	७७	१५९	सिन्धुर	४५	८९
			सर्ववल्लभा	१७	३६	सिंह	५२	१०५

शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक
सीकृत	५३	१०६	सौहृद	९१	१९७	स्वाहापति	३३	६५
सीमन्	१३	२६	सौहृद्य	९१	१९७	स्वैरिणी	१७	३५
सीमन्तिनी	१४	३०	स्कन्द	३४	६६	ह		
सीर	७०	१४२	स्तन	५१	१०२	हस	६३	१२५
मुकृत	६५	१२१	स्तनधय	२०	४०	हसवान्	६३	१२५
मुचिरनन	७६	१५६	स्तनित	५३	१०५	हसी	६४	१२७
मुत	१९	३९	स्तब्ध	{ ७५ ८१	१५६ १६८	हहो	७६	१५७
मुधासूति	२४	४७	स्तम्बकर्गि	८१	१६७	हत्तोक्ति	५४	११०
मुनाशीर	३०	५७	स्तम्बेरम्	४६	८८	हय	२७	५२
मुनिमीक	७०	१४४	स्तेन	८१	१६९	हर	३५	७०
मुन्द्र	८५	१७७	स्त्री	१४	३०	हरि	{ ६ २७ ३० ३७	{ १२ ५२ ५७ ७४
मुन्द्री	१५	३१	स्थपुट	८७	१८३	हरिण	४५	१०
मुपाण	६५	१२९	स्थविर	६३	१२४	हरिण	६४	१२७
मुभट	९०	१९६	मथाणु	३५	६८	हरिणी	७३	१५०
मुमन	४०	८०	स्थान	६६	१३३	हरिन्	{ ३२ ७२	{ ६१ १४९
मुर	३०	५६	स्नेह	७७	१६०	हरित	७२	१४९
मुग	६१	१२१	स्पर्शा	१७	३५	हरिद्राम	७२	१४९
मुवर्ण	४७	९३	स्पष्ट	८४	१७३	हरिवाहन	३०	५९
मुष्टु	८३	१७३	स्फीकृत	५२	१०५	हर्ष्य	६७	१०५
मुहृत्	२०	४१	स्फुट	८४	१७३	हर्षि	५४	१०९
मूत्रामन्	३०	५७	स्मर	४०	८०	हल	७०	१४२
मूनु	१९	३९	स्मृत	५४	१०८	हलि	७०	,
मूनूत	८७	१८२	स्यद	८३	१७२	हव्यवाह	३३	६६
मूरि	५५	१११	स्यन्दन	५३	१०६	हस्त	५०	१०१
मूय	२६	५०	मज्	६०	११९	हस्तगावा	५०	१०१
म् प कार्गि	३०	७७	मष्टृ	३६	७३	हस्तिन्	४५	८८
मना	४३	८६	म्ब्र	४७	९५	हाटक	४७	९२
मेनाना	३४	६६	मवनी	१२	२४	हार्द	९१	११७
मनानीपितृ	३५	६८	मोतस्विनी	१२	२४	हाला	६१	१२१
मेन्द्र	३०	५६	मोतस्विनीपति	१२	२५	हिम	{ ५९ ८५	{ ११८ १७९
मेन्य	४३	८६	स्व	४७	९५	हिमवत्सुता	३६	७१
मोदय	२१	४२	स्वभाव	८८	१८५	हिरण्य	४७	९३
मोमवश	७१	१४६	स्वर्	३०	५६	हिरण्यकशिपुसूदन	३७	७५
सौवामिनी	९	१८	स्वर्ण	३०	५६	हिरण्यगर्भ	३६	७३
साध	६७	१३५	स्वसृ	२१	४३	हिरण्यग्रेतम्	३३	६४
साम्य	८७	१७७	स्वान्त	४१	८१			
मोरभ	९१	१९७	स्वामि	{ ५ ३४	१०			
सौरि	३८	७५			६७			
सोहाद	९१	१९७						

## धनञ्जय-नाममाला

शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक
हीन	८२	१७१	हृद	८५	१७८	हेमन्	४७	९३
हुताश	२३	६५	हृषीक	६५	१२९	हेरिक	८१	१६९
हुताशन	३३	६६	हृषीकेश	३७	७४	हेषा	५२	१०५
हृकृत	५३	१०५	हे	७६	१५६	हैयगवीन	६१	१२२
हृदय	४१	८१	हेति	४२	८३	हृष्व	९३	१५८



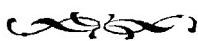
## अनेकार्थनाममालास्थशब्दानुक्रमणिका

शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक	शब्द	पृष्ठ	श्लोक
अ			कैवल्य	१००	४१	दाव	९७	१८
अक्ष	९८	२६	कोटि	९६	१५	द्रव्य	१००	४१
अज	९८	२१	क्षीर	९५	१३	द्विज	९६	११
अञ्जन	९४	९	ग			ध		
अथ	१००	३९	गुण	१००	३७	धर्म	१००	४१
अद्वि	९५	११	गुह्य	९६	१५	धातु	०९	३२
अनन्त	९३	४	गो	९८	२७	धिष्य	९४	७
अन्त	९८	२५	घ			प		
अन्तर	१००	३८	घृत	९३	५	पतग	९४	८
अब्द	९७	१७	च			पयम्	९६	१३
अम्बर	९४	७	चर्चा	९७	१७	पर्जन्य	९३	४
अर्ध	९६	१६	ज			पाञ्चजन्य	९५	१०
अर्थ	९८	२४	जात्य	९६	१६	पुद्गल	१००	४२
अशोक	९५	१२	जिन	९३	३	पुन्नाग	९४	९
इनि	१००	४०	जीमूत	९३	४	पुष्कर	९९	२९
			ज्योतिष्	९४	६	प्राय-प्रायम्	९८	२४
क			त			बाधा	९६	१५
कदली	९५	१२	तत्र	१००	३६	ब्रह्मवाच	१००	३७
कम्बु	९५	१०	तत्प	९४	६	भ		
कस्त्र	९५	१०	तार	९५	१३	भग	१००	४३
काष्ठा	९६	१४	तार्थ्य	९७	१६	भाव	९८	२४
कीनाश	९७	१९	तीर्थ	९९	३१	भुवन	९३	५
कीलाल	९६	१५	द			भूरि	९५	१३
केतन	९४	७	दव	९७	१८			

भाष्यस्थशब्दानुक्रमणिका

१३५

शब्द	पृष्ठ	श्रोक	शब्द	पृष्ठ	इलोक	शब्द	पृष्ठ	इलोक
म			विवर्मत्	१३	३	सारग	१४	१
मयूर	१४	८	विष	१४	५	सारम	१४	८
	१		वृषाकपि	१३	३	साल	१४	७
रम्भा	१५	११	वैकुण्ठ	१३	४	सिन्धु	१४	७
रस	११	३०	व्यामोह	१६	१४	११६	१४	१४
राजन्	१५	११	श			मुमनस्	१५	१२
राम	६५	६	शङ्क	१७	१८	सोम	१७	२१
	८		शम्भु	१३	३	स्तम्भ	१७	१७
लविष	१०१	८८	शिवरित्	१५	११	स्थाणु	१७	१७
ललाम	११	३३	शृचि	२८	२३	स्यन्दन	१५	११
	१		म			स्यान्	१०१	४५
वन	१३	५	मत्त्व	१००	३६	स्वर	१९	३५
वर्णणा	१००	८२	मन्त्र	१६	१४	स्वैर	१७	१७
वर्ण	११	३४	ममय	१३	३५	ह		
वाम	१८	६	मग्न	१४	९	हम	०७	२०
विरोचन	१७	२०	मार	०४	८	हरि	१८	२८



नाममालाभाष्यस्थशब्दानामकारादिसूची

शब्द	पृष्ठ	पंक्ति	शब्द	पृष्ठ	पंक्ति	शब्द	पृष्ठ	पंक्ति
अ			अचिग्नशु	१	२०	अन्धकरिषु	३६	४
अश्	२६	२१	अच्युत	२८	१५	अन्धनमम	७२	१२
अशुमान्	२६	२१	अण्डज	८	२८	अपशी	२३	२
अशुमाली	२६	२०	अतिमात्र	८३	१८	अपसर्प	८६	२३
अक्ष	४९	२३	अतिवेल	८३	१८	अपापित्त	३४	१६
आग	६	६	अतिनेत्रप्रसूत	२४	२५	अफल	६	२४
अस्तिनभू	३५	३	अधिघान	४९	८	अठज	२४	२५
अथग्रथन्वन्	३१	२६	अनन्त	२८	१५	अब्द	९	१२
अग्रिय	२१	१८	अनन्ता	४	६	अविजा	३८	२२
अज्ञज	३९	१२	अनदिवर	७७	११	अभिक	१८	२०
अज्ञुर	५०	२४	अनिमिष	३०	१४	अभिस्थ्या	७४	१३
अज्ञुरी	५०	२४	अनीक	४५	२	अभिजन	६३	८
अचला	४	६	अनीकिनी	४४	२०	अभिनव	७५	१७

## धनञ्जय-नाममाला

शब्द	पृष्ठ	पंक्ति	शब्द	पृष्ठ	पंक्ति	शब्द	पृष्ठ	पंक्ति
अभिमन्यी	२३	३	आ	३८	२८	उदन्त	६८	२०
अभियाति	२३	१	आ	५९	१०	उदन्वन्	७५	२
अभिसारिका	१७	१७	आच्छादन	२१	१०	उदन्वन्	१३	२
अभीक	१८	१९	आत्मीय	२१	१०	उद्ग्र	५४	२५
अभीशु	२३	१८	आदित्य	२६	१०	उधस्य	६२	१३
अभ्यग्र	७०	१	आधार	६२	७	उपकण्ठ	६९	२३
अभ्यागम	४५	२	आनन्द	८	७	उपगत	९१	१०
अमुक	१८	२०	आप्न	२१	१०	उपवृत्ति	२८	१०
अमृत	८	४	आप्तरूप	५६	८	उपमा	६८	८
अमृतनिर्गम	२५	२	आभील	८७	१०	उपलब्धि	५५	८
अमृताशन	३०	१६	आमिष	२०	२१	उपहूर	८८	१८
अम्बा	१८	२३	आयत	७६	१८	उपाधि	६८	१८
अग्नुभृत्	९	१३	आयोधन	८१	१	उरविज	५१	२३
अयन	७८	१२	आरात्	६०	२३	उरु	८३	१८
अरण्यश्वा	६४	१४	आरोह	७९	०	उपर्वुद	३८	१०
अरण्यानी	६	२३	आझीविष्य	६५	१			ऊ
अरिष्ट	६२	१८	आशुग	३३	८	ऋभि	१३	१०
अर्चिष्मान्	३४	१५	आथ्रयाश	३८	१८			ऋ
अर्द्धनि	२७	२५	आश्रुत	०९	१०	ऋक्षय	८८	१७
अध	८९	४	आमन्न	३०	१	ऋक्षेश	२४	२५
अर्भक	२०	२	आमव	६१	१५	ऋभु	३०	१३
अल्कार	६०	११	आम्कन्दन	८५	१	ऋद्य	६८	१७
अवनमम	७२	१२	आहाय	८	१०	ऋण्डि	८३	२३
अवदान	७८	१५		३		ऋष्य	६८	१७
अवयव	१०	१३	इधूद	१३	८			ए
अविनश्वर	७७	११	इच्चिकिल	१०	१०	एकपदी	७८	१२
अविनीता	१७	१७	इत्वर्गी	७७	१७	एकाल्प	८४	१८
अव्यय	८८	१८	इन्दिन्दिर	८२	९	एण	६४	१७
अश्रुम	६६	१०	इन्दु	२८	२८			ए
अश्मन्	८२	१	इन्द्रावरज	३८	१५	ऐरावती	०	३१
आठीवान्	५१	२३		३				क
असती	१७	१७	ई	२८	२२	कक्षुद्मती	५१	१०
अस्मूर्ण	८०	८	ईशान	३६	८	कक्षपत्र	३०	२०
अमहन	२०	२		उ		कच्छ	१३	५
अमुहत	२३	२	उन्कर्ष	६१	२८	कञ्चुकी	६५	३
अम्बप	२९	२८	उदक	८	४	कटिसूत्र	६०	१०
अम्बज	३०	१३	उदग्र	७६	१८	कटीर	५१	१९
अहर्पति	२६	२२						

भाष्यस्थशब्दानुक्रमणिका

१२७

शब्द	पृष्ठ	पंक्ति	शब्द	पृष्ठ	पंक्ति	शब्द	पृष्ठ	पंक्ति
कडव	५१	१६	कालिन्दीमोदर	७१	११	कैतव	२८	१८
कटम्ब	{ ३९ ६३	२१ १२	कास्यपनन्दन	६५	१६	केरविप्रिय	३७	८
कदर्य	८५	१	काश्यपी	८	७	कोल	४६	१५
कनिष्ठ	२१	१५	किण्व	६६	१०	कोविद	५६	२
कन्धग	५०	११	किम्पचान	८५	१	कौण्प	२९	२८
कन्धाह्न	५२	०	किर	८६	१६	कौमृतिक	८०	२
कपट	६८	१८	किरि	८६	१५	ऋतुपुरुष	३७	१६
कबन्ध	८	८	किमि	११	२७	ऋव्याद	२९	२८
कमल	८	८	कीनाश	{ २० ७१	२८ ११	क्लीव	८५	१
कमला	३८	२१	कीलाल	८	८	क्षणिका	९	२०
कमिता	१८	१०	कीघ	६	१५	क्षितिघर	८	३०
कम्बल	६५	२१	कुज	६	८	धीर	८	८
कर्णजप	८१	२१	कुट	६	८	धीरोदातनया	३८	२१
कर्दमज	१०	१२	कुण्डली	६१	१	धुद	{ ८१ ८५	२१
कर्पट	५९	१२	कुध	४	३०	धुत्त	८५	१
वर्वुर	{ २९ ६३	२८ १५	कुन्तल	०१	१	धुत्त	८५	१
कर्मसाधी	२६	२२	कुमुदविवह्नभ	२७	७	दुलक	८५	१
कर्ष	१२	११	कुम्भीनम	१०	३	धेत्र	{ १६ १९	१५
कलत्र	५१	१८	कुरग	१४	१३	धेत्रज	७९	२०
कलम्ब	३९	२०	कुरगम	६१	१७	ख		
कल्यान	८७	१९	कुल	६३	८	खग	२६	२१
कलाप	{ ५३ ६०	१४ १९	कुल्या	१२	११	खम	३१	२१
कल्क	६६	९	कुहक	१०	२	खर	८३	१९
कन्मप	६६	१०	कुहर	८९	२१	खर्जर	८३	१९
कन्त्र	६१	१६	कुच	६१	१०	ग		
कन्त्र	६१	१६	कुट	६८	१८	गन्धदारिका	१८	६
कन्याण	८७	१५	कल	१३	०	गन्धर्व	२३	२४
कवि	५६	२	कूरङ्कप।	१२	१०	गन्धोत्तमा	६१	१५
कश्य	६१	१६	कृतकर्मा	७०	२०	गरिम	६२	१७
काकोदर	६५	२	कृतमुख	७०	२०	गर्भपोन	२०	२
काञ्चीपुर	५१	१८	कृतहस्त	८९	२०	गाहेय	{ ३५ ४७	४
कान्ता	१६	१	कृती	५८	२	गाहेय	१४७	१५
कापिशायन	६१	१६	कृतिवामा	३६	५	गाढपत	३९	२१
कामध्वमी	३६	८	कृपीटयोनि	३८	१५	गिरिक	४७	१५
कार्पेटिक	८०	२	कृष्टि	५६	२	गिरिश	३६	३
कालसार	६४	१७	कृष्णवत्मा	३८	१६	गीर्वाण	३०	१३
कालिदृग	४५	१६	कृष्णसार	६८	१७	गुडिका	४७	१९
कालिन्दीकर्षण	७०	११	केतु	२३	१९	गुरु	८७	१८

शब्द	पृष्ठ	पंक्ति	शब्द	पृष्ठ	पंक्ति	शब्द	पृष्ठ	पंक्ति
गुलिमनी	११	२७	चन्द्रहास	६३	३६	जैवानृक	२५	२
गूळ	४४	२०	चपला	{ ९ १७	२० १७	ज्ञ	५६	२
गूढपात्	६५	१	चय	६३	१२	ज्ञानि	२१	१०
गृहा	१६	१५	चला	३८	२२	ज्योति	६९	२३
गोकर्ण	६५	३	चामीकर	४७	१५	ड		
गोकुल	७८	६८	चिह्नुर	९०	२०	डिम्ब	२०	२
गोत्र	{ ६ १९ ६३	{ ३० १६ ८	चिकित्स	१०	१०	त		
गोत्रभिद्	३१	२६	चित्रक	८६	११	तटिनी	१२	१०
गोपति	{ २६ ३१	{ २० २६	चित्रकाय	८६	७	तटी	१३	७
गोप्य	३८	१८	चित्रपुर्व	३९	२०	तडित्तम्	०	१३
गोप्य	३८	१८	चित्रभान्	{ २६ ३१	२९ ४५	तनया	२०	१८
गोर	५२	६	चीवर	५०	११	तन्त्र	६४	२०
गोरीपुत्र	३५	३	ज			तप्तकी	६०	११
ग्रावन्	८०	९	जगच्चक्षु	२६	२०	तमाल	६६	०
ग्रावा	८	३०	जगत्कर्ता	३७	१०	तमस्त्रिवनी	२५	२५
ग्रीवी	८८	१९	जगन्प्राण	३८	७	तमालपत्र	८३	११
<b>घ</b>								
घन	१९	६५	जघन	५९	१०	तमित्र	३८	११
घनरस	८	३	जघ्ना	५१	२२	तमित्रा	३५	११
घस	२६	२८	जनान्तिक	८४	२८	तमी	२५	२५
घृणि	२३	११	जन्य	६५	१	तमोधन	२१	११
घृत	६२	७	जम्बाठ	१०	१०	तरक्ष	८६	८
घृतोद	१३	३	जम्बूनद	८०	१५	तरम	२१	११
घोटक	२७	२५	जयन्त	६३	१०	ता	३८	११
घोणा	५१	२	जयन्ती	४३	१०	तार	६३	१०
<b>च</b>								
चक्र	४८	२०	जलचर	८	२०	तारकारि	३०	३
चक्रवाल	६३	१२	जलमुच्	०	१३	तागपथ	२८	११
चक्राह्नवाह	६२	२५	जलराशि	१३	२	तात्र्य	२३	१८
चक्री	६५	६	जलशयन	३८	१०	तिग्माशु	२६	४
चक्षु ध्रवा	६०	२	जाल	{ ६३ ६७	१३ २३	तिमिररिपु	२६	२०
चञ्चरीक	६२	९	जालक	६७	२३	तीर	१३	१०
चञ्चला	९	२१	जिघासु	२३	२	तुण्ड	८०	१८
चटुला	०	२१	जिन	३८	१५	तृष्णीतनु	२६	२८
चन्दकी	६४	३	जिण्यु	३१	२५	त्रिक	५१	१०
चन्द्रवम्	६३	१५	जिह्वाग	६५	०	त्रिकस्थानक	५१	१०
चन्द्रसज्ज	६०	७	जीर्ण	६३	४	त्रिदश	३०	१२

त्रिदशार्दीषिका	३६	११	दीर्घ	७६	१८	धूमिका	८५	२५
त्रिदिव	२८	१५	दीर्घजडघ	४६	१९	धृणि	२३	१९
त्रिपथा	७८	१५	दीर्घपृष्ठ	६५	२	ध्रुव	७७	११
त्रिपुरान्तक	३६	३	दुर्गंति	९०	१		न	
त्रिप्रचरा	७८	१५	दुर्जन	८१	२१	नक्तमुखा	२५	२५
त्रियामा	२५	२६	दुर्वर्ज	४७	१०	नखरायुध	४६	४
त्रिवत्तर्मा	२७	१५	दुर्वर्त्	२३	३	नलिनी	११	२२
त्रिविष्टपमद्	३०	१३	दुश्चयवन	३१	२५	नाक	२८	१५
त्रिमचग	७८	१५	दृक्पृथि	६५	३	नागाननक	६५	१६
त्रिमरणि	७८	१४	देवता	३०	१२	नालीक	८०	१५
त्रिमोता	३६	११	दैवत	३०	१४	नासिका	५१	२
त्र्यध्वा	७८	१४	दोषग्राही	८१	२१	नि शलाक	८८	१८
			दोषज्ञ	५६	२	निकाय	६३	११
			द्यु	२६	२८	निकुरम्ब	६३	१२
दक	८	४	द्युम्न	४८	६	निखिल	८८	२८
दक्ष	७९	२०	द्रञ्ज	४९	८	निगम	{ ४९ ७८	८
दक्षाध्वरध्वसक	३६	४	दु	६	५	निंगम्	८८	११
दक्षिणापति	७१	१२	द्रुणा	४२	१	निर्ग्य	९०	१
दण्डधर	७१	११	द्वन्द्व	४५	२	निर्जर	३०	१२
दण्डाहत	६२	१८	द्वादशान्मा	२६	२२	निर्झिणी	१२	१०
दध्युद	१३	३	द्विजगज	२५	१	निर्व्ययन	८९	२१
दन्तावल	४५	१६	द्विजित्त्व	८१	२१	निवह	६३	११
दन्दशूक	६५	२	द्विगमन	६५	२	निशीथिनी	२५	२६
दमुना	३४	१६	द्वीपवती	१२	११	निशीथिनीनाथ	२५	१
दमृना	३४	१७	द्वीपी	४६	७	निषद्वर	१०	१०
दयिता	१६	१	द्रेषण	२३	२	तून्न	७६	१७
दर्वाकर	६५	२				नृपलद्वम	९०	२६
दल	८०	४				नैम	८९	८
दशमीस्थ	६३	४	धनञ्जय	३४	१६	नेस्ना	५१	१
दस्यु	{ २३ ८२	३ ४	धरणिधर	३८	१४	नैकपेय	२९	२८
दाक्षायणीरमण	२५	२	धर्मगज	७१	११	नैकपेय	२९	२८
दाऽऽडजिनक	८०	२	धर्षणी	१७	१७	नैकपेय	२९	२८
दाव	६	२३	धव	१८	१९	नैऋत	२९	२८
दाशाहं	३८	१४	धाम	२३	१९	न्यङ्क०	६४	१७
दामेरक	४६	१९	धाराधर	९	१२			
दिगम्बर	७२	१३	धीर	५६	१	प		
दिनकर	२६	२०	धूपक	४६	१९	पङ्क	६६	१०
दिनमणि	२६	१९	धूमध्वज	३४	१५	पङ्कज	१०	१२
दिवम्पति	३१	२७	धूमयोनि	९	१३	पञ्चशाख	५०	१९
			धूमल	७२	७	पञ्चानन	४६	४

## धनञ्जय-नामसाला

पञ्चेषु	३९	१२	पिण्ड	१९	१६	प्रचलन	८४	१८
पट	५९	१३	पितृपति	७१	११	प्रतन	७६	४
पटी	५९	१३	पोतवासा	३८	१३	प्रतानिनी	११	२७
पट्टसूत्र	६१	१	पोति	२७	१५	प्रतिकिट्ट	६६	१०
पताकिनी	४४	२०	पीयूष	६२	१३	प्रतिज्ञात	९१	१०
पति	१८	१९	पीयूषस्वि	२५	१	प्रतिपक्ष	२३	२
पदज्येय	१४	३०	पीलु	४५	१६	प्रतिभय	८७	२२
पदवी	७८	१२	पुञ्ज	६३	१७	प्रतिभा	५५	१७
पदाङ्गद	५३	१४	पुर्वकिनी	११	२२	प्रतिम	६८	८
पदिक	१४	३०	पुण्डरीक	४६	७	प्रतिमोपक	८२	५
पद्म	१४	३०	पुत्री	२०	१४	प्रतीक	१९	१६
पद्धति	७८	१२	पुदगल	१९	१६	प्रतीपदशिनी	१६	१
पश्चाशन	६५	१६	पुर	{ १९	१६	प्रत्न	७६	४
पद्मवासा	३८	२१		{ ६७	२	प्रत्यनीक	२३	२
पद्मा	३८	२१	पुरान्धी	१५	२८	प्रदह	३९	११
पद्मी	४९	१६	पूर्वज	१०	७	प्रद्युम्न	३९	११
पद्मा	७८	१२	पूलक	८२	९	प्रद्योत	२३	११
पद्म	६२	१३	पूर्वप	१४	९	प्रद्योतन	२६	११
पयोधर	९	१२	पुष्क	१०	७	प्रधन	८५	१
पर	२३	२	पुष्कर	{ ८	३	प्रपात	१३	१०
परमेश्वर	३६	३		{ २८	१४	प्रबृद्ध	५६	२
परमेष्ठी	३७	१०	पुष्ट	१०	७	प्रभाकर	२६	२१
परास्कन्दी	८२	६	पुष्पलिद्	४२	९	प्रमदा	१५	२८
परिपन्थी	२३	२	पूरा	६३	१२	प्रलम्बधन	७०	११
परिल्लुता	६१	१५	पूर्वज	२१	१८	प्रवया	६३	४
परिषज्ज	१०	१२	पूर्वदिग्यनि	३१	२६	प्रविदारण	४१	१
परिकार	६०	११	पूरुक	२०	२	प्रवृत्ति	६८	२०
पजंन्य	३१	२६	पूर्वाकु	५५	१	प्रवेणी	९१	७
पर्यवस्थाता	२३	२	पूर्णि	२३	१९	प्राशु	७६	१८
पलाशी	६	५	पूर्णदश	३३	८	प्राणाधिनाथ	१८	२०
पल्ल	७७	१४	पूर्णक	३९	२१	प्राळेयाशु	२५	१
पवनाशन	६५	३	पोत	५९	१३	प्रावर	५९	१३
पशु	८०	१५	प्रकट	८४	५	प्रावार	५९	१३
पशुपति	३६	३	प्रकार	६८	८	प्रीति	५४	२३
पाशुला	१७	१७	प्रकाश	{ ६८	८	प्रेत्ता	५५	७
पाक	२०	२		{ ८४	५	प्रेतपति	७१	११
पाकशासन	३१	२७	प्रकोष्ठ	५०	१६	प्लवङ्गम	६	१५
पानीय	८	४	प्रस्त्र	६८	८	फल	६	२३
पार्वतीनन्दन	३५	४	प्रग्रह	२३	१९	फलक	५१	११
पिचण्ड	५१	१०	प्रचलाकी	६४	३			

<b>ब</b>			<b>भूवन</b>	८	४	<b>माधव</b>	६१	१६
बद्धभूमिक	६७	७	भूच्छाय	७२	१३	माधवक	६१	१५
बद्धग	८०	१४	भूतधात्री	४	६	माध्वीक	६१	१७
बभ्रु	३८	१५	भूतेग	३६	३	मानसीकम्	६३	२३
बल	७०	११	भैरव	८७	२२	माया	३८	२२
बलमूदन	३१	२५	भोक्ता	१८	१९	मायावी	८०	३
बहिर्ज्योनि	३४	१५	भोगी	६५	२	मायी	८०	३
बहूल	३८	१४	भ्रंण	२०	३	मितस्पत्र	८५	१
बाडिश	८०	१६				मित्र	२६	११
बाणासन	४२	१	<b>म</b>			मित्र	६८	१८
बाल	{ २०	२	मञ्जुकेश	३८	१३	मिहिका	८५	२५
	{ ८०	१४	मण्डन	६०	११	मिहिर	२६	२०
बालिग	८०	१४	मण्डल	६३	१२	मुकुन्द	३८	१४
बाहुल्य	३५	८	मति	५५	८	मुदिर	९	१३
बचकग	८७	२	मनिमान्	५६	३	मूर्तिज	१९	२०
बढ़ि	५१	८	मन्त्य	८	२८	मधंज	९०	२९
बृहत्	८७	१८	मधु	६१	१५	मृगदग	४७	२
बृहद्भानु	३४	१६	मधुकर	४२	८	मृगरिपु	४६	४
ब्रह्मवारी	३५	४	मवुमख	३९	१२	मृगाङ्ग	२५	२
ब्रात्री	५२	२०	मनमिज	३९	११	मृगार्ग	४६	७
			मनीरी	५६	२	मृणालिनी	११	२२
<b>भ</b>			मन्त्रज	८७	२			
भग	२६	२०	मन्या	५०	११	<b>मृडल</b>	७५	१४
भयानक	८७	२२	मयूर	२३	१९	मृद्य	४५	१
भर्ग	३६	४	मरालवाह	६३	२५	मृद्वीक	६१	१७
भर्ता	१८	१९	मर्हत्	३०	१३	मेघपुष्प	८	४
भर्तीरी	३८	२२	मरुद्वर्मन्	२८	१४	मेधा	५५	८
भल्ल	३९	२१	मल	६६	१०	मोषक	८२	५
भल्लि	३९	२१	मलिम्लुच्च	८२	४			
भषण	४७	२	मस्तक	५२	९	<b>य</b>		
भसल	८२	९	महानेजम्	३५	४	यथार्थवर्ण	८७	१
भानमान्	२६	२१	महावल	३३	८	ययु	२७	२५
भास्कर	२६	१९	महाविल	२८	१५	याज्य	६२	७
भास्मान्	२६	२०	महारजत	४७	१५	यातयाम	६३	४
भीम	{ ३६	८	महामेन	३५	४	यामिनी	२५	२६
	{ ८७	२२	महिला	१६	१	यृथ	६३	१२
भीषण	८७	२२	महीरह	६	५	यृनी	१५	२३
भीष्म	८७	२२	महेला	१६	१			
भीष्मसू	३६	११	मा	{ २५	२	<b>र</b>		
भुजङ्कमुक्	६५	३		{ ३८	२२	रजनीकर	२५	१
			माणवक	२०	३	रत्नगर्भा	४	६
						रत्नवती	४	६

स्थान्त्रिपाणि	३८	१४	वरयिता	१८	१९	विल	८९	२१
रमणी	१५	२८	वरला	६४	११	विलेशय	६५	२
रमा	३८	२२	वराक	८५	१	विवसन	५५	१०
रवण	४६	१९	वरिष्ठ	२१	१८	विवस्वान्	२६	२०
रहिम	२३	१९	वर्णिनी	१५	२८	विविक्त	८४	१८
रसा	४	६	वर्णनी	७८	१२	विशारद	५६	३
राक्षस	२९	२७	वर्षीयान	२१	१८	विशिख	३९	२०
रागसूत्र	६१	१	वर्ष्म	१९	१६	विश्वस्म	८८	६
राजसर्प	६५	३	वर्हण	५२	२८	विश्वसप	३८	१३
राजा	२४	२४	वशा	१६	१	विश्वाम	८८	६
रात्रि	२५	२६	वस्ति	२५	२६	विष्टर	६	६
राशि	६३	१२	वमु	{ २३	१९	विष्टरभवा	३८	१५
रिष्य	६४	१७		{ ३४	१५	विष्णुपद	२८	१५
षष्म	४७	१५	वस्त्र	५९	१२	विष्णुपदी	३६	११
सम	४७	१५	वस्त्र	५९	१०	विष्णुर्य	६५	१६
स्त्रि	२३	१९	वत्तिरेता	३६	४	विष्वकोन	३८	१३
रुच्य	२९	२२	वातप्रभी	६४	१७	विसर	६३	११
सु	६४	१७	वायदेव	३६	८	विसार	८	२९
सोक	८९	२२	वामनेत्रा	११	२८	विस्तीर्ण	८७	१८
सोचि	२३	१८	वार्गिद	९	१३	वीचिमाली	१३	२
सोधोवक्त्रा	१२	११	वार्ता	६८	२०	वीणा	९१	७
सोप	३९	२१	वामनेयी	२५	२६	वीतहोत्र	३४	१६
सोलस्व	४२	९	वामिता	१५	२८	वीनि	२७	२५
सोहिणीवत्त्वम्	२४	२५	वाम्नारापनि	३१	२६	वीरु	११	२७
<b>ल</b>								
लध्य	६८	१८	विकर	६३	११	वृथ	६	५
लध्यवर्ण	५६	१	विकिर	२९	१७	वृजिन	९१	१
लवणोद	१३	२	विकर्नन	२६	२०	वृत्तान्त	७५	०
लहरी	१३	१७	विक्रान्त	९०	१८	वृत्तारि	३१	२५
लेख	३०	१३	विग्रह	{ १९	१५	वृद्ध	{ ५६	२
लेड्वह	४७	२		{ ४५	२		{ ६३	४
<b>व</b>								
वक्षोऽह	५१	१४	विज्ञेय	८०	११	वृद्धश्च	३०	१३
वज्रधर	३१	२६	विप्रचित्	५६	२	वृषाङ्ग	३६	५
वटु	२०	३	विपुला	४	६	वेणी	९१	७
वनमाली	३८	१५	विवृथ	३०	१३	वैकुण्ठ	३८	१४
वनोक्तस्	६	१५	विभव	४८	७	वैजयन्त	४३	१०
वपा	८९	२२	विभावरी	२५	२५	वैवम्बन	७१	११
वयसी	२०	१६	विरोक	२३	१९	व्यक्त	५६	३
						व्यञ्जक	८०	३

व्याल	६५	१	शुक्लापात्रा	६४	३	सदेश	६९	२३
व्यूह	६३	१३	शुचि	३४	१५	सन्	४६	२
व्योमकोश	३६	३	शुष्ठा	६१	१५	सनातन	३८	१५
व्रज	६३	११	शुपि	८९	२२	सनामेय	७७	१०
व्रात	११	२७	शृग	२६	२०	सनीड	६९	२३
<b>श</b>			शोक	२३	२०	सन्निकट	७०	१
शकली	८	२८	शोवलिनी	१२	११	सन्निभ	६८	८
शक्तिपाणि	३५	३	शैल	४	३०	सर्विण्ड	२१	१०
शतवृति	३७	१०	श्यामकण्ठ	६४	३	सन्नाइव	२६	२१
शतहदा	९	२०	श्राद्धदेव	७१	११	सभामद	५६	७
शतानन्द	३७	१०	श्रीकल्प	३६	३	सभास्तार	५६	७
शबल	६४	१७	श्रीनन्दन	३९	११	समय	३	१४
शम	५०	१९	श्रीपर्वति	३८	१३	समर्यादि	६०	२२
शमन	७१	११	श्रीवित्साङ्क	३८	१३	समवाय	६३	१२
शम्बुर	६८	१७	श्वलक	७४	१३	समाधा	७८	१३
शम्भु	३६	३	श्वभ्र	८१	२२	समानोदर	२१	१०
	३८	१५	श्वेत	४७	१९	समानोदर्य	२१	२०
शय	५०	१०	श्वनच्छुद	६३	२३	समिति	४५	२
श्वरी	२५	२५	श्वेतगोचरि	२५	१	समीक	६५	१
शतकी	८	२९	<b>प</b>			समीर	३३	८
शयव्यज	१३	२	पूर्वरण	४२	०	समुद्र	६३	१२
शशाङ्क	२५	१	पञ्चदिग्भ्र	४२	९	समुद्राय	४५	२
शशांगेवर	३६	३	<b>म</b>			समुद्रकाला	१२	१२
शाखामृग	६	१५	मय	५५	१	समुद्रनवनीत	२५	२
शानकुम्भ	८७	१५	गरवा	५५	८	समूह	६३	११
शात्रव	२३	२	नर्यावान्	५६	३	सम्मद	४५	३
शाद	१०	१०	सगर	४५	३	सम्मिन्	०५	२
शारिवा	११	२७	सविति	५५	८	सरम्बर्ता	१२	११
शाल	६	५	सवेग	८०	१३	सरिहर्ग	२६	११
शालावृक	४७	२	ग्रज्ञान	५९	१३	सरीमूळ	६५	१
शाव	२०	३	ग्रन्थाय	६७	२	सरीगिन	६४	३
शाश्वत	७७	११	मस्फाट	४५	२	सर्व सहा	८	७
शाश्वतिक	७१	११	मथा	२१	२	सर्वज्ञ	३६	३
शिक्षित	७९	२०	मग्नि	२१	१०	मवतोमुम्	८	८
शिवावल	६४	३	सदानन्द	७७	११	मलि	८०	१०
गिज्जीनी	५३	१३	मङ्गलपञ्चमा	३९	११	सविता	२६	१९
	६०	११	सञ्चय	६३	११	महचरा	१६	१५
शिरमिज	९०	२९	सत्र	६	२३	महचरी	१६	१५
शिशु	२०	२	सदानन्द	७७	११	महधर्मचारिणी	१६	३५
शीर्ष	५२	१						

सहत्रकिरण	२६	१९	सुरवर्तम्	२८	१५	स्वादूद	१३	३
सहाय	१४	३०	सुरसरित्	३६	१०	स्वापनेय	४८	६
सागराम्बरा	४	६	गुरोद	१३	३	स्वैरिणी	१७	१७
सामाजिक	५६	७	सूर	२६	१०		ह	
सामि	८०	४	सेक्ता	१८	२०	हम	२६	२१
सायक	३९	२१	सेवक	१८	३०	हमका	५३	१४
सार	४८	६	सैरिन्धी	१८	१८		{ २६	२०
सारङ्ग	६८	१७	सोदर	२१	१०	हरि	{ ३३	८
सारस्वत	६०	१९	स्कन्ध	५०	२१		{ ७१	११
साथ	६३	१२	स्तनयित्वु	९	१२	हरिण	७३	९
मिह	४६	४	स्तन्य	६२	१३	हरिदश्व	२६	२१
मिड्घनी	५१	२	स्तोम	६३	१३	हरिप्रिया	३८	२१
मिचय	५९	१२	स्थविर	३७	१०	हरिमान्	३१	२७
मिन	४७	१९	स्थानीय	४९	८	हरिहर्य	३१	२६
सिनाश्र	६०	५	स्थिरा	४	८	हर्यल	४६	४
सिनेतरगति	३४	१५	स्तिर्व	२६	२	हर्वि	६२	७
मीता	३८	२२	स्पशन	३३	८	हव्य	६	२३
मुकुमार	७५	१४	स्पश	८७	१	हारहर	६१	१६
मुर्चारिता	१७	९	स्पृह्य	६२	७	हिमवालु	६०	५
मुधामूर्ति	२५	२	स्पष्टा	३६	४	हिरण्य	४८	७
मुधी	५६	२	स्पोतम्	१२	११	हच्छय	३९	१२
मुपर्णकेतु	३८	१८	स्वजन	२१	१०	हेपण	५२	२६
मुपर्वा	३०	१८	स्वयम्भू	३७	१०	हैपा	५२	२६
मुमन्	३०	१२	स्वराट्	३१	२६	हादिनी	{ ९	२०
मुरज्जेष्ठ	३७	१०	स्वर्गीकम्	३०	१२		{ १२	११
मुग्निम्नगा	३६	११	स्वादुमा	६१	१५	हैपा	५२	२६

— — — — —

## यौगिकशब्दानुक्रमणिका

अस्तिपर्यायमन् सेनानी	६६	जित्यापर्यायिकर वल	१४२	मनुष्यपर्यायपति नृप	१४
अघपर्यायजयो जिन	१३१	ज्ञपाद्यादि वजाद्यन्त स्मर	८४	मयूरपर्यायपति गुह	१२६
अदितिशब्दान्परं सुतपर्याय-		नामरसपर्यायवती विसिनी	२३	मेघपर्यायपथ आकाश	१३
प्रयोगे देवनामानि	५६	दिनपर्यायिकर सूर्य	५०	गत्रिपर्यायिचर राक्षस	५५
आकाशपर्यायिग खग	५४	देवपर्यायिपति इन्द्र	५७	लक्ष्मीपर्यायिपति हरि	७६
आकाशपर्यायचर खेचर	५४	देहपर्यायिभव सूत	३९	वायुपर्यायपथ आकाश	५३
उड्गायर्यपति चन्द्र	८८	चुपर्यायधुनी गगा	७१	वार्षपर्यायिकर मत्स्य	१६
काष्ठादिनामत पर पालप्रयोगे		धनपर्यायदायक कुवेर	९६	वार्षपर्यायिवि अम्बुधि	१६
गजप्रयोगे अम्बुग्रप्रयोगे च		धीनामवजित मूर्ख	१६६	वार्षपर्यायाद्भव पदम्	१६
दिग्याल नामानि	६१	नारपर्यायारि मृगेन्द्र	९०	वित्तपर्यायपति कुवेर	१६
काशपर्यायिगह्नि मन्मय	७७	निशापर्यायिकर चन्द्र	४८	विधिपर्यायिपुत्र नारद	५३
वार्षुकपर्यायकोटि जटनी	७९	पन्नगपर्यायदैरि गरुद	१२८	विधिपर्यायचर वनेचर	१३
किरणवाचिभ्य पूर्व शीतशब्द-		पश्चिपन्पर्यायज कमलम्	२०	विष्टपर्यायिपति जिन	११३
प्रयागे चन्द्रनामानि,- यथा-		पवनपर्यायिपुत्र भीम	६६	शम्पापर्यायपति अम्बुद	१९
शीतकिरण	४६	पवनपर्यायपुत्र हनुमान्	६३	शैलभग्यादिधरः हरि	७६
किरणशब्देभ्य पूर्वम् उष्णशब्द-		पवनवाचिमखा अग्नि	६४	सेनानीपर्यायपिता शङ्कुरः	६८
प्रयोगे सूर्यनामानि , यथा-		पुष्पपर्यायशर म्मर	८०	ओतस्मिनीपर्यायिपति:-	
उष्णकिरण	४६	पुष्पपर्यायाम्ब्र म्मर	८०	अधिध	२४
कृष्णपर्यायपुत्र मन्मय	७७	प्रश्वपपर्यायिवान् गिरि	९	स्वर्गपर्यायिपति इन्द्रः	५७
गङ्गानदीश्वर मिन्धु	७१	भूमिपर्यायधर शैल	७	स्वर्गपर्यायवस्त्र त्रिदशः	५७
चिनापर्यायहारि मनोहरम्	१७८	भूमिपर्यायपति नृप	७	स्वाल्पपर्यायोद्भव मारः	८१
जाङ्गलपर्यायप्रिय राक्षस	५५	भूमिपर्याप्त हृक्ष	७	हिमपर्यायिकर चन्द्र	१७९

## अनेकार्थनिघण्टुगतशब्दानामकरादिसूची

अ		इ		केसरिन्	१०४	८५		
अस	१०४	७६,७७	इडा	१०२	२९	कोकिला	१०४	८२
अगारि	१०४	१०५				कोटरस्थ	१०५	१४९
अङ्ग	१०३	४०	उक्तन्	१०४	१०६	कोमल	१०२	२६
अज	१०२	३४,३५	उदवया	१०५	१३०	कौशिक	१०२	१३
अदिति	१०२	२९	उदार	१०५	१२९	ऋब्य	१०४	९५
अध्यात्म	१०१	१२३	उष्णीष	१०४	८८	क्षता	१०३	३८
अधृदा	१०२	३०	उत्ता	१०४	१०७	क्षय	१०३	४५
अनन्त	१०२	३७				क्षर	१०२	२१
अनिमिष	१०२	४	ऋत	१०४	७५			
अपाचीन	१०४	९३				ख	१०३	६४,६५
अवद	१०३	५७	ओ			ग		
अमृत	१०२	२२	ओषण	१०८	७५	गो	१०२	२
अन्धर	१०२	१९				गोलक	१०५	१३३
अन्वरीष	१०३	६१	क	१०२	३४	ग्रावाग	१०३	७८
अर्क	{ १०२	१५	क	१०३	४४			
	{ १०४	१४	ककुप्	१०४	८८	घ		
अलान	१०४	८६	कवन्ध	१०४	८८	घन	१०३	४६,४७
अवदात	१०३	५५	कम्बु	१०२	११	घनाघन	१०४	९३
अच्चारोह	१०४	९४	कर	१०२	२४	घृत	१०२	२३
असिन	१०३	६७	वर्षक	१०४	९०			
असुर	१०३	४८	कल	१०४	८६	च		
			कलभ	१०४	१०८	चटक	१०४	१०४
			कलुप	१०४	१०८	चम्	१०३	८८
आकृत	१०४	९८	कानीन	१०४	९०			
आक्रन्द	१०४	९५	किलास	१०४	१०४	छ		
आगोप	१०३	४०	कीरक	१०५	१२६	छेद	१०४	८६
आडम्बर	१०४	११२	कीनाग	{ १०३	५३,५४			
आत्मज	१०३	५३		{ १०५	१२१	ज		
आदित्य	१०३	७१	कीलाल	१०२	२५	जम्बुक	१०२	१४
आर्थि	१०४	१०२	कुण्ड	१०५	१३३	जीमूत	१०३	५८
आगतन	१०४	७८	कुण्डाशी	१०५	१३८	ज्योति	१०३	५५,५६
आर्य	१०४	९११	कूल	१०३	३६			
आलबाल	१०४	१०३	कृतघ्न	१०५	१२३	त		
आलान	१०४	९२	वृष्ण	१०२	२२	तपस्	१०५	१३१
आहत	१०४	८९	केतु	१०२	१६	तमोनुद	१०२	१६
						ताक्षी	१०३	५०

निलक	१०८	८४	पषड	१०४	९१	भार्या	१०९	११८
तुल्य	१०८	१०४	पतङ्ग	१०२	१२	भाव	१०४	८७
तंणी	१०३	५१	पदकृत्	१०८	१०१	भास्कर	१०२	१२
नेजम्	१०५	१३१	पद्मा	१०४	७७	भुवन	१०२	२५
तोदन	१०८	९२	पथ	१०२	१९	भूग्रिव	१०५	१४०
तोयद	१०३	८८	परचित	१०५	१३५	<b>म</b>		
त्रियामा	१०४	१०९	परमेष्ठी	१०६	१००	मञ्जूरा	१०१	८५
विशङ्क	१०३	६८	परिचर्च	१०६	८१	मण्डूक	१०८	८९
<b>द</b>			पर्जन्य	१०३	६०	मनवायिनी	१०५	१३९
दध	१०३	७०-७१	पलाश	१०४	१०६	मधु	१०३	६३, ६४
दक्षिण	१०४	९७	पवन	१०४	१११	मन्थिन्	१०२	१५
दविट	१०८	९९	पानीय	१०८	१०२	मन्द	१०५	१२१, १२३
दान	१०८	९२	पाप	१०८	९९	मन्दिर	१०८	१०६
दानन	१०५	१२४	पात्तचन्द्र	१०२	११	मधूसूख	१०२	८७
दीघ	१०४	११०	पिण्डह	१०८	८३	मलिमठुन	१०३	५२
दुश्वर्मन्	१०४	००	पिण्डित	१०८	९१	मस्कर	१०४	१०७
दोला	१०८	१०४	पुण्डिलोक	१०९	११७	महेषास	१०१	११८
द्विज	१०३	५२	पुलित	१०८	८२	माया	१०३	६३
<b>ध</b>			पुकर	१०३	३६	मूष्ट	१०८	९६
धनञ्जय	१०२	९	पुण	१०८	७८	मेचक	१०४	८३, १०६
धार्तराष्ट्र	१०३	६५	पुस्त्व	१०३	६२	मिल्ल	१०४	९१
धिष्ण्य	१०२	१८	पृष्ठाही	१०४	१०७	<b>य</b>		
<b>न</b>			पौलस्त्य	१०३	५३	प्रजापति	१०३	३८
नवुल	१०३	६७				प्रम	१०३	६८
नत्व	१०५	१५१, १५२	प्रधान	१०३	५६	गुदधशोष्ट	१०९	११७
नाग	१०३	४९	प्रगा	१०४	११३	यूथप	१०५	११९
नापित	१०४	१०१	प्रभाकर	१०३	६६	यूथपूथ्यम्	१०५	११९
नास्तिक	१०५	१३२	प्रासाद	१०३	४६	<b>र</b>		
निकष	१०८	८४	प्लव	१०३	४५	रहस्	१०४	१०३
नितम्ब	१०३	७२				रजम्	१०३	७२
निरुपद्रवा	१०५	१२८	फ			रत	१०४	८३
निरुपस्करा	१०५	१२७	फेनवाहिनी	१०३	९४	रत्न	१०४	१०९
निविड	१०४	८९				रदन	१०४	९२
नूसिंह	१०५	१२०	ब्र	१०४	९९	रमा	१०३	७४
न्यग्रोधपरिमण्डला	१०५	१४३	बीमत्व	१०२	९	राजन्	१०२	७
<b>प</b>						राजीवलोकन	१०५	११४
पङ्कज	१०४	८१	भ			राजीवलोकना	१०५	१४३
			भगवन्	१०५	१२९	राम	१०२	३२, ३३
			भासिनी	१०५	१४२			

## धनञ्जय-नाममाला

रावण	१०५	१४१	विभावमु	{ १०२	८	गुरुका	१०४	९६
रीहिण्ये	१०२	३१	विम्बौष्ठी	{ १०३	४१	शेमुपी	१०४	९३
ल			विरोचन	१०५	१३७	शेष	१०२	३२
लद्धम	१०३	६९,७०	विलास	१०२	१०	शैलूष	१०४	१००
लद्धमण	१०३	६९	विशाल	१०४	८७	ष		
ललना	१०५	१३७	विष	१०२	२४	पद्मवद	१०५	१३३
ललाम	१०४	८१	बृकोदर	१०५	११६	म		
ललिता	१०५	१३९	बृजिन	१०४	१०९	सवर	१०२	२७, २८
लवली	१०४	८१	बृप	१०२	३०	मत्र	१०४	१०३
लावण्य	१०४	१०१	बृपा	१०२	३१	सन्त्वर	१०४	८३
लुलाय	१०४	१०६	बैहत्	१०४	१०७	मदन	१०२	२६
लखा	१०३	६१	बैकर्तन	१०५	११५	सद्म	१०२	२७
व			ब्यक्तिवादिन्	१०५	१२०	सप्तर्षि	१०२	१७
वक्रवक्र	१०४	८२	ब्यञ्जन	१०४	११२	सप्ताश्व	१०५	१४८
वनध्या	१०४	१०७	व्याधि	१०४	१०२	समावि	१०५	१२४
वरर्णणी	१०५	१३८	श			समाधिष्य	१०५	१२१
वरगह	१०२	३३, ३८	शङ्क	१०२	१४	सम्राट्	१०४	१०९
वस्थ	१०३	४७	शङ्कुष्ठी	१०५	१४५	सान्द्र	१०३	४२
वर्षभू	१०४	८१	शम्भु	१०२	१३	सारग	१०३	७३
वलाहक	१०३	५७	शराव	१०५	१३१	मारम	१०२	७
वल्लरी	१०४	११३	शरीरज	१०२	३५	सित	१०३	६६
वमा	१०४	१०७	शर्वीरी	१०३	४२	सुमना	१०४	११३
वमु	{ १०२	१८	शत्र	१०२	२३	स्थविष्ट	१०६	९९
	{ १०३	७३	शिखरिन्	१०३	५१	स्यन्दन	१०२	२१
वाजी	१०४	७९	शिखिन्	१०२	५	स्वर्	१०३	४३
वाम	१०३	३९	शिव	१०२	२०	ह		
वालेय	१०३	५०	शिवा	१०४	९०	हम	१०२	६
वासर	१०३	४१	शिलीमुख	१०३	६०	हरि	१०६	८०
विद्वान्	१०३	६३	शीत	१०६	१५३	हिमाराति	१०२	८
विपञ्ची	१०४	११२	शुक्रा	१०४	८१	हिल	१०४	१०८
विपिन	१०६	१५२	शुचिकृत	१०३	५९	हस्त	१०४	११०

## उद्धृतवाक्यानामकारादिसूची

अङ्गनाच्च तदेक्षणा	५७	जमो अरहंताण	१	भर्ता सगर एव मृत्यु वसनि	१५
अतिप्रलापभावेन	६१	ततु हैयङ्गीन यद	६१	मान्यत्वादाल्पविद्याना	२
अनशनावमौदर्यवृत्ति-	२	तत्सदेहे गते ताभ्या	५८	मुदत्ति मिश्रीभवन्ति	१२
अमूर्ययागग्य निशास्य या	३३	दुर्जण सुहित्यउ होउ	२२	य पापपाशनाशाय	२
आत्मनि मोक्षे ज्ञाने	५२,५८	दुर्जनाना विनोदाय	६३	य उत्पन्न पुनाति वश	१९
आपो नारा इति प्रोक्ताः	३७	दिवैव्येमिन् पुराण-	२५	यत्सर्वात्महित न वर्णसहित	५९
आयुः पीयूषकुण्डे स्मृति-	६२	न कु पृथिवी पिपनि	१२	रेषणात् क्लेशराशीनाम्	२
आहुनेऽत्यमत्रे सृत-	२४	नक्षत्रमृक्ष भ तारा	२५	लक्ष्मीकौस्तुभपारिजातकमुगाद१	
उड्डीय वज्ज्ञित यान्ति	१४	नक्षत्रे वाक्षिमध्ये च	२५	वर वित्त पाणि	२२
एको रथो गजस्त्रको	४५	नभन्तु नभसा सार्व	१	वर्णांगमो गवेन्द्रादी	
ऐश्वर्यस्य समग्रम्य	६५	नवमे प्राणमन्देहो	५४	२३,२९,४६ ५९,६५	
कपिर्वराहः श्रेष्ठश्च	३४	नामाकण्ठमुरस्तालु	१०	वाज वाजस्तु पक्षेऽपि	२७
काश्यमित्युच्यते तेजः	५७	निषद्वरस्तु जम्बाल-	५३	वाहो युग्म घनो वाहो	२७
कियती पञ्चसाहस्री	९६	निषादर्वभगान्धार	५३	वृषाकपिवासुदेवे	३४
कुमारकाले आमलकी-	५५	पञ्चमे दह्यते गात्रम्	५४	श्यामा गत्रिस्तु विद्य्यामा	२५
कोकिलाना स्वरो रूप	५५	पञ्चाचारारतो नित्य	५५	वड्ज मयूर ब्रुवते	५३
कवचित्प्रवृत्ति कवचित्प्रवृत्ति	६०	पट्टन शक्टैर्गम्य	४९	मत्य दूरे विहरनि समं	१४
गिरिरकन्द्रदुग्धेषु	३२	पतिप्रिपतिग-	२९	सन्धियोनी मुरहाया	९६
गोमवे सुरभि हन्यात्	५६	पञ्चद्वैस्त्रिगुणी सर्वे	४४	सर्वपस्य प्रयत्नेन	९६
गी स्वरं सप्रद्वृष्टान्या	५८	पुण्डरीक सिताम्बुजम्	१०	स व्याख्यानि न शास्त्रम्	३
गोर्गीः कामदुषा	५२	पुष्पसाधारणे काले	५३	स्वस्थे नरे सुखासीने	९६
चतुष्पटिकलाभिज्ञा	१८	प्रथमे जायते चिन्ता	५४	स्वानुभूत्ये भवेद्	१
चत्वार पुरुषाजा	५८	प्रगस्या न नमस्यापि	२२	हावो मुखविकार स्यात्	१७
जातमात्रोऽय भगवान्	३१	प्रायस्तित्तिवनयवैवृत्य	२	हिसानृन्तर्यो-	२
				हिंणगभेष्वत्	३७

## भाष्यगता ग्रन्था ग्रन्थकाराश्च

अनेकार्थविनिमयजरी-		द्विसन्धानभाष्यम्	३३	विद्यानन्दी	१
{ २५	२१	द्विमन्वानभाष्यम्	६१	शब्दभेदः	१
{ २७	१३	नाममाला	७२	शाश्वतः	२५
अमग्नोषः	८७	पद्मनन्दिशास्त्रम्	१	श्रीभीज	२५
	{ १०	पूज्यपाद	१	समन्तभद्र	१
अमरसिंहः	{ १२	बहुत्रतिक्रमणभाष्यम् ५८	१५	सूक्तिमुक्तावली	२२
	{ ४३	भरतनाटकम्	५३	सोमनीतिः { ४८ १९, २४, २७	
	५३	भारतम्	४४	{ १९	२४
अमरसिंहनाममाला	२९	महापुराणम् { ५७ २२, २३	५८	हलायुधः { १०	२६
अमरसिंहभाष्यम्	१९	५८	३, ९	{ १२	२४
आशाधरमहभिषेदः	६२	यश कीर्ति	२२	हलायुधभाष्यम्-	
इन्द्रनन्दिनी तिशास्त्रम्	५५	{ २ १६, १९	२		२९ ५
कल्याणकीर्ति	१	१४	२१	हैमः	१४ १०
क्षीरस्वामी	६२	{ २४	२५	हैमनाममाला	२७ १९
डाल्लिकः	२९	{ ६३	१५	हैमी	१६ १७, २५, २७
	६	यशस्तिलकचम्पूकाव्यम् १८	८	हैमीनाममाला	३४ १२

## सङ्केतविवरण

अ० चि० अभिधानचिन्तामणि	का० सू० कातन्त्रसूत्र	यश० ति० आ० क० यशस्तिलक
अनेका० म० अनेकार्थसङ्ग्रह	क्षी० भा० क्षीरस्वाभिभाष्य	आश्वास कल्प
अम० को० अमरकोश	क्षी० स्वा० क्षीरस्वामी	वि० को० का० विश्वलोचनकोश
अम० को० धी० भा० अमर-	जन० सम० जनपदममुद्देश	कान्तवर्ग
कोश क्षीरस्वामी भाष्य	जे० सू० जैनेन्द्रसूत्र	वि० लो० विश्वलोचन कोश
अमर० अमरकोश	त० सू० तत्त्वार्थसूत्र	श० च० शब्दार्थवचन्द्रिका
अ० स० अनेकार्थसंग्रह	नीतिसार० नीतिसार	श० च० सू० शब्दार्थवचन्द्रिका
उ० सू० उणादि सूत्र	नी० वा० सम० सू० नीति वाक्या	सूत्र
कल्प० को० कल्पद्रुकोश	यामृत समुद्देशसूक्ति	या० कारिका शाकटायन कारिका
का० उ० कातन्त्र उणादि	प०प० पद्मनन्दिपञ्चविशतिका	शा० सू० शाकटायन सूत्र
का० ह० उ० कातन्त्र रूपमाला	पा० उ० पाणिनि उणादि	सुर० क० सगस्वनीकण्ठाभरण
उत्तरार्थ	पा० गणस० पाणिनि गणसूत्र	सार० समा० सू० साग्मवन
का० च० पू० कातन्त्र रूपमाला	पात० भाष्य पातन्त्रजलमहाभाष्य	समास सूत्र
पूर्वार्थ	पा० सू० पाणिनिसूत्र	हे० च० हेमचन्द्र
का० च० पू० सू० कातन्त्रस्प-	भो० उ० भोजउणादि	हे० य० हेमशब्दान् शामन
माला पूर्वार्थसूत्र	मे० को० वा० व० मेदिनीकोश	
	वान्नवर्ग	

## शुद्धिपत्रम्

पृष्ठ प० अशुद्धयः शुद्धयः पृष्ठ प० अशुद्धयः शुद्धयः
७ १८ सर गर ६५ ९ विषाय विषक्षयः
५३ २ स्तमित स्तमित ६९ २ निकुरो निकरो
५८ २१ मुक्तोषा- मुक्तोषा- ७१ २१ श्वेतो श्वेतो